विवर्त

[मौलिक उपन्यास]

१

●●●

राय रामचरण किसी पूरबके जिलेसे आकर दिल्लीमें बसे. यही वकालत शुरू की, बढे, फैले, 'सर' हुए और जज बने. लेकिन जजीको एक वर्ष हुआ नहीं कि इस्तीफा दे दिया. इसमे कारण बनी एक-पर-एक हुई पत्नीकी और पुत्रकी मृत्यु. तब जग उनके लिए फीका हो गया. सान्त्वना बस यह कि पुत्रकी मृत्यु विलायतमे हुई और उस कारण कुटुम्बमे किसी विधवाकी वृद्धि नही हुई. पुत्रने विवाह विलायतमे ही किया था, और इस मृत्युसे काफी पहले पुत्रवधूने अपनी अन्यत्र व्यवस्था कर ली थी. अब पत्नी और पुत्र दोनोंके स्थानमें उनके पास कन्या भुवनमोहिनी रह गई. अबतक जिन्दगीमे बढते चले आए थे, अब ठोकर पाई और चित्त उलट गया. आसक्ति थी वहा विरक्ति जान पडने लगी. भावीकी कल्पनाए थोथी हो आई और बिसरा अतीत वास्तव रह गया. प्राप्तव्य आकाक्षाके बजाय मानो खोए स्नेहकी तरफ वह बढ़ना चाहने लगे

मनकी इसी अवस्थामें भुवनमोहिनी पली और पढी उसने बी० ए० किया, लॉ और एम. ए. भी कर लिया और आयुके बाईसवें वर्षमे आ गई, पर उसने न विवाहमें रुचि दिखलाई, न प्रेममें, न प्रैक्टिसमे. पिताको यह समझमें नही आया.

उन्होने मोहिनीको पास बुलाकर कहा—"भुवन, सुन; क्या तू मुझे

छुट्टी नहीं मिलने देगी ?"

मोहिनी बोली—"आप मुझे धक्का देकर अलग करना चाहते हो, पापा, तो वैसा कहिए. पर अपनी जिन मां की तस्वीरें आपके सब कमरोंमें लगी देखती हूं वह तो आपकी देखभाल करने अब आएंगी नहीं. एक मुझे पीछे छोड़ गई हैं, वही मैं आपको छोड़कर चली जाऊं तो–"

पिताने कहा—"सुन, भुवन, एकाएक बहुत अकलमन्द मत बन. भाग्यको मानती है या नहीं ? मेरे भाग्यको अपने माथे लेनेवाली भला तू कौन होती है ? ऐसे और तो कुछ होता नहीं, मुझे पाप चढ़ता है. जिंदगी भगवानके यहांसे मिलती है, उसे उसी राह पूरा न करना और कहीं अटका देना गलत है. तू चाहती है कि मुझे अपना जिम्मा मान ले और इस तरह अपने दिन निकाल दे ? मुझे यह सहा नहीं जाएगा."

भुवनने कहा–"बस, बस, बाबूजी ! आगे मत कहिएगा, आपको मांकी कसम."

पिताने कहा—"अरे, वह तेरी मां कहां है जो उसकी कसमसे डराती है ! होती तो क्या तू यहां होती अब तक ? बाल-बच्चोंके साथ अपने घरमें न होती !"

भुवनमोहिनीने बढ़कर अपने हाथसे बापके मुंहको बन्द कर दिया और उनके कन्धों झूल गई.

इस तरह मानो अपने आपमें पूरे, उन पिता-पुत्रीके दिन जा रहे थे.

*　　*　　*　　*

पर उठती वयके दिन व्यर्थ नहीं जाया करते. राय साहब अपने स्टडीरूममें थे कि मोहिनीने आकर कहा "मैं जा रही हूं बाबूजी !"

पिताने ऊपर तक न देखा, कहा—"अच्छा !"

मोहिनी बोली–"क्या अच्छा ? आपने तो पूछा भी नहीं, कहां ?"

"तो पूछता हूं, बताओ कहां जा रही हो ?"

मोहिनीने कहा "जितेनका अभी फोन आया था. वह साफ

जानना चाहते हैं और सिनेमाके लिए पूछते हैं. जाऊं ?"

"जाओ," पिताने कहा और फिर वह हंसकर बोले, "मगर देखना लड़ना नहीं."

मोहिनीने कहा "मैं तो लड़ूंगी. मुझे तुम टाल नहीं सकते."

"चुप लड़की," पिता बोले, "मेरी उमर नहीं देखती ? किसी घड़ी भगवानका बुलावा आ सकता है. तेरी तरफसे संतोष हो तो मैं कृतार्थ भावसे उस यात्रापर जाऊं. बोल !"

पिताने चुप बनी भुवनमोहिनीको देखा और प्यारसे कहा "साफ यह, उसे इन्कार करेगी ?"

इसपर मोहिनीने एक पत्र पिताकी ओर बढ़ाया; कहा "यह मुझे कल मिला था"

पिताने कागज खोलकर पढ़ा, दूसरी बार पढ़ा, फिर मोड़कर जेब में रखते हुए पूछा -"तुमने क्या सोचा है ?"

भुवनने कहा "मुझे इसमें क्या सोचना है, बाबूजी !"

"देख भुवन," पिता बोले—"सबको अपनी-अपनी राह जाना है. तेरी मांको ही मैं धरतीपर कब रोक सका ! जाना था वह गई. यहां चाहनेसे ही कुछ नहीं होता फिर तू अपनी जिन्दगीको मेरे साथ क्यों समझती है ? मेरे बारेमें सोच करती है, पगली कहीं की !"

मोहिनीने इनकी यह बात कानपर न ली आगे बढ़कर बटन दबाया और नौकरके आनेपर शामके खाने आदिके बारेमें हिदायतें दीं, गाड़ी तय्यार करनेको कहा, फिर बोली "बाबूजी, आप कहते थे वह बड़ी गाड़ी मेरे लिए है. हम—दोनोंके लिए !"

पिताने इस असंगत बातपर अचरजसे उसे देखा. लेकिन झट-पट सचाकर मोहिनीने कहा "आपने ही तो कहा था कि कैडलेक लबे सफरके लिए ठीक रहती है."

पिताने पूछा "लम्बा सफर ! क्या बक रही है ?"

मोहिनी मुस्कराकर बोली "घर छोड़कर जा रही हूं. और क्या,

किसी तरह तो तुम खुश होओ."

पिता गम्भीर होकर बोले "जब कोई तुझे मेरे यहांसे लेने आएगा, वह बड़े भाग्यका दिन क्या ऐसी आसानीसे मुझे मिलने वाला है ! बता किस पिक्चरमें जा रही है?"

"पिक्चर नहीं जा रही हूं."

"फिर कहां जा रही है ?"

जैसे मोहिनीसे सहसा बोला नहीं गया, ठहरकर कहा "अभी कुछ ठीक नहीं है."

पिता चकित हो आए, बोले—"क्या बात है, कहती क्यों नहीं ?"

बोली—"अभी आ जाऊंगी. और नहीं आई.. नहीं आई तो..." आगे उससे कहा नहीं गया. वह पिताके मुंहकी तरफ ताकती रह गई अन्तमें जोर लगाकर बोली "तो समझ लीजिएगा, मोहिनी हुई ही न थी."

पिता इस अनबूझ लड़कीको देखते रह गए. पर वह उन्हें सुनने लिए ठहरी नहीं, मुड़कर बाहर निकलती चली गई.

२

आइए, एक तमाशा दिखाएं. वहां तुक न मिले, कविता मिल जाएगी. एक वयमें वेग होता है, व्यवस्था नहीं होती. वेग ही अपनी टक्करसे वहां रोध पैदा कर लेता है. संयम उसे नहीं कहेंगे, कुण्ठा कहेंगे. शान्ति उससे नहीं मिलती, विकलता और विफलता हाथ आती है.

वह कैडलेक गाड़ी जितेनके दफ्तरके आगे ठहरी. वहां मोहिनीने जल्दी-

जल्दी हार्नकी आवाजें दीं और देखी चली गई.

जितेन साधारण माता-पिताका पुत्र है. पर इस वयमें भी यशस्वी बन सका है. एक अंग्रेजी-पत्रके सम्पादकीय विभागमें काम करता है. हार्नकी पहली आवाजपर वह नहीं उठा, दूसरीपर नहीं उठा, तीसरी पर भी नही उठा, यद्यपि उसे प्रतीक्षा थी. अन्तमें उतरकर नीचे सड़क पर आया तो देखा, मोहिनी ही ड्राइवरकी जगह बैठी है. यह पहला अवसर था जब मोहिनी और यह गाड़ी...आगे बढ़ते हुए प्रसन्नतासे हाथ उठाकर उसने अभिवादन किया. देखा गाड़ीकी अगली सीटका दरवाजा उसके लिए खुला है, लेकिन मोहिनीका मुंह उसकी ओर नहीं है. वह आकर मोहिनीके बराबर बैठ गया और तनिक झटकेसे दरवाजा बन्द किया. मोहिनी अब भी बोली नही और जितेनके अन्दर होकर दर-वाजा बन्द करते-न-करते उसने गाड़ी स्टार्ट कर दी

आजकी मोहिनी जितेनको भिन्न जान पड़ी. जैसे अलग और सन्नद्ध. चलती गाड़ीमें उसने पूछा—"यह कहां चल रही हो ?"

"सिनेमा."

"पर सिनेमा तो वह रह गया !"

"असल सिनेमा !"

जितेन समझा नहीं, उसने मोहिनीके चेहरेको देखा. वह चेहरा सामने एकाग्र था उसपर कुछ पढ़ा नहीं जा सका. हैरानीसे कहा—

"मोहिनी, क्या बात है ?"

मोहिनीने उत्तरमें एक्सलरेटरपर दबाव बढ़ाया और गाड़ीने वेग पकड़ा. प्रश्नपर उसके ओठोंके किनारे पल भरके लिए जरा वक्र पड़े, फिर सब पूर्ववत् हो गया. वह कुछ बोली नहीं. जितेनने देखा, गाड़ी बढ़ी जा रही है. नई दिल्ली किनारे छूट गई है. उसने धीमेसे मोहिनी के कन्धेको छूआ, पूछा "क्यों क्या सोच रही हो ?"

उस कन्धेपर कुछ सिहरन नहीं हुई वह मुड़ी नहीं, बोली नहीं.

"सुनती हो ? क्या चाहती हो ?"

सामने सड़कपर निगाह किए वह बोली--"आप क्या चाहते हैं?"

'क्या चाहता हूं !' जितेनने हठात् संयमसे कहा, "क्यों, सिनेमामें अपनी सीट—"

"नहीं है."

"नहीं है ! क्यों ?"

"मैंने रिजर्व नहीं की."

"नहीं की ? तो यह—"

"यह क्या ?"

"मोहिनी !—"

"आप सिनेमा जाइएगा ?"

. . . .

". . .अच्छी बात है, पहुंच जाइएगा."

"क्या मतलब मोहिनी तुम्हारा कि पहुंच जाइएगा ?"

"तैश न लाइए, मुझे नहीं जाना है."

शब्द जैसे मोहिनी कह नहीं, फेंक रही थी. माथेके आगे और गर्दन पीछेसे उड़ती, लहराती, थिरकती उसकी लटें, और कन्धेपरसे रह-रहकर फरफराहटसे फहराती उसकी साड़ीकी पटें जैसे जितेनको चुनौती दे रही थीं. उसने कहा,—"मोहिनी, तुम्हें क्या हो रहा है ?"

मोहिनीने निगाह नहीं फेरी. ओठोंके कोनोंसे जरा हंसती-सी बोली—"प्रेम !"

"गाड़ी कहां लिए जा रही हो ?"

"वहीं—प्रेमनगर."

जितेनने कहा—"मोहिनी !" और उसके कन्धेपर हाथ रखा.

मोहिनी बोली—"छूओ नहीं, अलगसे बोलो, नहीं तो दोनों मरेंगे."

जितेनका हाथ हट आया. कहा—"गाड़ीकी चालसे लगता है, हमें मरना ही है."

सामनेकी तरफ देखती हुई मोहिनी बोली—"राजी हो ?"

"हो सकता हूं, पर क्या सच ?"

"क्यों नहीं सच ?"

"कितनी बार तुमसे कहा कि आओ चलें, चलकर..."

बीचमें काटकर मोहिनी बोली—"सड़क सीधी बम्बई जाती है, चलो चलूं ?"

मोहिनीके दोनों हाथ व्हीलपर थे. आंखोंपर काला चश्मा था. जितेन न उन आंखोंको देख सका, न बढ़कर कहनेवालीके दोनों हाथोंको ही पकड़ सका. उसने अनुभव किया कि गाड़ीकी रफ्तार खतरनाक होनेपर आ गई है. उसने कहा—"क्या सचमुच चल सकती हो, मोहिनी."

मोहिनीने सिर हिलाया, फिर एक कठिन हंसी हंसकर कहा—"काफी पैसा भी साथ लेती आई हूं !"

गाड़ीकी रफ्तार बढ़ती ही जाती थी. जितेन मोहिनीको समझनेमें असमर्थ हो रहा था. मोहिनीका चेहरा कठिन था और क्रूर और समय जितेनका पौरुष यह न सहता. पर खतरनाक चालसे भागती हुई गाड़ीके स्टीयरिंगपर बैठी मोहिनीके साथ कोई स्वतन्त्रता ली नहीं जा सकती थी. उसने कहा—"मोहिनी, हुमायूंका मकबरा आएगा; रुकोगी नहीं ?"

उत्तरमें मोहिनी नहीं बोली, न गाड़ी ही धीमी होती दिखाई दी.

जितेनने कहा "आओ, जरा बैठेंगे सुनती हो !....सुनती नहीं हो ?"

मोहिनीने सामने मानो दूर सड़कमें सीधे देखते हुए कहा—'क्या कहा ?"

"हमें लौटना है न ! और सिनेमा—"

मोहिनीने सुना, लेकिन वह चुप रही. उसका चेहरा जैसे अनबूझ और अन्धेरा हो आया

जितेनने जोरसे कहा—"सुनती हो, रोकोगी नहीं ?"

मोहिनीके ओठोंके किनारे व्यंगसे किंचित वक्र हुए. बोली—"रोकती हूं." कहकर अपने शरीरको उसने ढील दी, पांवका दबाव उठाया और गाड़ीकी स्पीड धीमे-धीमे हल्की की. बोली—"तुम ठीक हो, जितेन ! सिनेमा देखना है हमें, उससे ज्यादा नहीं. क्यों ?"

ब्रेकपर पांव देते हुए फिर कहा—"बोलो, गाड़ीसे चलूं मकबरे? मन तुम्हारा मकबरेमें है शायद." कहते कहते उसने मुंह जितेनकी तरफ किया. कहा—"बोलो. वहीं चलूं—या बम्बई ?"

जितेन जाने क्या जबर्दस्त जवाब देना चाहता था. पर मोहिनीका प्रश्न पूरा होते-होते वह भूल गया कि वह क्या कह रहा है और अंग्रेजी में बोला—"टेक मी टु हैल विद यू !" (मुझे अपने साथ नरकमें ले चलो !)

सुनकर मोहिनी खिलखिला आई, बोली—सिनेमा हैल (नरक)कब से हुआ, पहले तो हैविन (स्वर्ग) था. घबराओ नहीं, वहीं ले चलती हूं."

जितने आगे सह नहीं सका. मोहिनीके दोनों हाथ पहिए परसे छीन-कर उसने अपने एक हाथके कब्जेमें किए. दूसरेसे उसकी आंखों परसे काला चश्मा खींचकर हटाया और कहा—"तुमको होश है, मोहिनी?"

मोहिनीके चेहरेपर कोई भीति, कोई दुविधा नहीं दीखी. उलटे मुस्कराहट ही और खिल आई, बोली—"नहीं है."

"यह क्या खेल है ?"

"बेहोशीका खेल !"

जितनने मोहिनीकी हंसती आंखोंको बहुतेरा देखा. कुछ असमंजस, कुछ इन्कार वहां न था. सिर्फ एक व्यंगकी रेखा थी. उस मोहिनीको देखते रहकर जैसे शब्द उसके पाससे खो गए. आंखें, जिनमें रस था और विष; नीचे मुंह, जिसके होंठ हल्के लाल थे और बारीक और जरा थिरकतेसे खुले हुए; उसके नीचे गर्दन, जिसकी सफेदी पर नीलाईकी झलक खेलती थी; उसके नीचे वक्ष और उसपरका परिधान—प्रयत्न

न करनेपर भी वह सब देख रहा था और उसका कण्ठ सूखा था.

अपने हाथ छुड़ाते और ठठाकर हंसते हुए मोहिनी बोली—"छोड़ो-छोड़ो, देख तो रहे हो कि मैं हूं. सपना नही हूं कि उड जाऊगी. और हमको बातें करनी हैं, है न ? आओ, तुम्हारे मकबरे चलें."

जितेनने हाथ छोड़े नही, कहा—"ठीक कहती हो, मेरा मकबरा बनाना ही तुम्हें बाकी है."

हंसकर मोहिनी बोली—"अच्छा-अच्छा, नाराज न हो, आओ चलें."

गाडी पार करके दोनो साथ चलते हुए मकबरेके लॉनके एक कोने-में आ बैठे और जितेनने कहा—"लाओ, मेरी वह चिट्ठी दो."

मोहिनी बैठी मुस्कराती रही.

"लाओ !"

"है नही."

"क्यो, कहां है ?"

"पापाके पास है."

"वहा कैसे पहुची ?"

'मैंने दी थी"

"तुमने दी थी ?" गुस्सेमें भरकर जितेन बोला, "मुझे क्या मालूम था कि तुम अब तक बापके घोंसलेकी हो!"

"मुझे माफ करो, जितेन ! पर मैं सामने हूं, बताओ क्या कहते हो ?"

"क्या कहता हूं ! पूछो अपनेसे और तुम बताओ क्या कहती हो?"

"मैं तो कुछ नही कहती, लेकिन—"

जितेनने कहा—"तुम ठहरी अमीरजादी, मैं मेहनत करके खाता हूं. पाई-पाई पसीनेके बल मुझे कमानी होती है. फिर हमारे बीच यह क्या हो गया है ? सोच लो मोहिनी, कहीं तुमसे भूल [illegible] गई !"

मोहिनीने कहा - "स्त्रियां भी क्या सोच सकती हैं ?"

"लेकिन तुम्हें सोच लेना है. मैं—"

मोहिनीने कहा—"सोचना हम स्त्रियोंको नहीं मिलता. फिर तुम बार-बार यह—"

"नहीं, सोच देखना जरूरी है."

"अच्छी बात ! सोचनेको तुम कहते हो तो यह भूल ही निकलेगी."

जितेनने अधीर भावसे कहा—"क्या .. !"

मोहिनी तीखी पड़ आई. बोली—"खोलकर साफ क्यों नहीं कहते कि तुम मेहनतका खाते हो, हम हरामका खाते हैं.

जितेन व्यग्र हुआ, बोला—"यह नहीं, मोहिनी ! यह मेरा मतलब नहीं."

उसी धुनमें मोहिनीने कहा—"जानती हूं, तुम विवाह नहीं चाहते, प्रेम चाहते हो."

"मोहनी."

"—लेकिन तुम प्रेम भी नहीं चाहते. यह प्रेम है जो मुझमें मुझको नहीं देखता, अमीरजादीको देखता है ! यह प्रेम है जो तुम्हारी आंखोंको मेरे अलावा मोटर और बंगला देखनेके लिए खाली छोड़ देता है !"

जितेनने दोनों बांहोंपर मोहिनीको पकड़कर थामना चाहा कहा—"मोहिनी !"

लेकिन अपनेको हठात् छुड़ाते हुए आवेशमें अवश मोहिनीने कहा—"कितना मैंने चाहा कि धर्मकी गांठ देकर जन्म-जन्मान्तरके लिए जीवन की इस यात्रामें मैं तुम्हारी संगिनी हो जाऊं. पर तुम—तुम्हारा..." कहते-कहते उसका कंठ भर आया और जितेनने चाहा कि उसे अंकमें ले ले. पर वर्जन करती हुई भरे कंठसे मोहिनी बोली—"तुम्हारा संशय ! ओह, छोड़ो जितेन, जाने अब अपने किस भाग्यको लेकर मुझे जीना है ! सोचती थी कि तुम हो, नई दुनियांके तुम्हारे सपने हैं और

मैं उनसे साफ होऊंगी ! वहां फर्क होगा नहीं और—लेकिन काश कि तुम्हारे मनमें प्रेम हो सकता जो फर्क न रहने देता !"

दोनों हाथोंसे मोहिनीको अपनी ओर खींचते हुए कांपती वाणीमें जितेन बोला—"मोहिनी, मैं—"

"नहीं, रोको नहीं मुझे, जितेन. जाने मैं क्या कर बैठूं ? आई थी कि चली चलूंगी, सामने देखूंगी, पीछेकी ओर ध्यान न दूंगी. पर क्या करूं ? मोटर वगैरे तुम्हें चुभते हैं . कहीं तुम उन्हें ही तो नहीं चाहते, नहीं तो भूल क्यों नहीं पाते ! शायद उन्हींके लिए मुझे चाहते हो !" कहकर दोनों हाथोंमें उसने अपने मुंहको छिपाया और धीमे-धीमे सिसक उठी. जितेनने हाथोंमें थमे उस झुके सिरको आहिस्तासे उठानेकी कोशिश करते हुए कहा—'मोहिनी, यह क्या ? देखो, उठो ! सुनो तो, सुनो मोहिनी.

लेकिन मोहिनी चुप रही, अलग रही, और सिसकती रही

जितेन कुछ न समझ सका वह ठिठका रह गया. ये पल उससे उठाए न उठे जी होता था कि इकहरी कायाकी इस अपदार्थ नारीको अपनी मुट्ठीमें पकड़कर इस वायुके व्योममें ऐसे फेंक दे कि उसका नाम निशान कहीं न रह जाए. होता था कि फिर उसका ऊपर उठाकर उसके चरणोंमें ऐसा बिछ जाए कि स्वयं शून्य हो रहे. पर कुछ न हुआ. चकित, विमूढ़ उस अकारण और अतर्क्य भावसे सिसकती मोहिनीके सामने वह पत्थर बना बैठा रह गया

देखा गया कि उन क्षणोंमें मोहिनीको अपनी ओरसे स्वास्थ्य पानेमें उतनी कठिनाई नहीं हुई. उठते हुए उसने कहा—"माफ करना, हमें देर हो गई है."

कहकर वह उठी और सीधी चलती हुई अपनी गाड़ीपर आ गई. जितेन बैठा रह गया कुछ देर जैसे सत्ता ही न रही हुआ कि वह पत्थर होकर वहीं गड़ क्यों न जाए कि कुछ रहे ही नहीं ? कि उस मोटर वगैरेमें, अपनेमें, और सबमें वह आग ही क्यों न लग

मशालकी तरह जल उठे !

पर हार्नकी बराबर होती आवाजपर अन्तमें वह उठा, चला और गाड़ीमें उसी बराबरकी सीटपर जाकर बैठ गया.

गाड़ी लौटी. रास्ते भर कोई कुछ नहीं बोला. समयपर गाड़ी सिनेमा आ लगी. मोहिनीने तत्क्षण जितेनके घुटनोंके पार झुकते हुए बराबरका दरवाजा खोल दिया. जितेन कुछ भी कहनेको न पा सका, क्षणकी देर किए बिना चुपचाप वह उस खुले दरवाजेमें होकर उतर गया. गाड़ीसे अलग पैरके नीचे उसने धरती पाई. उसके बाद प्रतीक्षा नहीं की कि मोहिनीको भी आना है, एकदम झटकेसे दरवाजा बन्द कर दिया.

मोहिनीने भी कुछ नहीं कहा. जितेन सिनेमा-हॉलकी ओर बढ़ता हुआ आंखसे ओझल हो गया. तब गाड़ी लेकर वह सीधे अपने घर आ गई.

पिताके सामने कलाईपर बंधी घड़ीमें समय देखती हुई बोली—"माफ करना पापा, घण्टेसे जरा ऊपर हो गया !"

३

●●●

तीन रोज हो गए. न पिताने कुछ पूछा, न पुत्रीने कुछ कहा. मोहिनी सदा घरमें और कर्त्तव्यमें रहती, कम बोलती. पिता देखते लेकिन अपनी तरफसे बात न छेड़ते.

एक रोज मोहिनीने कहा—"बाबूजी, आप मेरा अब कहीं सम्बन्ध कर सकते हैं."

पिताने विस्मयसे कहा—"क्यों, क्या हुआ ?"

मोहिनीने कहा—"कुछ नहीं."

पिता हंसकर बोले—"देखो, मैं कहता था कि लड़ना मत. पर उपदेश कौन याद रखता है ! आखिर लड़ ही आई ! चलो, छोड़ो. तो कहूं मैं देखभाल ?"

"जैसी आपकी इच्छा."

पिता सन्तोषके भावमें हंसे, बोले—"मोहिनी पढ़ना-लिखना तो इतना किया, पर कुछ नहीं. भला पढ़ी-लिखी लड़की विवाहके मामलेमें पराधीन रहती है ! लेकिन देखता हूं तू—"

पिताके चेहरेपर बढ़ती हुई तृप्तिको देखकर मोहिनीको लाज हो आई और वह फिर उनके समक्ष न ठहरी.

पिताने जानना चाहा कि हुआ क्या. उन्होंने उस अखबारके दफ्तर को फोन करके एक बार जितेनसे मिलनेकी योजना बनाई. पर बताया गया कि जितेन अब यहां नहीं है. एकदम इस्तीफा देकर चला गया है. इसपर यद्यपि उन्हें एक गहरा सन्तोष हुआ, पर मोहिनीपर रोष भी आया. उसपर जब मालूम हुआ कि जितेन इस शहरको ही छोड़ गया है तो मोहिनीको बुलाकर पूछा—"क्यों री, जितेनके बारेमें तुझे कुछ मालूम है ?"

"नहीं."

"मैंने फोन किया था. मालूम हुआ है, नौकरी छोड़ दी है. शहर ही छोड़कर कहीं चला गया है."

मोहिनी सुनती हुई गुम खड़ी रही.

"ऐसा तूने उसे क्या कह दिया था ?"

मोहिनीने कहा—"हम लोग मुफ्तखोर हैं, बाबूजी !"

रायसाहब हंसे, बोले—"ठीक तो है. मुफ्तखोर नहीं तो क्या हैं. मैं किस आराममें नहीं रहता ! मगर कोई पूछे कि करता क्या कहूंगा ? एक ही जवाब है—मुफ्तखोरी !"

मोहिनीकी नाराजी दूर न हुई थी. कारण, वह अपनेसे थी. कुछ बोली नहीं.

रायसाहब ठठाकर हंसे और बोले—"तो तुम लोगोंके बीच कुछ शब्द आ गए. शब्द भी बड़ी मुसीबत होते हैं. ! भई, मुझे तो मुफ्त-खोर अच्छा लगता है. मेहनत करना तो ठीक है,पर मेहनत बेचना उतना ठीक नहीं लगता. जो बेचनेके लिए मेहनत करता हो, एक वही है जो मुफ्त नहीं खाता. मैं तो समझता हूं, मुफ्त करना और मुफ्त खाना चाहिए. जिन्दगी मुफ्त होनी चाहिए. जो मजूरी लेकर मेहनत करता है वह मजूरी देने वालेको आवश्यक बनाता है. ऐसे मालिक मजूर बनते हैं. मुझे तो मुफ्त काम, मुफ्त खुराक और मुफ्त जिन्दगी गलत नहीं मालूम होती. तुम जवान लोग इन लफ्जोंपर झगड़नेकी गलतफहमी जाने कैसे पैदा कर लेते हो ?"

मोहिनीने कहा—"हम अमीर हैं तो जो दूसरे गरीब हैं उनसे मेल हमारा नहीं हो सकता."

रायसाहबने कहा—"मुझे क्या हुआ है, मोहिनी ? मेल तो मुझसे मुझमें अभी नहीं हो रहा है ! मेल करनेसे होता है, नहीं करनेसे नहीं होता."

मोहिनी बोली—"अमीरी पाप है"

"अच्छा-अच्छा, पाप है. फिर ?"

"लेकिन क्यों पाप है ?"

"बाबा रे !" राहसाहब बोले, "पर पाप-पुण्यकी चर्चा तुझसे मुझे करनी होगी क्या ? क्यों, इसीने तुम्हें लड़ाया है ?"

मोहिनीने कहा—"जाने दीजिए और उस बातको अब कभी जबान पर मत लाइए. हम जो हैं, हैं. हरएकको खुद होनेकी स्वतन्त्रता है, मैंने जाकर किसीसे पूछा कि तुम अमीर क्यों नहीं हो ? ऐसे ही कोई हमसे भी नहीं पूछ सकता कि हम क्यों अमीर हैं. जाकर पूछो भग-वानसे, जाकर पूछो कानून से. अपनी-अपनी पसन्द है. जिसे नहीं

पसन्द है गरीबी वह अमीर बनना चाहनेको स्वतन्त्र है, जिसे अमीरी नहीं चाहिए वह आजाद है कि अमीर न बने. उसमें कहने-सुननेकी क्या, बात है ?"

पिताको पुत्रीका रोष समझ नहीं आया, या शायद कुछ समझ आया भी. उन्होंने उस बातको टाला और और हटात मनमें चल उठने वाली मन्त्रणाओंको व्यक्त किया. यानी यह कि एक मित्र हैं जिनका लड़का विलायतमें बैरिस्ट्री करके लौटा है. पहले जिक्र इसलिए नहीं आया कि जाने मोहिनी क्या कह दे, और लड़का भी विलायत था दो सालसे. लेकिन मित्र पुराने हैं और आग्रह भी पुराना है. मोहिनी को आपत्ति न हो तो बात उठाई जा सकती है. उठाना क्या, सब पक्का ही है. क्यों ?"

मोहिनीने कह दिया कि उसे कोई आपत्ति नहीं है.

जब पिताने कहा कि एकबार तुम लोग मिल-जुल तो लो, देखभाल तो लो, तो मोहिनीने कह दिया कि उसकी ओरसे इसकी आवश्यकता नहीं.

पिताने कहा—"भई, वह तो एक बार तुम्हें देख ले."

मोहिनीने कहा—"एक बार क्यों, दस बार देखें. मुझे क्या है ? और जैसे चाहे देखें."

पिताने झिड़की देकर कहा—"यह तू किस तरह बात कर रही है !"

मोहिनीने कहा—"किसी तरह नहीं बाबूजी ! यही कहना चाहती थी कि मैं आपके हाथमें हूं और जैसा कहेंगे हर तरह तय्यार हूं."

सार-संक्षेप यह है कि मित्रके पुत्र बैरिस्टर नरेशचन्द्र वहां आए. परिवारकी दो महिलाएं वहां आईं. दो रोज रहे और प्रसन्न लौटे. फिर दोनो ओरसे तय्यारियां हुईं और जल्दी ही विवाह हो गया.

४

•••

विवाहको चार वर्षसे ऊपर हो गए. एक रोज जब कि अभी अंधेरा था और दिन नहीं निकला था, दरबानने कमरेके दरवाजेको धीमेसे थप-थपाया. उस समय मोहिनी अलग एक ओर होकर टेबिल लैम्प खोले पुस्तक पढ़ रही थी. पति ऊंघमें थे. आहटपर मोहिनीने पूछा—"क्या है ?"

"एक साहब आए हैं, बीबीजी !"

"कौन हैं ?"

"सामानके साथ हैं, किस कमरेमें इन्तजाम किया जाय ?"

बातकी भनक पाकर नरेशने कहा—"क्या है ? जाओ, नींद खराब न करो." फिर उसने इस ओर करवट ली, मोहिनीके हाथसे पुस्तक दूर की और चाहा कि मोहिनी उठनेकी जल्दी न करे.

मोहिनीने कहा—"ऊंह ! छोड़ो, मुझे उठना है."

उस सवेरे उठनेके काममें नरेशकी सहानुभूति न थी. बोला—"किसके लिए इतनी आतुर हो ?"

मोहिनी बोली—"उठते तो हो नहीं कि जाकर देखो, कौन है ! क्या मुझे जाना पड़ेगा ?"

"ऊंह ! होंगे कोई, देखिए कि आपने आनेका क्या वक्त चुना है!"

"उठकर जरा देख आते. ठहरनेके लिए वह किनारेका कमरा ठीक रहेगा ?"

पत्नीके निर्देश-आदेश पतिको पसन्द नहीं आए. पलंग पर लेटे-लेटे बटन दबाकर घंटी बजाई और आदमीके आने पर लेटे-ही-लेटे कमरेके अन्दरसे कहा—"जो बाबू आए हैं, उनका किनारेवाले कमरेमें इन्त-

जाम कर दो. कोई तकलीफ न हो, समझे."

सुना होगा, समझा होगा और वह चला गया होगा. सो उठकर मोहिनीने दरवाजा खोला. वह शायद बाहर जाना चाहती थी. दरवाजा खुलनेपर दरबानको सामने खड़ा देखकर वह ठिठक आई.

नरेशने यह देखा, कड़कड़ाती आवाजमें कहा—"क्यों, गए नहीं तुम अभी ?"

सुनकर दरबान तो फौरन चला गया, लेकिन मोहिनी आगे नही बढ़ी. आकर हंसती हुई बोली—"सवेरे-ही-सवेरे बिगड़ते हो, उठो ना, देखो निकलता हुआ सवेरा बाहर कैसा अच्छा लग रहा है"

नरेशने संकेतसे कहा—दरवाजा बन्द करो.

दरवाजा तो बन्द नहीं किया, लेकिन बेंतकी कुर्सी खींचकर वह पलंगके पैताने आ बैठी और नरेशके पैरोंमें हल्की गुदगुदी देकर बोली—"लो, उठो !"

नरेशने आग्रहसे कहा—"सुनती हो दरवाजा बन्द कर दो और इधर आओ."

"बैठी तो हू," मोहिनी बोली, "तुम्हारे विलायतमें ब्राह्म मुहूर्त शायद होता नही. आओ देखो, बाहर कैसा सुहावना है"

"क्या करती हो जी ?" एकाएक पैर खींचकर नरेश बोला—"गुद-गुदी होती है !"

हंसकर मोहिनीने कहा—"चलो, कुछ होता तो है. उठो, जरा देख आओ, कौन हैं. कैसे अच्छे हो !"

सुनकर नरेशने चादरको और भी मुहपर ले लिया और करवट कर वह दूसरी तरफ हो गया.

"कहो तो मैं देख आऊं ?"

"मर्जी तुम्हारी !"

उत्तरके स्वरपर मोहिनीको ठेस लगी. उसका मन बुझा. मानो विरोधमें वह उठी, जाकर दरवाजा अन्दरसे बन्द किया

४

• • •

विवाहको चार वर्षसे ऊपर हो गए. एक रोज जब कि अभी अंधेरा था और दिन नहीं निकला था, दरबानने कमरेके दरवाजेको धीमेसे थप-थपाया. उस समय मोहिनी अलग एक ओर होकर टेबिल लैम्प खोले पुस्तक पढ़ रही थी. पति ऊंघमें थे. आहटपर मोहिनीने पूछा—"क्या है ?"

"एक साहब आए हैं, बीबीजी !"

"कौन हैं ?"

"सामानके साथ हैं, किस कमरेमें इन्तजाम किया जाय ?"

बातकी भनक पाकर नरेशने कहा—"क्या है ? जाओ, नींद खराब न करो." फिर उसने इस ओर करवट ली, मोहिनीके हाथसे पुस्तक दूर की और चाहा कि मोहिनी उठनेकी जल्दी न करे.

मोहिनीने कहा—"ऊंह ! छोड़ो, मुझे उठना है."

उस सवेरे उठनेके काममें नरेशकी सहानुभूति न थी. बोला—"किसके लिए इतनी आतुर हो ?"

मोहिनी बोली—"उठते तो हो नहीं कि जाकर देखो, कौन है ! क्या मुझे जाना पड़ेगा ?"

"ऊंह ! होंगे कोई, देखिए कि आपने आनेका क्या वक्त चुना है!"

"उठकर जरा देख आते. ठहरनेके लिए वह किनारेका कमरा ठीक रहेगा ?"

पत्नीके निर्देश-आदेश पतिको पसन्द नहीं आए. पलंग पर लेटे-लेटे बटन दबाकर घंटी बजाई और आदमीके आने पर लेटे-ही-लेटे कमरे के अन्दरसे कहा—"जो बाबू आए हैं, उनका किनारेवाले कमरेमें इन्त-

जाम कर दो. कोई तकलीफ न हो, समझे."

सुना होगा, समझा होगा और वह चला गया होगा. सो उठकर मोहिनीने दरवाजा खोला. वह शायद बाहर जाना चाहती थी. दरवाजा खुलनेपर दरबानको सामने खडा देखकर वह ठिठक आई.

नरेशने यह देखा, कड़कड़ाती आवाजमें कहा—"क्यों, गए नही तुम अभी ?"

सुनकर दरबान तो फौरन चला गया, लेकिन मोहिनी आगे नही बढी. आकर हंसती हुई बोली—"सवेरे-ही-सवेरे बिगडते हो, उठो ना, देखो निकलता हुआ सवेरा बाहर कैसा अच्छा लग रहा है."

नरेशने संकेतसे कहा—दरवाजा बन्द करो.

दरवाजा तो बन्द नही किया, लेकिन बेंतकी कुर्सी खींचकर वह पलंगके पैंताने आ बैठी और नरेशके पैरोमें हल्की गुदगुदी देकर बोली—"लो, उठो !"

नरेशने आग्रहसे कहा—"सुनती हो दरवाजा बन्द कर दो और इधर आओ."

"बैठी तो हूं," मोहिनी बोली, "तुम्हारे विलायतमें ब्राह्ममुहूर्त शायद होता नही. आओ देखो, बाहर कैसा सुहावना है."

"क्या करती हो जी ?" एकाएक पैर खींचकर नरेश बोला—"गुद-गुदी होती है,!"

हंसकर मोहिनीने कहा—"चलो, कुछ होता तो है. उठो, जरा देख आओ, कौन है. कैसे अच्छे हो !"

सुनकर नरेशने चादरको और भी मुहपर ले लिया और करवट फेर वह दूसरी तरफ हो गया.

"कहो तो मैं देख आऊं ?"

"मर्जी तुम्हारी !"

उत्तरके स्वरपर मोहिनीको ठेस लगी. उसका मन बुझा. मानो विरोधमें वह उठी, जाकर दरवाजा अन्दरसे बन्द किया और चुपचाप

बराबरमें पंलगपर आ लेटी.

*　　*　　*　　*

किनारे वाले कमरेमें अतिथिके लिए इन्तजाम कर दिया गया है. बिस्तर पंलगपर बिछ गया है. मेजपर दरबान आजके अखबार रख गया है. लेकिन अतिथि आकर कुर्सीपर जैसा बैठा वैसा ही बैठा हुआ है. चेस्टर नहीं उतारा, बूट भी नहीं खोला, लगातार सिगरेट पीता जा रहा है.

"चाय लाऊँ, साहब ?"

यह सुना तो जागा, बोला—"चाय ?"

वेयराने कहा—"साहब नाश्तेके बाद इधर आयेंगे. अभी गुसलमें हैं. आपसे माफी मांगनेको बोला है."

अतिथिने उठकर चेस्टर उतारा और वेयरेकी ओर बढ़ते हुए कहा—"पांच मिनट ठहरो."

कोट देकर बूटके तस्मे खोलते हुए उसने वेयरेसे कहा—"देखो उस वास्केटमें स्लीपर हैं."

वेयराने स्लीपर निकालकर अतिथिके पांवके नीचे ला रखे. बूट अलग रख दिए और पूछा—"ब्रेकफास्ट ?"

अतिथिने टालते हुए कहा—"जो हो—"

"टोस्ट ?"

"ठीक. अब तुम जा सकते हो."

वेयरेके जानेपर अतिथिने अपनी ओरसे दरवाजेकी चटखनी बन्द की. आकर अखबार खोला. पहला सफा, फिर दूसरा, फिर तीसरा. आधे मिनटमें सारा अखबार पढ़कर उसने मेजपर पटक दिया. पर फेंकते ही वह रुका, जैसे आंखें कहीं अटकीं. अखबार पास लेकर उसने गौरसे पढ़ा. सिगरेट सुलगाई. देर तक अखबारको वह दृष्टिके सामने लिए रहा. अन्तमें उसे एक ओर सरका दिया और जोर-जोरसे सिगरेटके कश खींचता हुआ वह कमरेमें टहलने लगा. छोर आ जानेपर उसने सिगरेटको ट्रेमें फेंका और आलमारीके शीशेके सामने जाकर अपनेको

पूरी तरह देखने लगा. अब उसने दरवाजा खोल दिया और शेविंग-बक्स वगैरह लेकर वह बाथ-रूममें चला गया. बेयरा नाश्ता लाया तब अभ्यागत कमरेमें नहीं था. पसोपेशमें वह कुछ देर खड़ा रहा. साहब अन्दरसे आए तो देखकर पीछे हटा. एक रोब उसपर छा गया. अतिथि ने मुस्कराते हुए पूछा—"साहब और मेमसाहबका ब्रेकफास्ट उधर होगा?"

"इधरके लिए बोलेगा क्या ?"

"नहीं-नहीं."

"जी आपका—"

"कार्ड ?... लो"

कोटकी नोटबुकसे अपने नामका कार्ड निकालते हुए कहा—"बोलना शामको हमें चले जाना है."

कार्ड प्लेट पर लिया, आदाब बजाया और बेयरा वहांसे चला गया.

अतिथिने अपने लिए चाय तैयार की, सिगरेट सुलगाई और नाश्तेके साथ धीमे-धीमे सिप करके चाय पीना शुरू किया.

उसे सर्दी-सी मालूम हुई. निकालकर उसने शाल लपेट लिया, दूसरी सिगरेट सुलगाई. इच्छा हुई कि बिस्तरपर जा लेटे. पर 'इलस्ट्रेटेड वीकली' को सामने लेकर वह आराम कुर्सीपर जा लेटा.

कुछ देर बाद नरेशचन्द्र कमरेमें आए तो अतिथि आंख झंपाए-जैसे ऊंघमें पड़ा था. बिलकुल पास तक आ गए तब उसे भान हुआ. फुर्तीसे कुर्सीसे उठकर अभिवादनके लिए हाथ बढ़ाया. नरेशने हाथ दबाते हुए कहा—"मैं नरेश हूं, मिलकर प्रसन्न हू"

अतिथिने कहा—"माफ कीजिएगा, इस तरफ कब आना होता है. अब तो दूर दक्षिणमें रहता हू इधरसे गुजर रहा था, सोचा, मिलता न चलूंगा तो अपराध होगा. सम्बे तीन वर्षों तक आपकी मिसेजका सहपाठी रहा हूं. अब तो वह मुझे शायद पहचान भी न सकें. वर्ष भी कितने हो गए !"

नरेश कहते जाते थे—"जी हां ! जं

अतिथिने सिगरेट बढ़ाई. नरेश इसके लिए कम तैयार थे. आदत न्हें पाइपकी थी. सिगरेट हठात् हाथमें लेकर जल्दी-जल्दी उन्होंने पनी जेबें थपकीं. लेकिन तबतक दियासलाई, जली हुई, उनके आगे बढ़ा दी गई. सिगरेट सुलगानेपर अतिथिने नरेशको बिठाते और बैठते हुए कहा—"मैं समझता हूं कि हमारी सहपाठिनी सुखी और स्वस्थ हैं ?"

नरेशने पूछा—"क्या आप आज ही जा रहे हैं ?"

"जी काम तो कुछ ठहरनेका है नहीं, नहीं तो यहां आकर जल्दी जानेकी इच्छा नहीं होती."

"जी हां, जी हां ! आपकी कृपासे हम लोग खुश हैं...तो आपका मैसूरमें बिजिनेस है, आइ सी—"

"जी यों ही कुछ. क्या अभी आप जाइएगा ?"

"जी, जाकर देखूं—आपकी सहपाठिनी विशेष उत्सुक न हों."

अतिथिने मुस्कराकर कहा—"नहीं नहीं, अभी उन्हें इधर भेजनेका कष्ट न कीजिएगा. जब सुभीता हो."

"कष्ट मैं न दूंगा तो वह मुझे ही कष्ट दे निकलेंगी, मिस्टर सहाय! आशा है कि अब तक वह आपकी याद ताजा कर चुकी होंगी. नमस्कार!"

अतिथिके माथेमें बल आए. कुछ देरमें मोहिनी जब कमरेमें आई तो बल सहसा गए नहीं और वह अपनी जगहसे उठा नहीं

मोहिनीको आते असमंजस था. ' जैसे-जैसे कमरेमें वह पग-पग बढ़ रही थी वैसे-वैसे असमंजस भी बढ़ रहा था. किन्हीं अपने पुराने सह-पाठी सहायको वह ध्यानमें नहीं ला पाती थी. वह एक-एक डग रखती आ रही थी. किन्तु अतिथि व्यक्ति मानो उसकी ओरसे असावधान था. आनेवालेका ध्यान उसे तब हुआ जब वह उसकी कुर्सीके सामने आ पहुंची और चौंककर बोली—"कौन ? जितेन !"

अतिथिने कहा—"जितेन नहीं, मैं सहाय हूं, यह याद रखना जरूरी है. सुनो, वक्त कम है और काम है...यह अखबार लो, शायद अब तक

देखा न हो. रात पंजाब मेल गिर गई. हत तिरेसठ, आहत दो सौ पन्द्रह. सुना तुमने? तिरेसठ मरे, दो सौ पन्द्रह घायल हुए. खबर देखो, यह है. गलत उसे समझनेकी जरूरत नहीं है ..अब बताओ, मैं यहां कुछ दिन ठहर सकता हूं? और जितेन नहीं, मैं सहाय हूं."

मोहिनी कुछ पल उसे हक्की-बक्की-सी देखती रह गई. फिर एकाएक घुटनोंके बल उसकी कुर्सीके आगे गिरकर अपने दोनों हाथोंमें उसका हाथ दबाती हुई बोली—"जितेन!"

जितेनके माथेके बल और सिमट गए बोला—"मोहिनी, एक बहादुरी करो, मुखबिरी करके मुझे गिरफ्तार करा दो, मुझपर इनाम भी है."

मोहिनीको कुछ न सूझा. वह झपटकर उठी कि जाकर पहले दरवाजा तो बन्द कर दे पर वहां पहुंची तो देखा कि उसके स्वामी नरेशचन्द्र उधर ही आ रहे हैं क्षण भरके लिए मोहिनी स्तब्ध हो आई फिर एकाएक हंसी, बोली—"अच्छा हुआ जो तुम एक मिनट पीछे नहीं आए, नहीं तो दरवाजा बन्द मिलता."

मोहिनीने इन शब्दोंमें जाने क्या-क्या कह देना चाहा, पर नरेशचन्द्र ने उधर ध्यान नहीं दिया सीधे बढ़ते हुए आकर अतिथिसे कहा—"माफ कीजिएगा, मिस्टर सहाय! मैं अनुपस्थित रहूंगा, लेकिन मुझे उम्मीद है कि आपकी सहपाठिनी आपको आज ही नहीं चले जाने देंगी. जी नहीं, बैठिए, बैठिए! क्यों आपकी तबियत तो—, लीजिए, मैं चला! आपकी अब यह सहपाठिनी नहीं हैं तो क्या, आशा है मेरी सहधर्मिणीसे आपको शिकायत न होगी"

मोहिनीने कहा—"तो क्या तुम जरा भी बैठ न सकोगे? बैठो न"

"नहीं, इस समय नहीं, प्रिय दुःख है मिस्टर सहाय कि मुझे जाना पड़ रहा है."

यह कहकर उन्होंने दोनों हाथ बढ़ाकर सहायका अभिवादन किया और मुड़कर वह बाहर चले गए अब तक अभ्यागत कुछ भी नहीं बोला

था, पर अब उसने कहा—"खुश हो मोहिनी ?"

स्वरके तीखेपनको उसने देखा, कहा—"हां खुश हूं."

"खुश होनेकी बात ही है. देखता हूं यहां सब हैं. और आधिपत्य का इतना विश्वास कि शंकाकी छायाको जगह नहीं ! तो इसको विवाह कहते हैं ?"

मोहिनीको सहना कठिन हो आया. उसने कन्धोंपर हाथ देकर जितेनको कुर्सीपर बैठाया और आप वहीं नीचे पैरोंके पास फर्शपर बैठकर अपने दोनों हाथोंमें उसके दाहिने हाथको लेकर दबाते हुए कहा—"जितेन !"

जितेन बैठा सामने दीवारको देख रहा था. वह निश्चेष्ट था और निर्वाक्. उसने मोहिनीको अपने हाथसे खेलने दिया और उसके सम्बोधनका कोई उत्तर नहीं दिया. मोहिनीने कातर होकर कहा—"तुमने यह क्यों किया ?"

जितेनने अपना हाथ खींच लिया और अपने सामने बैठी उस मोहिनी नारीपर आक्रोशके भावसे देखते हुए कहा—यहां नहीं, सामने अलग कुर्सीपर बैठो, जैसा कि तुम्हें चाहिए. उठो...."

"मैं नहीं उठती. क्यों किया यह तुमने ?"

"मैंने जो किया, किया अब तुम तमाशा न करो. उठो, सीधी बैठो. साफ कहो क्या चाहती हो ?"

मोहिनीने जोरसे कहा—"मैं नहीं उठूंगी यहांसे. तुम क्या अकेली मुझको नहीं मार सकते थे कि वहां ट्रेन गिराने गए ? मेरा इतना अविश्वास !"

जितेनमें गुस्सा तेज हो आया. उसने अपनी कुर्सी पीछे खींचते हुए कहा—"तुम्हारा अविश्वास ! तुम कौन हो ?"

मोहिनी अपनी जगह बैठी रही, बोली—"मैं सब कुछ हूं तुम्हारी."

जितेनने कहा—"और पतिकी ?"

"पत्नी···लेकिन छोड़ो. बिस्तर किए देती हूं, आकर लेट जाओ,

तुम्हारी तबियत ठीक नहीं दीखती."

मोहिनीने उठकर पहले जितेनके माथेपर फिर कनपटीपर हाथ रखा. वह सहना हुआ चुप बैठा रहा. माथा उसका गरम था. मोहिनीने कहा—"अरे, तुम्हें तो बुखार है! उठो, उठो, लो, लेट जाओ."

जितेनने एकाएक मोहिनीका हाथ झटककर उसे दूर कर दिया—"दया करती हो! हटो, अलग बैठो."

मोहिनी फिर पास आ गई, बोली—"दया नहीं, तुम्हें बुखार है जितेन! रातको सोए नहीं दीखते. दया तुम्हारी कि तुम मेरे यहां आए. अब आए हो तो निर्दय न बनो, आराममें लेट जाओ."

जितेनने अपने माथेपर बढ़कर आते हुए हाथको जोरसे झटका और गर्जना करके कहा—"हट जाओ."

मोहिनी उस स्वरपर अलग हट आई. और चुपचाप ठगी-सी जितेनको देखती रही.

जितेन आगे कुछ नहीं बोला. उसी भांति सामने दीवारकी ओर देखता बैठा रहा.

अब मोहिनीने मुड़कर बराबर बिछे पलंगको ठीक किया. तकिए सही किए और उसको एक सिरेसे मोड़कर कहा—"लो, आ जाओ."

जितेनने आंख उठाकर मोहिनीकी तरफ देखा. वे आंखें जल रही थीं. एक पल, दो पल, कुछ पल वह उसी तरह अंगार-सी आंखोंसे मोहिनीको देखता रहा. नहीं जानता था वह क्या चाहता है. मोहिनी उस निगाहके नीचे बेबस-सी बोली—"आओ न!"

जितेनने दहाड़कर पूछा—"क्या?"

"यहां आकर लेट जाओ."

जैसे शब्द भीतर न गए हों. एकाएक उठकर आया और पलंगकी पाटीपर टिकते हुए बोला. "इतना नहीं कर सकती हो मोहिनी कि पुलिसमें खबर कर दो. मैं तो विश्वास रखता था."

"विश्वास!"

"हां !"

"चुप रहो !"

"क्यों ? क्या इतने बेगुनाह मरने और घायल होनेवालोंके लिए तुम इतना भी नहीं कर सकतीं? क्या मुझपर तुम्हारा कुछ और बाकी है ?"

"नहीं, नहीं, नहीं कर सकती. मुझे सताओ मत."

जितेनने अजब व्यंगकी मुस्कराहटसे कहा--"यह बहुत बड़ी भलाई है, मोहिनी. इसके करनेसे मुंह मोड़ोगी तो पछताओगी. अवसर फिर नहीं आता."

"मैं अभी अपना गला घोंट डालूंगी अगर तुमने मुझे और सताया."

जितेनने और भी तीखेपनसे कहा—"क्यों, क्या प्रेम करती हो ? प्रेम ही भला नहीं बनने देता."

मोहिनी गम्भीर होकर बोली--"हां करती हूं. लेकिन तुम कौन हो ? सुनो, तुम कायर न होगे."

जितेन तीव्र हो आया, बोला--"क्या कहा ? कहते शर्म नहीं आती ?"

"नहीं, मुझे शर्म नहीं आती." यह कहकर मोहिनी हाथोंसे उसे लिटानेका प्रयत्न करने लगी.

"नहीं," जितेनने कटे और ठंडे लहजेमें कहा. तुम, वहां अलग बैठो और सुनो, बुखार है, ठीक है, लेट भी जाऊंगा. चिन्ताकी बात नहीं लेकिन सुनो, आते समय मुझमें छल था, देखता हूं, वह टिक नहीं सका मेरे मनमें पछतावा नहीं है कि मैं यहां आया हूं, क्योंकि इस स्थानक अपने लिए सबसे सुरक्षित समझा है. जस्टिसके घरमें कौन देखने आ वाला है इसीको कायरता तुम कहती हो, हम बहादुरी कहते हैं. बताअ तुमपर विश्वास कर सकता हूं ?"

अलग बैठी हुई मोहिनीने कहा--"विश्वास किया है इसीसे तो आ हो. लेकिन इस घरमें मैं अविश्वासिनी बनूं, इसकी कीमत तुम अ दे सकोगे, यह भी मुझे विश्वास है, यही मेरा असल विश्वास है. इ

निरपराध स्त्री-पुरुष-बालकोंके मरनेका कारण बननेका क्या सचमुच तुम्हें ख्याल नही है ?"

किंचित हंसकर जितेनने कहा--"नही. मरना किसको नही है ? क्या सबको मारनेका पाप हमेशा भगवानको ही उठाते रहना होगा ? तुम्हारे उस भगवानकी कभी हमें भी तो सहायता करनी चाहिए. क्यों ?"

मोहिनी सुनकर चुप हो आई और जितेनको देखती रही.

जितेनने कहा--"क्यों क्या सोचती हो ?"

मोहिनी बोली—"सोचती हूं कि एक बार तुम भूल जाओ कि तुमने कुछ किया है. होता होनहार है और सब काल कराता है. ऐसा सोच कर तुम बेफिक्रीसे लेट जाओ"

"काल ! यानी तुम्हारा भगवान !" आग्रहसे जितेनने कहा.

"हा, भगवान!"

जितेन हंस पड़ा, बोला—"उसको क्या ऐसा करनेके लिए फासी लग सकती है ?"

मोहिनी गम्भीर होकर बोली—"हममें फासी सदा उसीको लगा करती है !"

जितेनने सुना, लेकिन जैसे सुना नहीं. कुछ देर वह चुप रहा, फिर बोला "मुझे तो फासी लग सकती है, क्या सोचती हो ?"

"फांसी क्या तुम इस वक्त भी नही पा रहे हो ?" आर्द्र वाणीमें मोहिनीने कहा, "असल फांसी यही है. तुम इस निरन्तरकी फासमें बच क्यों नही जाते ? . क्यों, अब भी मैं अलग ही बैठी रहू ? कहती हूं कि आओ, लो लेट जाओ, और सोनेकी कोशिश करो"

"तुम सुलाओगी."

"हा, मैं सुलाऊंगी."

"थपकी देकर ?"

"हा, थपकी देकर."

"तुमने मुझे कायर कहा. स्त्री
...न इसपर बहुत हंसा. बोला
...ो कायर बनाती है."
...हीं, वीर भी बनाती है" कहती हुई मोहिनी उठकर पलंगके
...ने आ बैठी. फिर उसे हाथोंमें लेकर लिटाते हुए बोली "लो,
...ी तरह; बस लेट जाओ."
...जितेन चुपचाप लेट रहा. लेटकर मोहिनीके शिथिल पड़े हुए हाथ
...उसने अपने हाथके नीचे लिया, कहा "तुम मुझे इस तरहका वीर
...बना सकोगी, मोहिनी ! ये कोरे शब्द हैं, ये 'शहीद' और 'वीर'.
...फांसी नहीं चढ़ना, काम करना है."

मोहिनीके मनमें सहानुभूतिकी प्रबल वेदना उठी. उसने कहा—
...जितेन ! घबराओ नहीं. जो हुआ, हो गया. होनहार कब टला है !
...रे पास तुम निरापद हो. सब चिंता छोड़ दो, पूरे स्वस्थ हो जाओगे
...ब जीवन तुम्हारा होगा. अभी तो समझो मेरा है. वापस पाकर
...फिर चाहे रखना, चाहे फेंकना."

"तुम्हें दूं तो लोगी, मोहिनी ?"

"कैसे मुझे दोगे ? देना उसको नहीं है जहांसे पाया है ?"

जितेनने कहा—"छोड़ो, छोड़ो, तुम चाहती हो कानूनके आगे समर्पण कर दूं ?"

"हां, चाहती हूं तुम दोपके नीचे न रहो. आगे बढ़कर सब स्वीकार कर लोगे तो देखोगे कि मेरी बात सही है कि दोप नीचे रह गया है."

जितेन सुनकर अन्दर-ही-अन्दर सशंक हुआ. उसने कम्बल अपने ऊपर लिया, कहा—"मैं सोऊंगा."

मोहिनीकी आंखोंमें गम्भीर वेदना थी, उसने कहा—"ठीक है, सो जाओ."

"तुम जा रही हो ?"

"तुम्हें नींद आ जाएगी तब जाऊंगी और यह सिरहाने बटन है,

घण्टी दोगे तभी ग्रा जाऊँगी."

नीद जितेनको कुछ जल्दी नही ग्राई शकाग्रोंपर शंकाग्रोंसे वह घिरा रहा. लेकिन जोर लगाकर उसने कम्बलसे ग्रपने मुंहको ढांपे रखा. मोहिनी वहां चुपचाप घण्टेमे ऊपर बैठी रही. ग्रन्तमें नीद ग्राई देख वह चली गई

५

मोहिनीने फोन किया—"सुनते हो जी, बहुत काममें तो नही हो?"

उधरसे उत्तर ग्राया—"हुक्म कीजिए !"

"हर्ज न हो तो डाक्टर कपूरको लेते ग्राग्रो."

"डा० कपूर ! क्यो ?"

"ऐसा क्या काम बहुत है ?...उनकी तबियत ठीक नही है. हां, मेहमानकी."

"है, कौन वह हजरत? सीधे तुम ही डाक्टरको फोन करके क्यों नही बुला लेती ?"

"बुला तो लूंगी पर तुम भी ग्रा जाते जरा—"

"ग्रापके दोस्तमें मेरी दिलचस्पी जरूरी है? जी नही, माफ कीजिए."

"मजाक नही, ग्रा जाग्रो...गाडी भी नहीं है."

"ग्रच्छा तो गाडी भेजता हू"

"देखिए, खुशामद न कराइए, ग्रा जाइए."

"ग्रच्छा हजूर !"

नरेश ग्राए, डाक्टर कपूर ग्राए. सब कमरेमें

को तेज बुखार था और वह बेहोशीकी नींदमें था. डाक्टरने देखभाल कर पूछा--"कबसे यह हालत है ?"

मोहिनीने कहा--"परसों जरा बुखार था, कोई बात न थी. हलके नजलेका ख्याल था. आज बुखार तेज हो आया तो आपको तकलीफ दी." कहकर मोहिनीने अपने पतिको देखा--"क्यों जी, परसों तो ठीक ही थे ?"

पतिने डाक्टरकी ओर घूमकर कहा--"जी हां, परसों कोई बात न थी. सवेरे पहुंचे तो खासे खुश. मेरे पुराने दोस्त हैं, डाक्टर साहब! आनेके बाद तीसरे पहर जरा कुछ थकान मालूम हुई, लेकिन आज.. क्या खयाल है, डाक्टर ?"

डाक्टरीकी भाषामें डाक्टरने कुछ बताया. मालूम हुआ कि आराम होनेमें कई दिन लग सकते हैं. खतरा नहीं है. एतिहात चाहिए. यह नुस्खा है, दवा मंगा लीजिएगा, इत्यादि, इत्यादि. और डाक्टरने विदा ली.

अपने कमरेमें आकर नरेशने पत्नीसे पूछा--"कहिए क्या बात है?"

"बात क्या है," मोहिनीने हंसकर कहा, "परसों उनकी तबियत अच्छी भली थी न ?"

"जी, बिल्कुल !" पति भी हंसे, "साफ कहो, है क्या ?"

"देखा नहीं, १०४ बुखार है !"

पतिने जिज्ञासासे पत्नीकी ओर देखा, कहा--"झिझको मत, साफ कह डालो."

पत्नीने भी पतिको सप्रश्न आंखोंसे देखा. देखते-देखते वह जैसे कृतज्ञ हो आई. बढ़कर पतिके दोनों हाथ पकड़े और फिर अपना सिर डाल वह उनकी छातीमें छिप गई. बोली--"उन्हें बचाना होगा."

पत्नीको सिरपर धीमे-धीमे थपकते हुए नरेशने हंसकर कहा--"क्या सोच रही हो, वह हजरत मर रहे हैं ? मुझे तो ऐसा नहीं मालूम होता."

फिर बड़े हलके हाथमे कन्धों परसे पत्नीको थामकर अपने सामने लेते हुए कहा—"मोहिनी, मोहिनी, ऊपर देखो." मोहिनीने ऊपर नहीं देखा.

नरेशने ठोडीमें हाथ लगाकर मोहिनीके चेहरेको ऊपर उठाया, कहा—"मुझपर विश्वास नहीं करोगी ? हा, ऐसे ही....अब कहो क्या बात है !"

वह उठे चेहरेसे पतिको देखती रही और देखते-देखते एक साथ झुककर उनके अकमें फिर छिप रही.

"नहीं नहीं, ऐसे काम नहीं चलेगा, मेरी रानी !" अकमें लिए-लिए कुछ डग चलकर नरेशने पत्नीको आराम कुर्सीमें बैठा दिया और सामने घुटनों बैठते हुए कहा—"कुछ बात जरूर है. खोलकर न कहोगी तो मैं क्या समझूगा."

मोहिनीने उत्तरमे अपना मु ह हाथोंमें छिपा लिया.

नरेश कोई एक मिनट उस तरह बैठे रहे, फिर उठकर कमरेमें टहलने लगे. दो-एक मिनट चुपचाप इधर-से-उधर डग भरते रहकर वह कुर्सीके सामने कोई दो गज दूर खड़े होकर बोले—"मोहिनी, मुंह छिपानेकी तुम्हारे लिए कोई बात नहीं. प्यारका हक सबको है. तुम्हारा, मेरा, उसका सबका . अच्छा, मैं चलूं ?"

मोहिनी हिली न डुली इस तरह समझी जाएगी, ऐसा उसे गुमान न था. अगुलिया जहा थी वही रह गई, यद्यपि उन्हें अब वहाँ रखनेमें मोहिनीकी अपनी कोई चेष्टा न थी

"चलूं ना ?"

मोहिनी अपनी ओरसे कोई उत्तर नहीं दे सकी

"देखो मैं एक नर्सके लिए फोन कर दूगा मुनासिब तीमारदारी बड़ी चीज है, और इन नर्सोंको ट्रेनिंग होती है देखना बुखार मामूली न समझना. डाक्टरसे मैंने बात की है खतरा नहीं है. लेकिन तीमारदारीमें चूक हुई तो खतरा हो सकता है और तुम्हारे लिए, मुझे डर है.

असावधान होना असम्भव नहीं. देखो, वैसा नहीं होना चाहिए. अच्छा मैं अब चला."

मोहिनीका मुंह अब छिपा न था, हाथ वहांसे हट गए थे. आंखें फैली थीं और वह सुन रही थी.

"आज कई केस थे. हुजूरका हुक्म हुआ तो हाजिर हो गया. अब इजाजत हो तो बन्दा चले."

कहकर नरेशने प्रतीक्षा नहीं की और वह दरवाजेकी ओर बढ़ गए.

मोहिनीने जोरसे कहा—"नहीं." लेकिन वह "नहीं" भीतर चाहे कितने भी जोरसे उठा, उठकर कण्ठतक आकर रह गया, मुंहसे बाहर न निकला और नरेश निर्विघ्न बढ़ते चले गए. मोहिनी कुर्सीमें बंधी बैठी रही. कुछ क्षण उसको कुछ न सूझा. वह अपनेपर विस्मित थी. कितने आग्रहसे बुलाया था कि यह कहूंगी, वह कहूंगी और इनके हाथ सब छोड़ दूंगी. पर समय आया तो—.

वह उठी, उठकर अलमारीसे एक किताब निकाली और उसे लेकर बैठ गई. घड़ीमें साढ़े बारह बजा था. लंचका समयएक पर होगा. वह किताब पढ़नेमें लगी रही. थोड़ी देरमें उठकर उसने वह पुस्तक रख दी और दूसरी निकाली. उसे खोला, पढ़ा और फिर पढ़नेके पृष्ट पर अंगुली रखकर किताब बन्द कर ली.

तभी फोनकी घण्टी हुई. फोन उठाकर बोली—"मिसेज नरेश."

"हलो, डार्लिंग ! नर्सका इन्तजाम कर दिया है. होल टाइम. क्या दूसरी शिफ्टके लिए एक और नर्स जरूरी नहीं है ? मेरे ख्यालमें तो जरूरी है. क्या चाहती हो ?"

"नहीं !"

"खैर, इसको आने दो तब बात करेंगे. और हां, लंच इधर ही भिजवा देना. भई, सच कहता हूं बड़ा काम है ?"

"आओगे नहीं ?"

"माफ करना मोहिनी. इस कदर कागज हैं कि क्या कहूं ! यहीं

त देना. यू आर ए डार्लिंग !"

मोहिनीने कहा—"अच्छा" और फोन बन्द कर दिया. उसका न बुझ आया. घडीमें देखा, पौने हो रहा था. तेजीसे उठी. अपने थसे खानेका सामान टिफिन बक्समें सजाया, थरमस तैयार किया :—

"बीबी जी !"

दरवाजेपर दरवानको देखकर कहा—"क्या है ?"

"मेहमान आपको बुला रहे हैं."

"तबियत का क्या हाल है ?"

"आपके लिए दो-तीन बार कह चुके हैं."

"दो-तीन बार ! तो पहले खबर क्यों नही दी ?"

"जी, आप—"

मोहिनीने कहा—"देखो, आइन्दा ख्याल रखना...खानसामा, सुनो, पने सामने साहबको खिलाकर आना, समझे ?.. (दरवानसे) चलो."

जितेनको बुखार हल्का था, पसीना कुछ आ चुका था. कुर्सी लेकर ोहिनी पास आ बैठी और जितेनके माथेपर हाथ रख मुस्कराकर ली—"क्या है ?"

"आपको हो गई फुरसत ?"

"नही,"मोहिनीने हसकर कहा, "फुरसत कहा हुई, अभी जाना गा."

"तो आई क्यों ?"

मोहिनी हंसी, बोली—"मर्जी मेरी, इसलिए आई. आपके बुलानेसे ड़े ही आई सुनो, अब अकेले न रहोगे साहबने एक नर्सका बन्दो-स्त किया है. एंग्लोइण्डियन नही, इंगलिश है. और बताऊं कैसी ?"

जितेनने माथेपर रखे हाथको अपने हाथमें उठाकर अलग हटाया. मोहिनीने प्रतिरोध नही किया, कहा—"बहुत अच्छी!"

असावधान होना असम्भव नहीं. देखो, वैसा नहीं होना चाहिए. अच्छा मैं अब चला."

मोहिनीका मुंह अब छिपा न था, हाथ वहांसे हट गए थे. आंखें फैली थीं और वह सुन रही थी.

"आज कई केस थे. हुजूरका हुक्म हुआ तो हाजिर हो गया. अब इजाजत हो तो बन्दा चले."

कहकर नरेशने प्रतीक्षा नहीं की और वह दरवाजेकी ओर बढ़ गए.

मोहिनीने जोरसे कहा—"नहीं." लेकिन वह "नहीं" भीतर चाहे कितने भी जोरसे उठा, उठकर कण्ठतक आकर रह गया, मुंहसे बाहर न निकला और नरेश निर्विघ्न बढ़ते चले गए. मोहिनी कुर्सीमें बंधी बैठी रही. कुछ क्षण उसको कुछ न सूझा. वह अपनेपर विस्मित थी. कितने आग्रहसे बुलाया था कि यह कहूंगी, वह कहूंगी और इनके हाथ सब छोड़ दूंगी. पर समय आया तो—.

वह उठी, उठकर अलमारीसे एक किताब निकाली और उसे लेकर बैठ गई. घड़ीमें साढ़े बारह बजा था. लंचका समयएक पर होगा. वह किताब पढ़नेमें लगी रही. थोड़ी देरमें उठकर उसने वह पुस्तक रख दी और दूसरी निकाली. उसे खोला, पढ़ा और फिर पढ़नेके पृष्ठ पर अंगुली रखकर किताब बन्द कर ली.

तभी फोनकी घण्टी हुई. फोन उठाकर बोली—"मिसेज नरेश."

"हलो, डार्लिंग ! नर्सका इन्तजाम कर दिया है. होल टाइम. क्या दूसरी शिफ्टके लिए एक और नर्स जरूरी नहीं है ? मेरे ख्यालमें तो जरूरी है. क्या चाहती हो ?"

"नहीं !"

"खैर, इसको आने दो तब बात करेंगे. और हां, लंच इधर ही भिजवा देना. भई, सच कहता हूं बड़ा काम है ?"

"आओगे नहीं ?"

"माफ करना मोहिनी. इस कदर कागज हैं कि क्या कहूं ! यहीं

"देख लो तुम्हारी कसम !" कहकर मोहिनीने निर्णीत भावसे बटन दबाकर घण्टी दी और दरवानके आनेपर कहा, "अन्दर जाकर खानसामा से खाना यहीं भेजनेके लिए कहो."

दरवानके जानेपर जितेन बोला—"मोहिनी..."

मोहिनीने कहा—"देखिए, यह घर मेरा है. आपका हुक्म यहां नहीं चलेगा, मेरा हुक्म चलेगा. आप हैं तो समझ लिया सारा कमरा ही आपका है, मैं चाहूं तो भी अपना खाना यहा मगाकर नहीं खा सकती? जी नहीं, यहीं खाऊंगी. देखती हूं कोई क्या करता है."

जितेनने कहा—"मोहिनी, वह उधर बैठे होंगे."

"होंगे बैठे तो क्या करूं? इस तरह आसानीसे इस कमरे परसे अपना अधिकार छिन जाने दूं? चुप लेटे रहो, बोलो मत."

जितेन आंख फैलाए मोहिनीको देखता रहा. थोड़ी देर बाद उसने कुछ कहना चाहा, तभी दो अगुलियां उठाकर मोहिनीने अपने होठोंके आगे कीं, कि नहीं, एकदम चुप. जितेनकी बात मुंह-की मुंहमें रह गई और वह चुप बना रहा.

मोहिनीका खाना आया और नौकर मेज लगाकर उसपर तश्तरियां सजानेका उपक्रम करने लगा. मोहिनीने कहा—"बस रख दो, तुम जाओ."

वह गया और एक मिनटमें पानीका गिलास भरकर मेजपर रख गया. मोहिनी देखती रही और बैठी रही. उसका हाथ जितेनके पांवके तलुओंको रूमालसे धीरे-धीरे सहला रहा था.

जितेनने कहा—"मोहिनी, उठो खाना खा लो."

मोहिनीने उसी प्रकार दो अगुलियोंको अपने होठोंके आगे किया, यानी कि "चुप."

जितेन चुप नहीं हुआ. उसने अपने पैर खींच लिए, कहा—"उठकर खाना खाओ पहले."

"खा लूंगी."

जितेन जोरसे बोला—"चुप रहो."

"सच कहती हूं, बहुत ही अच्छी है." कहती हुई मोहिनी कुर्सीसे उठकर जितेनके सिरहाने आ बैठी. तकिया ठीक करते-करते देखा कि आइस बैगकी वजहसे वह जहां तहांसे गीला हो गया है. फुर्तीसे दरबानको बुलाकर तकिया बदला, आसपासकी चीजें ठीक कीं और जितेनको बोलने नहीं दिया. अन्तमें कहा—"लो, फुरसत खत्म हो गई, अब मैं चली."

जितेनने कहा—"जाओ."

बोली—"लंचपर जा रही हूं, तुम क्या खाओगे ?"

"वह आ गए होंगे ?"

"हां, सवा बज गया. क्यों नहीं आ गए होंगे ? पीछे कोई तकलीफ तो नहीं हुई ?"

"नहीं, तुम जा सकती हो."

"तीन बजेके करीब आऊंगी, जाऊं ?"

"जाओ और आना मत, बिलकुल मत आना."

मोहिनी खड़ी हो आई थी. अब फिर जितेनके पायते आ बैठी. बोली—"खाना अपना में यहीं मंगा लूं ?"

"नहीं, जाओ."

"तो लो, मंगाए लेती हूं."

कहकर वह बटन दबानेको झुकी कि जरा उठकर जितेनने उसकी बांहको पकड़ लिया, कहा—"क्या करती हो ? जाओ, वह राहमें बैठे होंगे."

मोहिनोने हंसकर कहा—"तो बैठे न रहें एक बार. पर मैं खाऊंगी, तुम बैठे देखोगे, इतना तुम्हें अपनेपर खयाल नहीं होता ? जरा-जरा बातपर रूठते हो !"

जितेनने गुस्सेमें भरकर कहा—"कसम है तुम्हें जो तुम वहां न खाओ."

किया. उस विश्वासके प्रति उसमें कृतज्ञता उठती थी किंतु विश्वासके साथ आरोप क्यों ? शर्त उसके साथ यह क्यों कि मैं अपनी ओरसे विश्वास दूसरेको न दे सकूं ? वह अपने पतिको जानती है. जानती है, वह आनन्दी स्वभावके पुरुष हैं. तुच्छता कहीं उनमें नहीं है. वह उससे कभी कुछ नहीं पूछेंगे. शका नहीं करेंगे. होगी तो उसे स्वीकार नहीं करेंगे अपनेसे दूर-ही-दूर रखेंगे और भीतर जाकर मैलकी बूंद नहीं बनने देंगे. ऐसे स्वामीसे जानबूझकर कुछ अगोचर रखना होगा, यह स्थिति देखकर वह सभ्रममें पड़ गई. वह दे क्या कि स्वामीके प्रति अविश्वासिनी मुझे नही बनना है, अब जितेन तुम देख लो, रहना हो रहो, नहीं रहना हो जाओ. यह भुवनमोहिनी वही है लेकिन पत्नी भी है, इससे वह स्वामिनी है, परायण है. लेकिन यह सब करके भी निरीह भावसे आकर पड़े हुए इस अपने जितेनके प्रति निर्दय होनेका उपाय भी उसे नहीं सूझा. जितेन मुंह ढककर परली तरफ करवट लिए पड़ा था, ऐसे कि जैसे सास भी न हो. मोहिनी अनुभव कर सकी कि इस समय वह जितना ही ऊपरसे तना है, उतना ही भीतरसे कातर है. जब तक जानता है मैं यहां हूं—चाहे अन्तकालतक ही क्यो न होऊं—वह तनाव उसमे ढीला न होगा रह-रहकर उसे बालकके समान रूठे उस व्यक्ति के प्रति सवेदना होती वह अनुभव करती कि पति तो हैं, और वह ठीक हैं; जानते हैं कि उनकी दुनिया है, उनकी मैं हूं. पर यह व्यक्ति आज जाने किस बलपर यह मानकर कि मैं उसकी हूं, यहां आ गया है. आ तो गया है, पर सदेहमें पड़ गया है कि मैं भी उसकी हूं कि नहीं. मोहिनीके मनमें गहरी पीड़ा उठी. जितेन इस समय निरा निपट एकाकी है, उसका कोई नहीं कब कोई था ? अनाथ जन्मा, अनाथ पला और अनाथ पड़ा सबके नाते-रिश्तेदार होते हैं, सगी-साथी होते हैं. यह आदमी अपनेको लेकर जिया. इसने सपनोंका साथ पकड़ा. इसीको शायद प्रतिभा कहते हो. यही शायद फिर पागलपन हो ! जो हो, वह किसीको साथ न ले सका, न साथ दे सका. जरूर वह अकेला नहीं

है. अवश्य सहकर्मियों और अनुगामियोंका दल है. लेकिन दल एकाकी-पनको वढ़ानेके सिवा क्या कम भी कर पाता है ? उसमेंसे आदमी जुटाता है, खोता तो नहीं है. और खोए बिना किसने क्या पाया है ? मोहिनीको अपना अतीत याद आया. क्या होता उस आगका! अगर वह साथ होती ? क्या वह तब जलनेसे ज्यादा उजलती नहीं ? लेकिन उसने अपनेको इन विचारोंसे तोड़ा. तब सपने थे कि बिजलीकी तरह भीतर अलक्ष्य रहेंगे, बहते रहेंगे और रह-रहकर, कौंधकर चमक आया करेंगे. बोझसे भारी भरकम न बनेंगे कि जड़तामें नीचे जाएं. प्राण वायुकी तरह प्रवाही, तरल और चिन्मय बनकर रहेंगे. पर वह सब दूर हुआ और आज वह प्रतिष्ठा और सुरक्षाके बीच है, तब सुविधा है और सब सम्पदा है, लेकिन ..

लेकिनके बाद वह कुछ नहीं सोच सकी. समझ ही न सकी कि क्या है जो नहीं है. विघ्न नहीं है, अभाव नहीं है, चुनौती नहीं है. लेकिन यह तो नकार हैं. इनका न होना ही सच्चा होना है. पर ·· सच ? उस कुर्सीमें बैठी-बैठी शून्यमें देखकर मानो वह पूछना चाहती थी कि न होना भी क्या होनेवालेके लिए अनिवार्य है ? जीवितके लिए क्या मृत्युकी साधना आवश्यक ही है ? क्या साथ-साथ मरते रहने के बिना जीते जाना अयथार्थ है, अधूरा है ?

वह कुछ न समझ सकी. देखा कि जितेन बरबस अपनेको ढंके पड़ा है. यह क्या मृत्युका उपासक है ? शायद उपासना वह महान् हो, लेकिन क्या—

उसने कहा—"जितेन!"

जितेन नहीं बोला.

वह उठ आई. पलंगपर झुककर दूसरी तरफसे अपने हाथोंसे कम्बलको उसने अलग किया. हाथ कनपटीके नीचे देकर उसके मुंहको अपनी ओर किया, कहा—"अच्छा, नहीं कहूंगी. सुनते हो ? अब तो आंख खोलो."

जितेनने अपनेको घोर विडम्बनामें अनुभव किया. वह नहीं चाहता था किसीको अपने पास. वह अपने भाग्यसे लड़ लेगा. कोई उसके बीच कौन होता है. और यह नारी—

"सुनो, किसीसे नहीं कहूंगी. डरते क्यों हो ?"

सहसा वज्र-जैसी मुट्ठीमें मोहिनीके हाथको पकड़कर जितेनने दूर फेंक दिया. दहाड़कर कहा—"निकल जाओ, इसी वक्त तुम यहांसे निकल जाओ."

मोहिनी गिरते-गिरते बची. कई डग वह पीछे खिंक आई थी. सम्हलकर फिर वह आगे बढ़ी, सामने पायतेकी तरफ खड़ी होकर बोली—"जाऊं ?"

"जाओ, जाओ, जाओ."

मुस्कराकर बोली—"अच्छी बात ! तीन बजे आऊंगी."

कहकर वह मुड़ी.

जितेन जोरसे बोला—"हरगिज नहीं."

चलते-चलते मुस्कराहटसे पीछेकी ओर देखकर कहा—"शायद नर्स के साथ पहले ही आना हो" कहती हुई कमरेसे निकल गई.

६

●●●

जैसा अनुमान था, नर्स वह परिचित ही आई. जब होता है उसी को बुलाया जाता है. उसपर सबको भरोसा है. हंस-मुख है, और नम्र और कुशल. मैथिल्डे उसका नाम है, हम मिथिला कहेंगे. मिथिला ने एक पत्र मोहिनीको दिया.

मिथिलाका अभिवादन करके, उसका कुशलक्षेम लेकर, मोहिनीने पत्र पढ़ा. पढ़कर तह करके उसे अपने पास रख लिया. कहा—"मरीजके बारेमें उन्होंने कुछ कहा है ?"

"जी नहीं, सिर्फ ख़त दिया है."

"अच्छा तो आओ, तुम्हें बता दूं. (उठती है और फिर बैठ जाती है और घण्टी बजाती है) मैं आदमीको बुलाए देती हूं, वह ले जाएगा—देखो, उनके दोस्त हैं. डाक्टरने बुखार बतलाया है. मेरे ख्यालमें खास बात नहीं है. खास कुछ देखो तो मुझे बता देना. (लड़केके आनेपर) देखो, आपको उस मेहमान वाले कमरेमें ले जाओ."

मिथिलाके जानेपर मोहिनीने फोन उठाया और पतिके लिए पूछा, लेकिन वह अपने स्थानपर नहीं थे. बोली कि एक मिनटको फोन सुन जानेके लिए उनसे कहो. कहकर फोनको वह कानसे लगाए रही. थोड़ी देर बाद, जो कि उसे काफीसे ज्यादा मालूम हुई, मुंशीने आकर उधरसे कहा—"साहब बहसके बीचमें हैं, थोड़ी देरमें फोन कर लीजिएगा."

"आते ही कहना, घरसे बात कर लेंगे."

उसे अच्छा नहीं मालूम हुआ. पांच-सात मिनट वह राह देखती रही, पर जब कोई फोन नहीं आया तब वह उठकर जितेनकी तरफ चली. मिथिलाने आते ही अपना काम सम्हाल लिया था. चार्ट बाकायदा टांग दिया गया था. मेज दुरुस्त हो गई थी और थर्मामीटर मरीजके मुंहमें था. मोहिनीने पलंगके पास पड़ी कुर्सीकी पीठको हाथोंसे थामकर खड़े-खड़े पूछा—"कहो मिथिला, बीट्स ली हैं ?"

"अभी नहीं." कहकर कलाईकी घड़ी देखकर उसने थर्मामीटर देखा, देखकर झटका.

"कितना है ?"

"टू प्वाइंट सिक्स."

मोहिनीने सुना, सुनकर मुस्कराई. मरीजसे कहा—"कहिए ?"

मरीज उधर नहीं देख रहा था. अब भी उसने मोहिनीकी तरफ

निगाह नहीं की, न उसने कुछ कहा.

अबतक मिथिलाने मरीजके हाथको कब्जेमें करके घड़ीमें देखते हुए उसके नब्जकी बीट्स (धड़कन) गिनना शुरू कर दिया था. मरीज अत्यन्त शान्त, सौम्य, ऊपर सामनेकी दीवार और छतकी संधि में किसी बिन्दुपर निगाह जमाए अपनी जगह लेटा था.

"कितनी ?"

"एक सौ बारह."

"बारह !"

"जी."

मोहिनी अब कुर्सी छोड़ आगे बढ़ती हुई जितेनके पास पलंगपर आ बैठी. कहा—"सुनिए, अब हम दो हैं यह सैंथिरड़े है, यानी मिथिला, मेरी बहन. शामको यह रहेगी, मैं जाऊंगी. सुनते हो, आज शाम को—"

जितेनने कहा—"अच्छा"

कहना था इसलिए कहा और उस 'अच्छा' में बताया कि सुन लिया गया है सब, और आगे माफ करें

"एक पार्टी है, उसमें जाना होगा ऐंह, ये पार्टियां, इनके मारे-— लाओ मुझे दो"

मिथिलाके हाथमें अनारके रसका छोटा-सा गिलास उसने हाथ में ले लिया

"लीजिए उठिए."

जितेनने मोहनीके हाथमें थमे उस छोटे-से कांचके गिलासमें चमकते सुर्ख रसको देखा, मानो देखता रह गया.

"उठिए न! उठाना होगा? अच्छा लीजिए, मिथिला, जरा लेना—"

रसका गिलास फिर मिथिलाको थमाकर दोनों हाथ नीचे डालकर उसने जितेनको उठाया,

जितेन निश्चेष्ट था और आंखें फैलाए देख रहा था.

"क्यों, क्या बात है ?"

आखिर मोहिनीके हाथोंमें वह उठ आया और जरा सहारा देकर मोहिनीने दाहिने हाथसे फिर गिलास उसके सामने किया. कहा—"लीजिए."

दो एक क्षण उसे कुछ न सूझा. गिलास बेहद पास था और रस बेहद सुर्ख. आंखें वहां टंकी रह गई."

"लीजिए न, पी जाइए."

जैसे उसने सुना नहीं और सुनकर समझा नहीं. फिर एकाएक उसने हाथ बढ़ाया, गिलास मानो झपटा और एक गटकमें सब रस गले के नीचे उतार गया. मोहिनीने अपने सहारेसे अलग करके अब उसे तकियेसे लिटा दिया और अपने रूमालसे उसके होठोंको पोंछ दिया. इतनेमें देखा कि फोनको उठाए लड़का कमरेमें चला आ रहा है.

"क्या है ?"

"साहबका फोन."

कुर्सीपर आकर फोनको उसने घुटनेपर रखा और कहा—"कहिए, हूं."

उधरसे फोनने कहा– "मुन्शीने बताया तुमने मुझे याद किया था, कहो"

"यह क्या है जी, कि तुम सीधे उधरसे पार्टीमें जाओगे ? भला सोचो, उन्हीं कपड़ों जाओगे ?"

"यह पार्टी कौन विलायती है—अपने मंत्री महाशय ही तो हैं."

"क्या राजदूत न होंगे देश-विदेशके ?"

"होंगे तो—"

"नहीं, यहां होते जाना. और यह कैसे सोच लिया कि मैं नहीं चलूंगी ?"

"मैंने सोचा मरीज मेहमान—"

"उफ ! कह तो दिया चलूंगी. आ रहे हो न ?"

चलूं मैं पार्टीमें ?"

"मोहिनी—"

"मैंने सोचा, तुम शायद—"

"शट-अप मोहिनी, साढ़े पांच बजे तैयार रहना."

"मोहिनी सुनकर प्रसन्न हुई. बोली—"लेकिन ऐसा लगता है, बुखार रहा है. तुम कहो तो—"

"लेकिन अब तो मिथिला जानेवाली है नहीं."

"तो भी—"

"लुक हियर मोहिनी, तुम मेरे साथ आ रही हो. पार्टी जरा खास है, अपनी परीक्षा ही समझो, समझीं कि नहीं ?"

"तो चलना ही होगा ?"

"जी हुजूर, चलना होगा."

"अच्छा."

अब उसने फोन बन्दकर लड़केको दे दिया. जितेन सब सुनता हुआ चुप पड़ा रहा, हिला-डुला तक नहीं. पर कान उसके चौकन्ने थे और बातकी जरा भनक उससे बच न पाती थी. फोन लेकर लड़केके चले जाने पर उसने मिथिलाको संकेतसे बुलाया और अपने सिरहाने पास बैठनेको कहा.

वह झिझकती हुई खड़ी रह गई, बैठी नहीं और मोहिनीकी ओर उसने देखा.

"क्या मैं इतना अयोग्य हूं," जितेनने कहा, "कि हर समय तीमारदारीकी जरूरत हो ? मैं इसका आदी नहीं हूं. सुना सिस्टर, मैं इसका आदी नहीं हूं और यह मैं नहीं सहूंगा. तुम्हें अपना आराम मेरे लिए कुर्बान करनेका हक नहीं है."

नर्सने कहा—"जी !"

मोहिनी बोली—"यह आप क्या कह रहे हैं ?"

जितेनने कहा—"कृपया आप चुप रहिए...हां, सुना सिस्टर, तु

मेरी बात सुनो, उनकी चिन्ता न करो. मुझे इस सब—यह आराम—यह ऐन—इस चोचलेबाजीकी आदत नहीं है. बुखार है, चला जाएगा. लेकिन यह सब तमाशा क्या है ?"

मोहिनी अपनी जगहसे उठी. पास आते हुए बोली "मिथिला, तुम काम करो...और कहिए, तमाशा तो यह मेरा है. आपको आदत न होगी, मुझे यही आदत है. हमारे यहां मरीजपर नर्स न हो, यह नहीं हुआ करता, और घर हमारा है."

"यानी ?"

"यानी कि आप यहांके इन्तजाममें दखल नहीं दे सकते."

जितेन मोहिनीको देखता रह गया. वह उसकी पलंगकी पट्टीपर आ बैठी थी.

"लेकिन मुझे सिर्फ मामूली बुखार ही तो है."

"जी, वही—"

"और मैं अपाहिज नहीं हूं"

"जी, अपाहिज नहीं हैं"

"तुम्हें—आपको जाना है, जाइए चिन्ताकी क्या बात है? और इनको भी—"

"जी मैं जाऊंगी तो उसमें आपको वास्ता नहीं है आप आरामसे लेटे रहिए."

जितेनके मनमें क्रोध उठ रहा था वह अपने ऊपर किसी कृपाको बर्दाश्त नहीं कर सकता था. लेकिन मिथिला नामकी नर्सकी उपस्थिति जो अपने काममें इतनी दत्तचित्त थी कि उसे इधरका तनिक ध्यान न था, उसे बांधे रख रही थी. नहीं तो जाने वह क्या कर डालता.

अन्तमें घुमघुमाकर धीमेसे उसने कहा "कहां जा—"

"कहीं जाऊं, तुम्हें—"

"पार्टीमें जाओगी ?"

"जहन्नुममें जाऊंगी."

"देखिए," मोहिनीने कहा, "आपने देर लगा दी और मैं पूरी तरह शृंगारीका वक्त न पा सकी. अब ऐसे ही जाना पड़ रहा है !" कह-कर मुसकराई.

जितेनने मुस्कराहट नहीं देखी. चेहरेसे नीचे उतर आकर उसकी दृष्टि खुली ग्रीवापरसे होकर खुले वक्षोत्तर भागतक फैले उस कण्ठेपर गड़ गई थी जिसका रंग था तो सफेद, पर नहीं जानता कि वह कैसा सफेद था. उसमें कभी गुलाबी तो कभी बैंजनी आभा आ झलकती थी. रंग उन मोतियोंका एक नहीं था, मानो हर मोतीमें अनेक रंग एक जगह हो गए थे. आकारमें कैसे क्रमसे वे गुंथे हुए थे !

उस दृष्टिपर मोहिनीको अपने शरीरका चेत हुआ. उसने जरा अपनी माला छुई. कहा..."ये मोती हैं, देखोगे ?"

जितेनने आश्चर्यसे कहा—"मोती !"

मोहिनी बोली—"लौट आऊं तो देखना. अभी जल्दीमें हूं. देखना, जल्दी सो मत जाना. लौटकर यहां आऊंगी तो,....ऐसे क्या देखते हो ?"

जितेनने निगाह हटाई और आवाज दी "नर्स, दवाका वक्त—"

नर्सने कहा—"अभी तो देर है."

"देर क्या है, कुछ नहीं—"

मोहिनी जैसे उसके लिए वहां हो ही नहीं ! यह भांपकर मोहिनी ने कहा – "दवा मैं ही देकर जाती हूं. लेकिन, देखते हो, जानेको खड़ी हूं. और यह लो हार्न भी आ गया ! बाइ-बाइ !"

कहती हुई मोहिनी मानो तैरती-सी वहांसे चली गई.

जितेनने जैसे कुछ नहीं देखा. लहराती उन साड़ीकी परतोंको जिन्हें आंखोंने दिखाया उसने नहीं देखा. उन परतोंकी लहरमेंसे होती हुई मरमराहटकी ध्वनिको, जिसे कानोंने सुनाया, उसने नहीं सुना.

उसने जोरसे कहा--"लाओ, देती हो कि नहीं दवा ?"

७

दवा आदि देनेके बाद अवकाश निकालकर नर्स जितेनकी अनुमतिसे साढ़े आठ बजेके लगभग कमरेसे चली गई. जितेन अकेला रह गया और वह इन्तजार करने लगा कि मोहिनी पार्टीसे लौटकर अब आती होगी, अब आती होगी. इस बार उससे साफ-साफ कहना होगा. कहना होगा कि वह अपनी गृहस्थीके कर्तव्योंमें रहे, उसके अपने कारण उसमें विघ्न न उपस्थित होने पाए. वह अबसे सख्त होगा और बुखारको भी काबूमें रखेगा. बीमारी अच्छी चीज नहीं. वह गलती है. कामवालोंको बीमारीका हक नहीं है. पांच-सात रोजमें मुझे ठीक हो जाना चाहिए. हठात् खींचकर उसने दिमागमें इधर-उधरकी बातें लीं—उस कामकी बात जो उसने अपने हाथमें ले रखा था, और इसी तरहके छोटे और बड़े दूसरे अपने दायित्वोंकी. पर जितेनने देखा कि नौ बज गए, लेकिन मोहिनी नहीं आई. मालूम हुआ कि समय उसके लिए कीमती है जीवनकी भी कीमत है. साढ़े नौ भी हो गया. कोई नहीं आया. लोग घरमें रहते हैं और सुख-भोगमें रहते हैं. लेकिन दुनियामें समस्याएं हैं और विकास हो रहा है. आदमी को आगे बढ़कर क्या उसके क्रममें योग नहीं देना है? दस बजने आया, जितेनने इधर-उधर देखा. क्या कहीं कोई खटका नहीं हुआ? ऐसा तो नहीं कि मेरी आंखें झपक गई हों, कोई आया हो और झांककर उन्हीं पांवों लौट गया हो. लेकिन उसने अपनेको कसा और अपने भीतर संकल्पका निर्माण किया. उसे उठना होगा और करना होगा. इतनेमें पैरोंकी आहट हुई और जितेनके कान उधर जा लगे. दरवाजेपर कोई आया. वह क्षणके लिए चौकन्ना हुआ. चादर ऊपरकर जल्दीसे परली तरफ कर-

ट लेकर पड़ रहा.

नर्सने आकर घड़ीकी ओर देखते हुए बेहद मीठी और हल्की बोली ं कहा—"क्या आप सो गए?"

जितेनमें भभककर कुछ उठा, लेकिन उसने अपनेको रोका, और रह वैसा ही सोया पड़ा रहा. नर्सने हल्केसे बुदबुदाते हुए अपने ही से कहा—"नहीं, मैं जगाऊंगी नहीं; सो गए हैं"

क्षणभर जितेन वैसे ही लेटा रहा. फिर जब नर्सके जूतोंकी एड़ियों की आवाज उसके कानोंने स्पष्ट ग्रहण की तो मानो एकाएक चौंककर वह बोला--"क्या है ? कौन ?"

नर्सने पास आकर धीमेसे कहा--"कोई नहीं, मैं हूं—"

"क्या चाहती हो ?"

"शायद मैंने डिस्टर्ब किया, माफ कीजिए, जरा टैम्परेचर—"

जितेनने उसके हाथसे थर्मामीटर झपटकर मुंहमें लगा लिया.

समयपर फिर उसे निकालकर वापिस देते हुए कहा "यह लो और अब डिस्टर्ब न करना. मैं सोऊंगा."

थर्मामीटर हाथमें लेकर उसे देखती हुई मिथिलाको वह देखता रह गया. पूछा—"क्या है ?"

हाथसे थर्मामीटर झटकते हुए मिथिलाने उत्तर दिया—"कम है, डेढ़ है."

"यही तो," मरीजने कहा—"मुझे कुछ भी नहीं है और मिसेजसे कहना—सब ठीक है और वह कष्ट न करें. सुना, उन्हें किसी तरहका कष्ट करनेकी जरूरत नहीं."

"जी—"

"सवेरे ही कह देना, या जाओ अभी कह दो. आ गई होंगी पार्टीसे."

"जी—"

"— — — — ?"

"जी."

"आ गई हैं—तो जाकर कह आओ, मैं बड़े आरामसे सो रहा हूं."

"जी."

"अच्छा, पंखा कम कर दो. लाइट भी आफ कर दो...तुम कहा रहोगी ?"

"अभी तो यहीं हूं."

"सोओगी कहाँ ?"

"पास ही बराबरमें कमरा है. घण्टी—"

"तो जाओ, सोओ"

"अभी तो—"

"तो रोशनी रहने दो." कहकर जितेनने करवट ली और वह सोने की कोशिश करने लगा.

नर्स बाहर जाकर एक उपन्यास ले आई और कुर्सीमें बैठकर पढ़ने लगी.

जितेनके मस्तिष्कमें तेजीसे एक-पर-एक लपकते हुएसे विचार घूमते रहे. वह उन्हें पकड़ नहीं पाता था. उन्हें अलग अलग नहीं कर पाता था. लेकिन वे विचार नहीं थे, उनका कोई आकार नहीं था; उनपर रेखाएं नहीं थीं. रूप था, पर वह बनता नहीं था कि मिट जाता था. अनेकानेक रूप आपसमें गुथ-मिथकर अपरूप बन जाते थे, और सिरमें दर्द पैदा करनेके सिवा और कुछ न कर पाते थे. पाच-सात मिनट इस तरह पड़े रहकर सहसा उसने कहा—"नर्स!"

नर्सने मुंह ऊपर किया—"जी !"

"कष्टके लिए माफ करना, वह उस अटैचीमें से पैड तो देना, और लिफाफा भी होगा स्टैम्प्ड. धन्यवाद !"

नर्सने कहा—"खत सवेरे लिख लेते, अभी तो आराम—"

"तुम बडी दयालु हो नर्स ? दो लाइन लिखनी हैं—"

कागज पाकर उसी वक्त जितेनने एक खत लिखा. लिखकर पूछा—

"लैटर-बक्स कहीं करीब होगा ?"

"सवेरे क्या नहीं डल सकेगा ?"

"कृपा होगी नर्स, बुलाकर दरबानको दे देना."

अपने हाथोंसे खतको बन्द करके पता लिखकर नर्सकी ओर बढ़ाया. वह जैसे कुछ देर दुविधामें रही. लेकिन फिर उसने पत्र लिया और वह उसी समय लैटर-बक्समें डल भी गया.

सवेरे मोहिनी नहीं आई, दोपहर भी नहीं आई. तीसरे पहर चार, साढ़े-चार तक नहीं आई तो हठात् जितेनको अपनेसे सन्तोष हुआ. नर्स से कहा—"तुमने कह दिया था न ? चलो, अच्छा हुआ. देखो, तबियत सम्हलती ही जा रही है. आज इस वक्त भी डेढ़से ऊपर नहीं है."

"जी—"

"सुनो, क्या किताब है जो तुम पढ़ रही हो ?"

"जी, कुछ नहीं—"

"हां, तुमने कहा, तो उन्होंने क्या कहा था ?"

"जी ?"

"—उन्होंने फिर क्या कहा था ?"

"मैंने—वह काममें रहती हैं. मुझसे माफी मांगनेको कहा है कि दो-तीन रोज शायद न आ सकें."

जितेनको सुनकर बुरा मालूम हुआ. कहा—"तुमने कहा नहीं कि उनके आनेकी आवश्यकता नहीं है ?"

"नहीं तो—"

"क्यों ?" जितेन जोरसे बोला, "नहीं कहा?...अच्छा खत डल गया था ?"

"दरबानने डाल दिया होगा."

"कृपया मालूम कर लीजिए. और—धन्यवाद !"

दो-तीन रोज गुजर गए. मोहिनी शुरूमें घबरा गई थी. बुखारके उपलक्ष्यसे जाने कल्पनाने क्या चित्र उसके मनमें उठा दिए थे. अवस्था को वह भयंकर समझने लग गई थी. पर समय बीतते उसने देखा कि

बात बडी नहीं है. पहले दिनका अपना व्यवहार भी उसे दूसरा दिन आने पर कुछ अतिरंजित और अस्वाभाविक जान पडा. पार्टीमें वह कुछ देरमें लौटी. पर लौटनेपर यह भी सच है कि उसे बहुत ध्यान नहीं रहा था. वहाके आमोदप्रिय संग-साथने उसे किसी और ही दुनियामें पहुंचा दिया था. वहांसे आई तो उसने अपनेको थका हुआ अनुभव किया था. आकर उसे विश्रामकी आवश्यकता मालूम होती थी. दिनका कोई कर्तव्य अधूरा है, इसकी उसे सुध न थी. रातके बाद सवेरा होने पर उसे नर्समे रिपोर्ट मिली कि तबियत सुधारकी राहपर है इस पर अत्यन्त तुष्टभावसे वह अपने नित्यप्रतिके कामकाजमें लग रही. नर्सपर छोडकर अब मरीजके प्रति अतिरिक्त चिन्ताको उसने अपने लिए जरूरी न समझा

सच यह था कि इस नए परिच्छेदको मोहिनी अपनी जीवन-पुस्तकके अनुक्रममें नहीं देखती थी. यह प्रक्षिप्त है, आकस्मिक सयोगसे हो गया है. वह इस आदमीके उस नामका पता पा गई है जिसे बडा अपराध गिना जाएगा, जिसकी खोज-खबरके लिए सारा सरकारी कानून और सरकारी न्याय व्यग्र हुआ रहेगा—इस योगायोगको जैसे वह अपने जीवन से तनिक भी सम्बद्ध नहीं देखती वह एक ऐसी जानकारी है जिसे जानना जरूरी नहीं वह किसी तरह भी उसके साथ सगत नहीं है. पति के प्रति अपने विश्वास या अपने प्रति पतिके विश्वासको बनाए रखनेके लिए इस अपने ऊपर आ पडी जानकारीको उनके साथ बाटकर चलाना होगा, यह यदि उसे कभी आवश्यक लगा था तो अब नितात व्यर्थ लगता है. अब सोचती है कि वैसा मैंने सोचा ही क्यों वह उस ओरसे मानो निश्चिन्त हो रही. अपनी पारिवारिक और सामाजिक व्यस्तताओंमें दत्तचित्त हो गई उधरके लिए नर्स हो गई है तो जैसे वह स्वयं निवृत्त है. जैसे अनिमन्त्रित, अनावश्यक, आरोपित एक कर्तव्य हो, एक बेगार हो जो टली ही भली इस भावमें वह तीन रोज [illegible] बाजार से गा इसमें जोर पडा, लेकिन उसने महसूस नहीं कि

चौथ दिन वह जितेनकी तरफ गई. इस बार इरादेके साथ आई जितेनकी तबियत साफ तो नहीं थी, पर काफी सम्हली हुई थी. ने देखकर कहा—"आइए."

मोहिनीने इसका उत्तर नहीं दिया. आते हुए बीचमें अटककर नर्स बोली..."मिथिला तुम जाओ, जरा आराम कर लो."

मिथिलाने क्षण-भर ऊपर देखा. लेकिन अपनी बात कहकर बिना उसकी ओर देखे मोहिनी आगे बढ़ गई थी. इसपर मिथिला चुपचाप बाहर चली आई.

जितेन अपनी बातको उत्तर न पाकर क्षुब्ध था. मोहिनीके पास आनेपर बोला—"आई हैं आप, आइए ?"

"धन्यवाद, तबियत कैसी है ?"

"ठीक ही है, लेकिन—"

कहते-कहते मोहिनीकी ओर देखता हुआ जितेन चुप रह गया.

"कहिए, क्या कह रहे थे ?"

"आप—क्या बात है ?"

"सुनती हूं, आपके कोई मुलाकाती आए थे. क्या यह सच है ?"

जितेनकी भौंहोंमें वक्र आया, बोला—"जी."

"लेकिन आपको हक नहीं—"

सुनकर जितेन एक क्षण चुप रहा, फिर बोला—"मैं कैदी हूँ ?"

कुर्सीपर आगेकी ओर सीधे होकर मोहिनीने कहा "आप बीमार थे, बीमार हैं, वह अलग बात है; लेकिन अपने साथियोंको यहां बुलानेकी हिम्मत आपको कैसे हुई? आइन्दा ऐसा न हो, यह कहनेके लिए मैं आई हूं. आपको खयाल नहीं है यह घर किसका है ? मोहिनीका है, ठीक है; लेकिन औरोंका भी है. उनका पहले है, और उनके कारण मेरा है. यह सीधी-सी बात आप नहीं समझेंगे, ऐसा मैं जानती तो—"

"कुछ बिगड़ा नहीं है," जितेनने कहा "आज भी वह हो सकता है इजाजत दें तो मैं आज ही जा सकता हूं."

"कहाँ जाइएगा ?"

"शायद इस घरके बाहर भी दुनिया है."

"यानी यह नहीं हो सकता कि आप यहीं मुलाकातियोंको न बुलाएं ?"

"क्यों यह होना चाहिए ? इसलिए कि आपके घरकी रक्षा हो ?"

मोहिनीने स्थिर दृष्टिसे जितेनको देखा, कहा—"क्या मैं यह समझूं कि आप यह घर मिटाना चाहते हैं ?"

उस स्थिर दृष्टिको जितेन देखता रहा. उसने मोहिनीकी बात को सुना पर उसको समझ न सका. जाने किस भावसे मोहिनीकी ओर देखते देखते वह जैसे भीतरसे एक साथ ढीला हुआ. अबतक माथा उठ आया था, अब जरा सहारा लेकर लेटते हुए उसने कहा —"मोहिनी तुम जानती नहीं, यह चाहनेकी बात नहीं है. हमारे तुम्हारे चाहनेसे क्या होता है ? न चाहनेसे भी कुछ नहीं होता. मैंने कहा न था तुमसे कि जाओ, मुझे पकड़वा दो. आज तुम यह कर सकती हो. तुमसे कहता हूं कि लो आओ, मुझे मिटा दो. तुममें हिम्मत नहीं है तो मैं क्या करूं. लेकिन मोहिनी, एक को मिटाना होगा. इसमें मैं या तुम कुछ नहीं कर सकते .. मुझको न मिटाओगी तो अब कहता हूं कि तुम्हारा घर मिटेगा. यह तुम्हें सूझी ही क्या कि मुझे शरण दे बैठीं ? मेरी तो होशियारी थी कि मैं यहाँ आया, पर तुम क्यों होशियार नहीं हो गयीं ? तो सुनो, उसने ही मैं तुम्हारा घर मिटना शुरू हो गया !"

"चुप रहो," मोहिनी जोरसे बोली—"जरा समझते हो कि फिर पकड़नेकी ठान ली ?" और फिर धीमेसे बोली—"भगवानके लिए जरा धीमे बोलो." कहकर उठी और दरवाजा अन्दरसे बन्द कर आकर, बोली—"तुम्हें खयाल नहीं है कि नर्सें बरामदेमें होंगी ?"

जितेन सुनकर और ढीला हो आया. वह तकिएपर सिर डालकर सीधा लेट रहा, बोला—"हां, मोहिनी मुझे खयाल नहीं रहता."

मोहिनी आकर कुर्सीपर नहीं बैठी. सिरहाने पलंगकी पाटीपर ही टिक गई और बोली—"सुनो, अबसे किसीको मत बुलाना. देखो, इधर, मेरी तरफ देखो. कहो, अब किसीको नहीं बुलाओगे."

जितेन नहीं मुड़ा. वह ऊपरकी ओर देखता रहा और बोला नहीं.

मोहिनीने कहा—"इस घरकी ही बात नहीं, तुम्हारी भी बात है. तुम तो पड़े हो, मालूम है बाहर क्या हो रहा है? बेहद दौड़-धूप है और मालूम हो चुका है कि गाड़ी गिरी नहीं, गिराई गई है."

जितेन सुनता हुआ ऊपर ही देखता रहा, जैसे यहां नीचे किसीमें उसे दिलचस्पी न हो.

"सुनो, कौन था जो आया था ?"

जितेनने उत्तर नहीं दिया.

"और आया कैसे ? खबर लगाकर, या तुमने खबर दी ?"

जितेन ऊपर देख रहा था. वहां छत न थी, कुछ और था. छत मिट गई थी, जैसे खुल गई हो, और वहां अनन्त आ घिरा हो. उस अनन्त अगाध शून्यके पटपर ही मानो कुछ उसे दीख आया था. उसे देखते-देखते अनबूझ भावसे वह मुस्कराया, जैसे वह जहां था वहां था ही नहीं !

"सुनो, सुनते नहीं हो ? (जितनकी कनपटी थामकर) इधर...हां, अब कहो."

जितेनका मुंह मुड़ा. उसकी आंखोंने भी जैसे अब देखा. उसने अंगुली उठाकर संकेतसे कहा कि उधर कुर्सीपर बैठो.

पहले तो जितेनके चेहरेपर उन दृष्टिहीन आंखोंको देखकर मोहिनी स्तब्ध हो आई. जैसे उसके पीछे कोई व्यक्ति नहीं; विक्षिप्त हो. फिर उन आंखोंमें सहज दृष्टि लौटती देख उसे ढाढ़स हुआ. संकेत पर वह सहज भावसे उठी और कुर्सीपर आकर प्रतीक्षामें हो रही.

जितेनने कहा—"तुम उस दिन नहीं आई थीं, मोहिनी ! उस दिन तुमने कण्ठा पहना था. कण्ठा मोतियोंका था, था न ? मोतियोंमें बड़ी

श्राव थी, थी न ?...मोती सच्चे थे ?"

मोहिनी विस्मित-सी सुनती रही.

"सच्चे थे ? क्योंकि झूठे भी मोती होते है बताओ, सच्चे थे ?"

मोहिनी समझी नही. फीकी मुस्कराहटमे बोली—"और नहीं तो झूठे थे ?"

"मैं जानता नही, मोहिनी,.. कण्ठा कितनेका होगा ? दसका होगा, दस हजार ?"

"शायद. मुझे मालूम नहीं"

एकाएक जितेनने कहा—'हाँ, तुम क्या पूछ रही थीं मोहिनी ? वह कौन आया था? जो था अच्छा नही था. मेरे—जैसा था और बुरा आदमी था. चाहती हो नही आए ? कोई आदमी नही आए ?"

मोहिनीने जल्दीसे कहा—"क्या हो गया है तुम्हे ? हाँ, किसीको नही आना चाहिए"

जितेनने कहा,—"तुम इन दिनो नही आई कैसे आती, काम जो बहुत था मैं ऐसा बदकिस्मत कि काफी बीमार नही रहा तो किससे सिर मारता ? नर्स तुम्हारी मशीन है इससे एक साथीको बुलाया. लेकिन हो सकता है कि कोई न आए—"

"नर्स बदल दूँ ?"

"नहीं-नहीं-नही आनेवाले चोर हैं, डाकू हैं बोलो मोहिनी, चाहती हो, वे न आयं ?"

मोहिनीने डपटमे कहा—"जितेन !—"

जितेनने कहा—"कोई न आएगा..., कण्ठा दे सकती हो ?"

मोहिनी आख फाड़े रह गई

"नही दे सकती ?"

मोहिनी कुछ नही बोली

जितेन हस आया—"कण्ठा तुम्हे बहुत अच्छा लगता है उस दिन बहुत ही अच्छा लग रहा था. तुम ठीक हो मोहिनी, देना मत"

क्षमा करना, तुम्हें प्रतिदिन क्या मिलता है ?"

सिस्टरने जितेनको देखा, फिर झट आंखें हटाकर उसने मोहिनीकी ओर कीं, जैसे कि सचमुच यह बहक ही है. अपनी ओरसे यह कहकर वह मोहिनीसे समर्थन मांगती हो.

मोहिनीने कुछ देर मिथिलाको देखा, जैसे वह भी कुछ हदतक तो सहमत हो.

जितेनने कहा—"दस हजार उसका कितना गुना होता है ? बहुतसे लोग इस हिन्दुस्तानमें रोटी भी नहीं पाते. छह पैसे दिनकी औसत आमदनी भी यहांकी है कि नहीं, मालूम नहीं. दस हजारमेंसे कितने छह पैसे निकल सकते हैं, यह गणितका सवाल है और मुश्किल नहीं है. श्रीमती जी, यह सादे भागका सवाल है. आप, मैं समझता हूं, उत्तर निकाल सकती हैं. सिस्टर तुम भी निकाल सकती हो...."

मोहिनी कुछ देर स्तब्ध भावसे खड़ी सुनती रही, सुनती रही, फिर आगे आकर कुर्सीपर बैठती हुई पलंगकी पाटीपर एक हाथ रखकर कुछ झुकी-सी बोली—"हार लाऊं ? देखोगे ?"

जितेनने आंखें ऊपर उठाकर मोहिनीकी ओर देखते हुए कहा—"क्यों ?"

मोहिनी बोली, "कोई खरीदेगा तब उसके पैसे बनेंगे. खरीदकर क्या करेगा ? पहनेगा, या रखेगा. काम पैसा आता है. ऐसी चीजें तो सदा शौककी रही हैं और शौक पूरा करनेके लिए पैसा बिखराना होगा. दस हजार हमसे बिखर चुका होगा, तभी तो हार हमारे यहां आया होगा...पर छोड़ो. मंगाऊं ?"

जितेन सुनकर मोहिनीको देखता रहा, बोला नहीं. मोहिनीने मुड़कर नर्ससे कहा—"मिथिला, डा० कपूरको फोन कर तो, जरा आ जाएंगे." फिर मुड़कर जितेनसे बोली—"सच कहो, तुम हार चाहते हो ?"

जितेनने एक क्षण भरपूर आंखोंसे मोहिनीको देखा, फिर कहा—"तुमने डाक्टरको बुलाया है यही समझकर न कि मैं विक्षिप्त हो रहा हूं?

फिर क्यों पूछती हो ?"

"मालूम नही," मोहिनीने कहा, "मैं क्या सोचती हू और क्यो सोचती हू जितेन, तुम्हें साधारण होना चाहिए."

"और असाधारण पागल होते है !" कहते हुए जितेन हंसा. फिर बोला, "तुम लोगोंके पास पैसा इफरातसे रहता है, कुछके पास रहता ही नही. और कुछ है जो 'है'—'नही' इन दोनोंके बीच रहते है वे, बताओ, क्या करे ? समझदार होगे तो उनके लिए एक ही काम है, है से नहीकी ओर पैसेको भेजे. ऐसे मगर थोडे ही है. उन बिचभइयोंमें ज्यादा वे है जो नही वालोमें से और कस निकालकर हा वालोकी तरफ भेजते रहते है यह सब तुम जानती हो, पर शायद भूलना पसन्द करती हो. तुम्हे कोई दिक्कत नही होगी, अच्छा है पागलखाने भेज दो. तुम्हारा मन सम्हला रहेगा कि बला भी टली और तुम्हे कुछ करना भी नही पड़ा तुम लोग होशियार हुआ करते हो. दीन भी रखते हो, दुनिया भी ऐसे तुम्हारा भगवान् भी रह जाएगा और ससार भी रह जाएगा"

मोहिनीने डपटकर कहा—"जितेन !"

जितेन एक क्षणके लिए चुप रहा, फिर बोला —"मोहिनी सच कहता हूं, रुपएकी जरूरत है"

"और समझते हो, मुझसे पा सकोगे ? याद रखो, मैं उसी वर्गकी हू जो हृदयहीन है न सिर्फ यह कि तुमको तुम्हारे कामके लिए एक पैसा यहासे नही मिलेगा, बल्कि यह भी कि अगर कोई तुम्हारा साथी यहा आया, चाहे वह किसी कामके लिए हो, तो मैं उसकी कुशलकी जिम्मेदार नही हूं."

"निकाल दोगी उसे ? पकडवा दोगी ?"

"हा निकलवा दूगी, पकडवा दूगी"

जितेन सुनकर कुछ देर खोया-सा रहा, फिर जैसे आग उसकी आखो में आई; बोला—"मोहिनी !"

जितेनने स्थिर आंखोसे उसे देखा

जितेनको जाने क्या हुआ. बोला—"तो यह कृपा अभी ही क्यों हीं कर सकती मोहिनी ? मैं छुटकारा पा जाऊंगा."

"चुप रहो !" मोहिनी बोली, एक बात पूछूं ? तुमने मोती पहले हीं देखे ? हीरे-जवाहर कुछ नहीं देख ?"

"ना, नहीं देखे ."

"वे पत्थर होते हैं, पर बड़े खूबसूरत ! देखोगे ?"

जितेनने इतना ही कहा—"मोहिनी!"

"पत्थरोंसे बच्चे खेलते हैं, लेकिन अमीर भी खेलते हैं. यह जरूर है कि ये पत्थर होते सुन्दर हैं. बाकी सुन्दरता हम उन्हें दे देते हैं अपनी तृष्णा और कलासे. और तुम हो कि..."

जितेनने जोरसे कहा—"मोहिनी !"

"लो," मोहिनी बोली, "तुम मानोगे नहीं, अच्छा बाबा, ले आऊंगी, पर मेहरबानी करके वर्ग-भेदके झगड़ेका नजला मुझपर न उतारा करो. बड़ा ऊपरी लगता है. मैं क्या वही मोहिनी नहीं ? या तुम और हो गए हो? फिर सीधे साफ कह दिया करो, जो हो. धन मेरा नहीं है, मन कुछ मेरा है. कुछ इसलिए कि किसीका मन कभी पूरा अपना नहीं हुआ करता. उसे आसपासके और मनोंके साथ होना होता है..."

जितेन सुन रहा था, जैसे उसपर गाज पड़ रही हो. उसने कहा—"दो-एक रोजमें मैं समझता हूं मैं यहांसे जा सकूंगा. अब तो ठीक ही हो गया हूं."

"डा० कपूर आ तो रहे हैं, उनसे पूछ लेंगे."

इतनेमें नर्स आई. मोहिनीने कहा—"फोनमें बड़ी देर लगा दी मिथिला !"

"डा० आपरेशनमें थे."

"क्या कहा ?"

"तीसरे पहर आ सकेंगे."

"अच्छा, देखो मिथिला, तुम्हारे मरीजको चलनेकी इजाजत है ?

मैं समझती हूं, थोड़ा-बहुत टहलनेसे नुकसान न होगा."

"जी नहीं."

"क्या, नुकसान होगा ?"

"जी नहीं."

"नहीं होगा न ?" मोहिनीने कहा, "आइए, अपनी लायब्रेरी तक आपको ले चलूं. क्यों मिथिला ले जाऊं ? वहांसे ले आइएगा जो किताबें आपको पसन्द आएं. खाली यहां क्या करते रहते होंगे ?"

मिथिलाने सीधी स्वीकृति न दी, न इन्कार ही किया. लेकिन चेहरे पर जो था उसे उल्लास नहीं कह सकते, इन्कार वह भी लो.

"अच्छा, तेरी बात सही. कपूर साहबको आ जाने ही दें, साफ पूछ लेंगे...कुछ किताबें भिजवा दूं ? क्या भेजूं, नावेल?"

जितेन बोलना नहीं चाहता था, लेकिन कहना पड़ा—"हां."

"बीबी जी! "लड़केने आकर आवाज दी तो मोहिनीने मुड़कर देखा.

"साहबने याद किया है, बीबीजी !"

"साहब आ गए ? कब आए ?"

"अभी आए हैं, बीबीजी !"

मानो जाते-जाते वह ठहरी, बोली—"कहना अभी आती है."

यह कह तो गई, पर यहां उसे कुछ काम न था मानो वह सिर्फ पत्नीत्वकी प्रतिष्ठामें पतिके पतित्वके प्रति कहा गया था. जाना उसे था, पर यह क्या चीज है कि आते हैं और साथ-ही-साथ हुक्म आ जाता है.

बोली—"मिथिला, डाक्टरने तीसरे पहर कब, ठीक किस वक्त आनेको कहा है ?"

"राउण्डमें कभी, सवा तीन साढ़े तीनके बीच ."

मोहिनीने सुना नहीं. मरीजके पास आकर पूछा—"इजाजत है?"

मरीजने कहा—"थैंक यू ?"

"आइए-आइए" नरेशने मोहिनीके कमरेमें प्रवेश करते ही कोचसे उठकर कहा,—"आनेकी कृपाके लिए धन्यवाद !"

कहकर अत्यन्त अभ्यर्थनापूर्वक दोनों हाथोंसे मोहिनीको सोफाकी ओर पधारने और विराजनेका संकेत किया.

मोहिनीने कहा—"वड़े वैसे हो ? एक मिनट सब्र नहीं होता ?"

"जी, कैसे हो सब्र ? फरमाइए, हमारे रकीव साहवका क्या हाल है."

मोहिनी मुस्कराई, बोली—"बहुत कामयाव हाल है."

"क्यों साहव, तो हमे नाकाम रखिएगा ?"

कहकर कोट उतारा और अलग फेंका. टाई झटकेसे खोलकर ढीली की और पैर फैलाकर आरामसे कोचमें हो वैठा. कहा—"तशरीफ रखिए साहव आप भी..."

मोहिनी सोफेपर न वैठकर कोचके वाजूपर ही आ वैठी, बोलीं—"आज जल्दी आ गए, क्या वात है ?"

"वात और क्या, वेसब्री. मैंने सोचा चलो कमरेमें चलें. फिर खयाल आया कि दोकी वातोंके वीच आना शरीफका काम नहीं...भई, आज हद गरमी है !"

मोहिनी वोली—"गरमी है !"

"मैं वाहरसे आ रहा हूं, शायद इसलिए...सुनो, आपके हजरत कव तक हैं यहां ?"

"अव तो उनकी तवियत काफी ठीक है."

"क्यों मोहिनी, तुम जानती हो इन्हें, अच्छी तरह जानती हो ?"

"हाँ-हां, खूव अच्छी तरह जानती हूं. क्या वात है ?"

"वात कुछ नहीं. वह रेल उलटनेका किस्सा था न, उस रोज मैं तुमसे कह भी रहा था. पुलिसका खयाल है कि असली आदमी यहीं शहर में कहीं है. वह है न चड्ढा एस० पी ! अभी वार-रूममें पूछ रहा था कि आपके यहाँ वीमार कौन हैं ? मैंने कहा, कोई नहीं, एक साले साहव हैं.' पूछने लगा, 'क्या वीमारी है ?' मैंने हंसकर कह दिया कि जवावके लायक नहीं जानता, डाक्टरसे पूछकर वता सकूंगा.

बोले—'साले साहबमें इस कदर आपकी दिलचस्पी है ?' मैंने हँसकर टाला कि उनकी हमशीरासे बाहर दिलचस्पीका मेरे लिए बायस नहीं है. बात आई गई हुई, लेकिन कुछ देर बाद उसने कहा—'कहिए बैरिस्टर साहब, वायदा पुराना है, चायकी कब ठहरेगी ?, मैंने कहा—'हर रोज और हर वक्त चायका है और आपका है. कभी आइए.' बोले—'जी हाँ, मुलाकात भी हो जाएगी और अभी तो साले साहब भी हैं. बहन-भाई दोनो मिल जाएंगे.' आदमी वह चड्ढा इस कदर नाग-वार है कि अब यह बताइए कि यह साहब कब टलेंगे ?"

मोहिनीने कहा—"पूरी तरह आराम हुए बिना वह कैसे जा सकेंगे, और तुम्हीं कैसे जाने दोगे ?"

"सो तो है ही, .. खैर छोडो"

"चड्ढा पहले तो यहा कभी आए नही !"

"हा, अभी उन्हे नया ही समझो. शहरमें दो साल हुआ होगा. बाबूजीका अदब करता है. पर इधर रब्त-जब्त बढ़ा नही. कोशिश कर निकला है."

"होगा, छोडो भी. यह बताओ, तुम उधर गए थे जौहरीके यहा ?"

"जौहरीके ? क्या मुझे अकेला जाना था ?"

"मेरा, तो तुम देखते ही हो, कहा निकलना होता है "

"जी नही, मैं वह सब कुछ नही जानता तुम्हारा ही हार बनना है—यह सब क्या बला होती है, तुम जानो. लेकिन तुम तो ख्याल छोड चुकी थीं, मैंने ही कहा था कि खूबसूरत चीज है और अगर मैं भूलता नही तो तुमने कहा कि तुम्हे म्यूजियम नही बनना है !"

"कहा होगा, पर पन्ना वह नायाब था. मेरे पास पन्नेकी चीज है भी नही."

"तुम लोगोंकी मत टेढी होती है, बाबा ! तुम जानो, बुला भेजना, ले आएगा वह चीज, देख लेना."

मोहिनीने कहा—"अभी कह दूं ?"

"तुम जानो, मुझसे क्या पूछती हो."

मोहिनीने उठकर उसी समय जौहरीको फोन कर दिया कि वड़े पन्ने वाले नगकी वह चीज लेता आए और अगर और भी कुछ हो तो दिखानेको ले आए. शाम तक, वल्कि तीसरे पहर."

मोहिनीने आकर कोट टाँग दिया और जूतोंके तस्मे खोलने लगी. नरेश पैर फैलाए उसी तरह वैठे रहे, कुछ वोले नहीं. जूते अलग रखकर वहांसे पैरोंमें स्लीपर डालनेके लिए लाती हुई वोली—"तुम रहोगे न उस वक्त !"

"किस वक्त ?"

"जव वह जौहरी आएगा."

"मैं ? मालूम नहीं कव आएगा ?"

"जव आ जाए."

"तुम औरतोंका काम जो ठहरा" नरेशने हँसकर कहा, "जव हो जाए ! जी नहीं, मेरा भरोसा न कीजिए. और इन मामलोंमें यों भी मैं गैरजरूरी हूँ. हम तो जनाव पैसेके वैल हैं, पैसेके लिए ही हमारी जरूरत है. वह काम, आप जानती हैं, हो ही जाएगा. या खुदा, कव होगी 'इकनौमिक इण्डिपेण्डेंस' कि हमारी गुलामी दूर हो ! स्त्रियांभी कमा सकें और मर्द भी खर्च सकें. अव तो कमवख्त मर्दको खर्चनेका अख्तियार ही नहीं. लाओ और सव वीवीके हाथमें दे दो. क्यों जी, कव आ रही है तुम लोगोंकी 'इकनौमिक इण्डिपेण्डेस' ? आने दो कि वीवी वनकर राज करना सव तुम्हारा हवा हो जाएगा. वस, टाइपिस्ट गर्ल वनके कमाना और मौज करना होगा."

"अच्छा-अच्छा" 'मोहिनीने कहा, "हो गया व्याख्यान, पर अपने सामने देख लेते तो अच्छा न रहता ?"

"तुम तो वकालत पास हो मोहिनी," नरेशने कहा, "सामने आकर करने लगो वकालत और फिर हम आपसे कहेंगे कि हीरेके वटन हमें

होती. विवाहको चार वर्ष हो गए हैं. यह चार वर्ष ऐसे बीते हैं कि क्षण बीता हो. उनके बीतनेका पता ही नहीं चला. इन बड़े-बड़े चार वर्षोंमें वह तनिक भी तो पुरानी नहीं हो सकी है. नरेश सोचते हैं तो उनको विस्मय होता है. विलायतके अपने जीवनको देखकर शायद ही वह मानते थे कि कहीं टिका जा सकता है. उनका जीवन वहां विशेष तो न था. जैसे सब थे वैसे यह थे. जो सब और था वही उनके साथ था. यानी परिवर्तन जीवनका नियम था. जीवन प्रेम है और प्रेमका भी नियम परिवर्तन हैं. पर प्रेम कहीं वह भी है जो स्वयं अपनेमें से परिवर्तनोंकी सृष्टि करता है और अपनेमें ही फिर उन्हें समाहित कर लेता है, यह सम्भावना उन्हें न थी. पर इन चार बरसों पर पीछे निगाह फेरकर देखते हैं तो पाते हैं कि जैसे अनहोना उनके साथ होता रहा है. लेकिन आज सहसा इस निरभ्र नीलाकाशमें से, अहेतुक और निर्मूल, क्या कोई बादल आया चाहता है ? उन्होंने अपने सारे मनको टटोल डाला. कहीं कोई धब्बा नहीं पकड़ पाए. पर स्याह बादल भी स्याहीमें से तो नहीं बनते. फिर कैसे, कहांसे स्वच्छता में से भी वह बन आते हैं !

"हैं ! अरे, क्या हुआ है तुम्हें ?" मोहिनीने हाथके ट्रेको मेजपर रख देनेके बाद कहा. "देखो, चाय आ गई."

नरेशने कहा—"भई, वह तुम्हारा क्या होता है? हां, तुरीय लोक! वहां पहुंचा हुआ था. वहांसे चाय तक गिरनेमें क्या कुछ भी समय नहीं देना चाहतीं ?"

"ओ हो ! तो किसके साथ वहां घूम रहे थे ? मोहिनी तो यहां चायकी पाताल भूमिकापर थी !"

"एक कोई सम्मोहिनी थी, अब आंख खोलकर देखता हूं कि वह भी तो मोहिनी ही थी."

"आप तो कविता करने लगे. जनाब, ऐसे बैरिस्टरी कैसे कीजिएगा ?"

"तुम्हारी सम्मोहिनीमें बैरिस्टरी जाती रहे तो वह घाटेकी बात नहीं. सुनो, हमारे रकीब साहब—अजी, बिगडिए नही, रफीक साहब अब तो भले-चंगे हैं न. चायपर न आ सकेंगे ?"

मोहिनीने सुनकर पतिकी ओर देखा.

पतिने कहा—"उन्हे बुलवा न लिया जाए, क्यों ?"

"अभी तो—"

"अभी तो कहती थी, साम अच्छे हैं. नई, जाओ देखो."

" तो कहूं किसीसे कि बुला लाए ?"

"कहोगी क्या, जाके साथ ले क्यों नही आती ?"

मोहिनीने घण्टी बजाई.

नरेशने कहा—"क्यों, यह क्या ?"

मोहिनी गम्भीर रही, बोली नही और आदमीके आनेपर उसने कहा—"देखो, मेहमानके कमरेमें जाकर कहो कि साहब चायपर है और आपको याद करते हैं. आएं तो उन्हें यहा ले आओ."

आदमीके जानेपर नरेशने कहा—"मोहिनी !"

मोहिनीकी भौहोंके बल कम नही हुए और अपने हाथो तैयार होते हुए प्यालोंसे निगाह उसने ऊपर नही उठाई

नरेशने कहा—"तीसरा प्याला ?"

मोहिनीने जैसे सुना नहीं

"मोहिनी ! सुन नहीं रही हो क्या ?"

मोहिनीने कहा—"हो जाएगा "

नरेशने आगे कुछ नही कहा.

तभी आदमी आया. नरेशने नाराजीसे पूछा—"क्या है ?"

आदमीने कहा—"बोला है, शुक्रिया देना और बोलना कि एकाध रोजमें तबियत इस लायक हुई तो हाजिर हूगा; और सलाम बोला है."

नरेशने मानो डिस्मिस करते हुए कहा—"अच्छा !"

और मोहिनी चाय तैयार करती रही !

चायके वीचमें मोहिनीने पूछा—"क्यों, आज चुप क्यों हो ?"

नरेश वोले—"कुछ नहीं...तुम जातीं तो मेरा खयाल है मिस्टर सहाय आ सकते थे."

"सहाय !"

"क्यों मोहिनी," नरेशने कहा, "वताओगी कि तुम उनको क्यों नहीं ले आ सकीं."

मोहिनीने हलके तेवरसे देखा और वह वोली नहीं.

"जाने दो, शायद मिस्टर सहायको तुम इतने नजदीक नहीं चाहतीं. पर चायपर वैठनेमें ऐसी कोई वात न थी."

मोहिनी वोली—"क्या हो गया है तुम्हें ?"

जैसे हंसकर नरेशने कहा—"वह तुम्हारे पुराने मित्र दीखते हैं."

भरी-सी मोहिनी वोली—"हां, हैं तो; कहो ?"

"कहूं क्या !" नरेश खुली हंसीसे वोले. "जैसे अव मित्र कम मानती हो. मेरी वजहसे ?"

"हां, तुम्हारी वजहसे. वस ?"

"तुम नाराज हो गईं, लेकिन भई, नाराजीकी तो कोई वात है नहीं. अगर सौ फी सदी में तुम्हारा हूं तो एक फी सदी भी मुझे अतिरिक्त तुम गिनतीमें न लोगी. पर देखता हूं तुम लेती हो. क्यों जी, यह ठीक वात है ?"

मोहिनीने कहा—"आज कोई रेस हार-हूंर आए हो क्या ? शायद

इसीसे जल्दी आ गए हो।"

नरेश बोले—"तुम्हारा मित्र मेरा मित्र हो जाना चाहिए. भला बताओ..."

बीच हीमें मोहिनीने काटकर ईषत् स्मितसे कहा—"शत्रु क्यों नहीं होना चाहिए ?"

नरेश खिलखिलाकर हंसे—"शायद तुम यही मानती हो कि शत्रु हो जाना चाहिए ? पर ना बाबा, मेरे बसका वह काम नहीं है शत्रु मानना. क्यों जी, जाओ अब बुला लाओ"

हंसकर मोहिनी बोली—"चाय तो सब पी गए, अब किसके लिए बुलाके लाऊं ?"

"अरे !" चायकी केतलीको हिलाकर नरेशने कहा, "बड़ी वैसी हो तुम ! कितनी बार कहा है कि दोसे ज्यादा कप मुझे कभी न पीने दिया करो...तो सुनो, उधर ही चलें ?"

"नहीं."

नरेश जैसे उठने ही वाले हों कि रोक लिए गए हों, इस भावसे बोले—"क्यों ?"

मोहिनीने स्थिर भावसे पतिको देखा. फिर पूछा—"सच बताओ क्या सोचते हो ?"

"लो," नरेश बोले—"तुम गम्भीर हो गईं ? भई, मैं उस लायक आदमी नहीं. एक काम करो, यहां फोन लाना"

मोहिनीने देख लिया कि वह इनसे पार नहीं पाएगी. इनमें जैसे तल ही नहीं है कि थाह ली जाए. कुछ हो तो भीतर डूबकर उसे लानेकी कोशिश भी की जाए पर यहां तो निश्चय ही कुछ नहीं. उसने किंचित् झेंपते हुए कहा—"अभी अदालतसे आए हैं, अभी फोन रहने भी दीजिए."

"अरे लाओ तो. नहीं तो दो मन वजनको लेकर मुझे न जाना पड़े."

मोहिनी हंस आई—"तो मुझे तुमने हलकी समझ रखा है. चलो, हूं, तभी तुम्हारी हुकूमत चल जाती है."

कहती हुई उठकर वह फोन ले आई. नरेशने कहा—"मिलाना तो उस जौहरीसे."

"क्या !"

"अरे भई, उसके केसकी आज पेशी है. जानती हो न, उसका केस है !"

"तो लो, तुम मिलाओ."

"अरे मिलाओ भी."

मोहिनीने फोन मिलाया.

हैंगर अपने हाथमें लेकर नरेशने कहा—"कहिए लाला साहब, वह हमारी चीज कब लाइएगा ? अभी तो मैं यहां हूं, लेकिन सिर्फ दो घंटे. तबतक आप आ सकें या भेज सकें तो मैं भी देख लूं. जौहरी तो आप हैं और मैं कद्रदान भी नहीं हूं फिर भी.. जी अच्छा...हां, दो-एक चीजें साथमें और भी लेते आइएगा....लेना तो क्या है, पर देख तो लेंगे...देखिए साहब, घरमें हमारे अमन रहने देना है तो इन चीजोंमें देर न किया कीजिए —"

मोहिनीने झपटकर हैंगर पतिके हाथसे छीन लिया और फोनपर पटककर बन्द कर दिया. बोली—"यह केस है ?"

"केस ?" पतिने कहा—"उसकी बात ही तुमने कहां करने दी. अब डालिए साहब फिर दुअन्नी !"

"मैं पूछ सकती हूं, जनाबके अमनमें मैंने कौनसा खलल डाला है?"

"जरूर पूछिए," पतिने कहा, "लेकिन अपनी शक्लसे पूछिए मुझसे क्या पूछिएगा ? वह जवाब वहां लिखा हुआ मिलेगा कि—"

"चुप रहो." कहकर वह फोन अपनी जगह रख आई और लौटकर फिर ट्रे उठाकर ले गई.

जहां तक बने मोहिनी खुद ही काम करती है. नौकरको अपने और पतिके बीच कम ही आने देती है. शुरूमें यह पतिको पसन्द नहीं आया, पर मोहिनीका यह स्वभाव-सा था पिताके घरमें यही करती आई थी. अपनी मांको उसने देखा नहीं था, पर उस लोकमें जैसे आदि दिनसे वह भी यह करने लग गई थी. कर्तव्य था इस तरह नहीं. कर्तव्य तो याद रहता है, इससे भूला भी जा सकता है नहीं, कर्तव्यकी बात कुछ थी ही नहीं. सहज-सिद्धकी बात थी उसकी आंखों यह सूझा ही नहीं कि पतिको नौकरों पर छोड़ा जा सकता है नौकरोंपर छोड़ देनेमें बहुत-सी सुविधाएं हैं. शायद ऐसे आराम भी बढ़ाया जा सकता है. चूक हो तो डाट-डपट की जा सकती है. नौकर एकसे अधिक हो सकते हैं और तावेदारीमें रह सकते हैं. पत्नी एक अकेली जान होती है, और कभी इन्कार भी कर सकती है. वैसे भुवनमोहिनीकी अपनी सासे वर्जन कम न था कई चीजें मांगने पर भी यह पतिको न देती थी और कुछ अनिच्छा रहते भी साग्रह खिलाए बिना न मानती थी इसपर उनमें कुछ मीठा तनाव भी हो आता था, जो नौकरोंके कारण सम्भव नहीं हो सकता था. सिर्फ नौकर हो तो सब चुस्त दुरुस्त चल सकता है फिर उसमें अपनेको स्वतन्त्रता कितनी रहती है. नहीं तो निरी पराधीनता है कि हर वक्त राहमें रहो और हुजूरी बजाओ. पर इन सब सुविधाओंकी बात मांको नहीं सूझी मोहिनीको भी नहीं सूझी है अगर नौकर आता और ले जाता तो उसमें क्या समय न बचता और क्या उस समयको पतिके साथ किसी विधायक, रचनात्मक और उपयोगी चर्चामें न लगाया जा सकता ? पर पढ़ी-लिखी इस मोहिनीको यह छोटी-सी समझदारीकी बात समझ न आई. पतिने आरम्भमें एकाध बार गहेनसे समझाना चाहा कि छोटो भी, नौकर ले आएगा पर सफल सार्थक न हुआ. पति फिर चुप हो गए कुछ काल तो माना कि जैसे सस्कृति का प्रभाव है और सदय रहे फिर यह सस्कृतिका अभाव अपने आपमें उन्हें प्यारा लगने लगा और वह उसके नीचे बालक बनने लगे

मोहिनीके आनेपर सिगार मुहमें ले, पैर फैला, नरेश [illegible]

वश्रामका अनुभव करने लगे. जैसे वह घर आकर अपना सब-कुछ
वत्व खो रहते हैं और तृप्त अनुभव करते हैं. मानो यह उन्हें बड़ा
ीतिकर और विस्मयकर लगा. बाहर रौबदाब रहता है. डपटते हैं और
कूमत करते हैं. व्यक्तित्वमें एक कसावट रहती है और मान रहता है.
हां वह कुछ होते हैं. यहां बड़ी आसानीसे अनहुए हो जाते हैं और
वस्मय यह कि इस अनहोनेमें ऐसी सार्थकता अनुभव करते हैं कि कहा
हीं जा सकता. उनके मनमें मोहिनीके लिए क्या भाव है, समझ ही
हीं आता. जैसे कोई भाव नहीं है. या एक साथ सब भाव हैं. असल
में अलगसे कुछ नहीं है. वैसे मोहिनीसे डर भी रहता है. पर बेखटके
उसके आगे पैर फैलाकर उसकी टांगपर या कुर्सीकी गद्दीपर रख देनेमें
उन्हें सोचना नहीं पड़ता कि लो, खोलो तस्मे, और जूते उतारकर अपनी
जगह रख दो.मोहिनीके एक भ्रू-क्षेपपर कांप जाते हैं और उसकी किसी
भी बातको किसी भी समय कभी एकदम रद्द भी कर देते हैं. यह विरोध
उन्हें स्वयं ही पता नहीं चलता. जैसे पता चले जितना अन्तर ही उन्हें
नहीं मिलता.

मोहिनी आई तो उसने पूछा—"एक बात बताओ. जानते हो क्या
बजा है ?"

"बजा !" पतिने कलाई उठाकर घड़ी देखी. "सवा बारह बजा है."

बारह बजे चायका वक्त होता है ?"

जैसे अपराधी हो, पूछ बैठे—"चायका वक्त ?"

मोहिनीने हंसकर कहा—"तीन कप पी बैठे, अब खाओगे क्या ?"

"ऐं, तीन! कहा क्यो नहीं कि बारह बजा है और चाय नही पीना
चाहिए ? भई यह तो ठीक बात नहीं. लाईं भला क्यों तुम चाय ?"

"सब मेरी ही गलती है ना!" मोहिनी बोली, "आज खानेमें देर है.
महाराज बीमार हो गया और खबर देरसे लगी और मैं आपके मिस्टर
सहायके पास लगी रही."

"अरे भई, तो यों कहो. कह क्यों न दिया कि मैं फिर देरसे आता.

कामका हर्ज भी न होता."

मैंने बुलाया था न कि इतने पहले आ गए ! अब हो गया आपका कामका हर्ज ! सुनो, कहो तो ऊपर चलें सहायके पास ?"

"यह सम्भवन जौहरी न आता हो."

"तो वह भी आ जाएगा."

"फिर ?"

"हर्ज तो नहीं."

"पर तुम्हें अपनी कुछ पहली चीजें भी तो बतानी हैं जौहरीको. नमूनेका जोड़ देखना है और जाने तुम क्या चाहती थी ? पूरा वक्त ले चलना होगा."

"ठीक तो है आ जाने दो जौहरीको."

थोड़ी देरमें ही जौहरी आ गया. उसने नेकलेस दिखाया जिसमें बीच में बड़ा पन्नेका नग था. आसपास हीरेकी कनियाँ टकी थीं. नग प्लैटिनममें जड़े थे. और भी चीज़ें देखी गईं; जैसे जडाऊ चूड़ियाँ, ईयररिंग और जाने क्या-क्या.

देखी तो, पर मोहिनीमें उस समय उनके लिए विशेष रस न जान पड़ा. उसने सिर्फ नेकलेसके बारेमें इतना कहा कि बीचमें खालिस पन्ना होता, जरा बड़ा नग, तो ठीक था, चाहे हीरे आसपास उससे अलग होते, उसीमें जड़े नहीं.

"ऐसा भी हो सकता है मगर आप फरमाएं लेकिन चीज यह भी अपनी किस्मकी—"

लेकिन मोहिनीने बिना उधर ध्यान दिए पतिसे कहा—"अभी ऐसी क्या जरूरत है ?"

नरेशने कहा—"रायसाहबने इतनी मेहनतसे फरमायशपर चीज तैयार की है और तुम कहती हो कि—"

"क्यों रायसाहब," मोहिनीने जौहरीकी ओर मुंह करते हुए कहा—"खालिस पन्नेकी चीज़ कबतक तैयार हो जाएगी ? दाना जरा

बड़ा हो."

"हो जाएगी," राय साहबने अर्ज किया, "इससे बड़ा पन्ना जरा नायाब है. तलाश करना होगा. लेकिन हुजूर चीज यह भी—और फरमाएं."

नरेशने कहा—"रायसाहब, एक काम कीजिए, ये तीन चीजें यानी नेकलेस और वह रुबी और पुखराजवाली चूड़ियोंकी जोड़ी और वह बाला ईअर-रिंग छोड़ जाइए और इनकी वह चीज जितनी जल्दी हो सके, तैयार करा दीजिए. कीमत—"

"उसका क्या है" रायसाहब बोले, "जो कहिएगा हो जाएगा. पहले पसन्द तो हो जाए."

"अच्छी बात है." नरेशने कहा, और मोहिनीकी तरफ देखा. "ये तीन चीजें अभी रख लेते हैं, क्यों ?"

मोहिनी जाने किस असमंजसमें हो आई थी. इतना तो उसे मालूम ही था कि अच्छे पन्नेकी वह एक चीज चाहती है. आगे उसे पता न था कि यह क्या हो रहा है. वह बोली नहीं.

"क्यों, और कुछ देखना चाहो तो वह रख लिया जाए."

"नहीं."

उत्तरकी ध्वनिपर नरेशने कहा—"रायसाहब, तो बस यह तीन चीजें रहने दीजिए और माकूल पन्नेका दाना हाथ आ जाए तो दिखा जाइएगा. लेकिन जरा कोशिशसे काम कीजिएगा."

लाला साहबने यकीन दिलाया कि वह कसर न उठा रखेंगे और भगवान्‌ने चाहा तो जल्दी ही वह चीज खिदमतमें पेश होगी कि हजूर भी क्या कहेंगें. कहते हुए आदाब बजाकर अपना बक्सा समेट लाला साहब विदा हो गए.

नरेशने कहा—"क्यों मोहिनी, क्या है ?"

"लेना तो कुछ है नहीं", मोहिनीने कहा, "फिर यह सब क्यों रख लिया ?"

"लेना नहीं है ?" नरेश बोले, "अच्छी बात है. नहीं लेना है. पर इधर तो आओ."

कहकर उन्होंने बक्स खोला और नेकलेस दोनों हाथोंमें लिया. "अजी जरा इधर आइए, नजदीक"

"तुम तो यूं ही करते हो !"

"आइए भी."

"तो लाओ मुझे दो." कहकर मोहिनीने हाथ बढ़ाया.

"उहुंक," नरेश बोले, "मेरे आगे गर्दन झुकानी होगी. आखिर क्या समझा है मुझे." कहते-कहते उठकर उन्होंने नेकलेस मोहिनीके गलेमें पहना दिया. पन्नेका बड़ा वह नग हीरेकी दमकके बीच ग्रीवा और वक्षके संगम-स्थलपर दिप आया.

मोहिनी जैसे झेंपी. नरेश बोले—"भई वाह, क्या कहने है ?"

इसके बाद अस्वीकारमें स्वीकार करती मोहिनीकी कलाइयोंमें अपने हाथोंसे उन्होंने वह जड़ाऊ चूड़िया पहनाईं और कानोंमे ईयर रिंग्स झुला दिए. फिर दोनों हाथोंसे मोहिनीकी देहको अपने सामने थामकर टकभर देखते रहे. फिर कोचपर बैठकर बोले—"पाच कदम जरा पीछे हटना. पाससे नजारेका वह मजा नहीं."

मोहिनी पतिकी प्रसन्नता और प्रभुता भग नहीं कर सकती थी. वह जैसे इस व्यापारमें वस्तु थी, व्यक्ति थी ही नहीं वह जैसा कहा वैसी होती चली गई, वैसे ही करती चली गई पांच कदम पीछे हट गई और स्थिर खड़ी होकर बोली—"बस?"

नरेशने पत्नीको ऊपरसे नीचे तक देखा, नीचेसे ऊपर तक, और कहा, "भई वाह, क्या बात है. जौहरीने भी चीज वह बनाई है कि वाह !"

मोहिनीने कहा—"अब हट जाऊं ?"

नरेश बोले—"देखना, क्या बजा है ?"

कहकर खुद ही कलाई आगे कर कहा—"डेढ़ बजा है, भई. देखना

खानेमें देर-दार है क्या ?"

मोहिनी पांच गज दूर खड़ी थी. अब वहांसे हटी. हटकर पहले कंगन खोलना चाहने लगी.

नरेशने कहा—"यह क्या ?"

"देखकर आती हूं कि खाना हो गया क्या ?"

"यह क्या करती हो ? नहीं-नहीं, पहने रहो. देखो तो कैसे लगते हैं."

मोहिनीने हाथ रोक दिया और आभूपणोंको पहने-पहने वह वहांसे चली गई.

आकर बताया कि अभी कुछ सब्र करना होगा.

स्वामी बोले—"आओ, जरा मेहमानकी तवियत ही देख आएं. क्या कहती हो ?"

"हो आइए."

"क्या मतलब ? रास्ता आप नहीं दिखाइएगा ?"

"मैं अभी तो आई थी—"

"तो क्या हुआ हमारे साथ भी सही."

"अच्छा चलती हूं."

कहकर उसने फिर अपनी चीजें उतारनी चाहीं.

स्वामीने उसी तरह फिर टोका कि क्या करती हो अभी तो आए जाते हैं.

मोहिनीने कहा—"तुम हो आओ, दुबारा मैं नहीं जाती."

"वाह, यह खूब !"

कहकर उन्होंने हाथ बढ़ाकर कलाईसे मोहिनीको थामा और उसे खींचत-से ले चले.

"अरे, छोड़ो. चल तो रही हूं."

कमरेमें मेहमान किताब खोले लेटा पढ़ रहा था. मालूम होता था कि उसे पथ्य दिया जा चुका है और अब यह विश्रान्तिकी वेला है. नर्स

पास नहीं थी, जैसे कि उसे पता हो कि उस समय वह उतनी आवश्यक नहीं थी. नरेश कमरेमें आगे-आगे आए. मोहिनी पीछे थी. आहट पाते-पाते ही मेहमानने किताब एक तरफ की दरवाजेकी ओर देखा. प्रवेश करते ही नरेशने कहा—"हलो मिस्टर सहाय, हाऊ डू यू डू ?"

मेहमानने कुछ उत्तर नहीं दिया, जैसे उसके लिए वह नरेशके और पास आनेकी प्रतीक्षामें हो डग भर पीछे मोहिनी थी. दूरसे ही मोहिनीके एक कानमें झूमता हुआ झूमका उसे दिखाई दिया. विशेष उसने नहीं देखा. न उस ओरसे कोई अभिवादन ही आया. जैसे मोहिनीकी निगाह न सामने थी न खुली थी, वह नीचे थी मानो बन्द थी.

"हाऊ डू यू डू, मिस्टर सहाय ?"

सहायने इधर करवट ली और कोहिनी टेककर जैसे कुछ उठा और उठग हो बैठा नरेशने हाथ बढाया—"कैसी तबियत है ?"

बढे हाथको अपने दोनों हाथमें छूते हुए कहा—"कृपा है, ठीक है.

नरेश कुर्सीपर बैठ गए. फिर जैसे सहसा उनको ध्यान हो आया, पीछे मुडकर कहा - "मोहिनी, अरे कुर्सी ले लो न ! नर्स कहा है ?"

मोहिनीने कुर्सी ले ली और पीछेकी तरफ जरा दूर उसे डालकर बैठ गई.

"देखता हू," नरेशने कहा, "पहलेसे काफी आराम है. चेहरेपर अब वह बात नहीं है. एक हफ्तेमें देखिएगा ताकत भी वापस आ जाएगी. नर्ससे आपको सन्तोष है न ?"

"जी—"

"मैं आपकी सहपाठिकासे पूछता रहता हू, जानता रहता हू. सुनिए, आप जल्दी नहीं कीजिएगा—"

मेहमानकी आँखें नीची थीं उसे कुर्सी दीख रही थी जिसपर कोई और बैठा था उस कुर्सीके पाए, और उसके आगे होकर साडीकी दो-तीन तहोंके नीचे लिपटी दो टागे, जिसके नीचे चप्पलोंमें दो पैर थे. उसे

दीखे. पैर वे उसे आवश्यकसे छोटे मालूम हुए और पतले. और अंगुलियोंके नहोंकी लाली उसे बेहद सुर्ख मालूम हुई. धीरे-धीरे करके उसने आंख ऊपर उठाई. मालूम हुआ बैठने वालीके हाथ गोदीमें हैं. एक सीधा है, दूसरा उसीपर उल्टा टिका है. आंख शनैः शनैः ऊपर उठना चाहती हैं—और वह सुन रहा है, "आप जल्दी नहीं कीजिएगा."

"जल्दी न कीजिएगा," नरेशने कहा, "पूरा आराम न हो जाए, और ताकत मुकम्मिल न लौट आए, तबतक जानेकी आप नहीं सोच सकते. कष्ट तो आपको नहीं है ?"

मेहमानने अब हठात् आंखें ऊपर उठाईं, फिर उधर कुर्सीकी ओर मोड़ते हुए कहा—"इनकी कृपासे कोई कष्ट नहीं."

कहते-कहते आंखें उधर गईं और एक क्षणके लिए टिक रहीं. चेहरा वह रोजका न था, कुछ वहां वैशिष्ट्य था. कानोंके झूमकोंके अलावा भी कुछ था. वृक्षके ऊपरसे खुलती ग्रीवापर भी कुछ था जहां क्षण-भर रहकर उसकी निगाह हट आई. देखा, वह उसको देख रही है. क्या कुर्सीके ऊपर वही है जिसके पैर नीचे हैं और वे पैर आवश्यकसे छोटे हैं और नख आवश्यकसे लाल.

"क्या आपके किसी सम्बन्धीको तारसे सूचित कर दिया जाय ?" नरेशने पूछा.

"जी नहीं. क्या आवश्यकता है. एक-दो रोजमें मैं जा ही सकूंगा"

"नहीं-नहीं, एक-दो सप्ताह कहिए. किसी हालतमें एक-दो रोज नहीं—"

मेहमानकी निगाह फिर कुर्सीके पांवपर आ गई और फिर शनैः-शनैः उठी. हाथसे ऊपर...यह क्या! पुखराज और रूबीकी मणियोंसे जड़ा वह कंगन एक पल उसकी निगाहको बांधे रहा. फिर हठपूर्वक उसने निगाह नीचे कर ली.

"मिस्टर सहाय, आपको चायपर हमने याद किया था. आप आए नहीं ?"

मेहमान नरेशको देख रहा था बोला—"एकाध रोजमें शायद इस सौभाग्यके लायक हो सकूं."

"आप चल फिर तो सकते हैं, मैं समझता हू. बल्कि शायद थोडा उठकर चलना मुफीद होगा. पांव खुलेंगे. तीसरे पहरकी चायपर शामिल हो सकें तो मैं कहलाऊं ?"

मेहमानने निगाह मोहिनीकी ओर की, कहा—"इनसे पूछना होगा. इजाजत है ?"

मोहिनीने हंसकर कहा—"क्या हर्ज है ?"

मेहमानने नरेशको देखते हुए कहा—"मैं मरीज इनका हूं. हुक्म कैसे टाल सकता हू."

मोहिनीने नरेशकी ओर देखकर कहा—"सकते तो हैं, और अभी आराम करें तो क्या बेहतर न होगा ?"

"नही, बेहतर नही होगा," नरेशने जोरसे कहा, "और बेहतर होगा तो चलिए आज चाय यही पी जाएगी."

मोहिनीने कहा—"मजूर," और वह हसकर बोली—"देखो तो, दोसे ऊपर तो नही हो गया ?"

नरेशने घडी देखी और फिर वह ठहरे नही, क्योंकि अपीलका केस था और उन्हे जल्दी थी.

१०

●●●

पतिके जानेपर मोहिनीने पासकी कुर्सीपर जितेनके सामने बैठते हुए कहा—"तुमको शायद नही मालूम पर पुलिसको तुम्हारे यहा होनेकी खबर है."

तनने सुन लिया, पर कुछ कहा नहीं. वह सिर्फ मोहिनीकी
खता रह गया.

क्या देखते हो ?" मोहिनीने कहा, "तुम्हें अपना कुछ खयाल है?"

"यह नया लिया है ?"

"क्या ? यह नैकलेस ! इसीको देख रहे थे ? हां, नया लिया है..
, अभी लिया नहीं. पर सुनते हो, तुम खतरेमें हो."

"कितनेका होगा ?"

"अभी कितनेका भी नहीं," मोहिनीने कहा, "देखना है तो लो, यह
खो."

मोहिनीने गलेसे उतारकर हार जितेनके हाथपर रख दिया. वह
मानो अनमने भावसे उसे उलट-पलटकर देखता रहा. दो-एक मिनट
मोहिनी उसको इसी तरह हाथकी हथेलीमें लिए, रह-रहकर देखते हुए
देखती रही. अन्तमें बोली—"क्या सोच रहे हो ?"

जितेनने उत्तरमें अपना हाथ बढ़ाया कि लो अपना हार ले लो.

मोहिनीने हार लिया नहीं, कहा—"मैंने क्या पूछा, सुना ? क्या
सोचा ?"

धीमेसे कहा—"कुछ नहीं...कितनेका होगा यह ?"

मोहिनी बोली—"अभी तो ठीक नहीं मालूम. तीन हजारके
आस-पास हो सकता है...और यह देखो, यह ईयर-रिंग और ये चूड़ियां
सब मिलाकर आठके करीबका माल होगा. आखिर हम अमीर लो
ठहरे जिन्हें तुम मिटाना चाहते हो."

कहनेके साथ चूड़ियाँ और ईयर-रिंग भी उसने उतारकर जितने
खुली हथेलीपर रख दिए. जितेनने रख जाने दिए और कहा अब
कुछ नहीं.

"कहो, नहीं मिटाना चाहते ?" मोहिनी हंसती रही. "लेवि
चीजें आप ही हमें मिटा रही हैं. हम दिखावेमें रहते हैं, अपने
रहते हैं....पर तुम्हें क्या हो गया है ? साँप सूंघ गया है ? जान

पुलिसको खबर है ? घरको नहीं पर शहरको तो है."

जितेनने अन्यमनस्कताने कहा—"होगी. पर लो, ये अपनी चीजे ले लो. डाक्टर कब आ रहा है ?"

"आते होंगे." मोहिनीने कहा, और चीजें हथेलीपरसे अपने पास समेट लीं लेकिन उन्हें पहना नहीं, जितेनको देखती रही. वह चाहती थी यह आदमी खुले. बोझ तो है उसके मनपर, लेकिन नाहक उसे और न बढ़ाए चाहती थी कि जहाँ तक हो उसके मनको उलझाए और बहलाए रखे पर जैसे उसका मन कुछ उभरकर फिर भीतरमें हो रहता था. मोहिनीने मानो उसे बाहर खींच लानेके लिए कहा—"बताओ, तुम इन हमारे सड़े गले वर्गके साथ क्या करना चाहते हो ? वह जिसे समाप्त कहते हैं, लिक्विडेट ? क्यों यही न ? पर इन ढगसे ?"

जितेनने स्थिर दृष्टिसे उसे देखा जैसे उस दृष्टिमें दृढ़ता और तीव्रता हो कुछ देर यो देखकर उसने आगे झुका ली, बोला नहीं.

"कहते कुछ क्यों नहीं, क्या ऐसे तुम्हारा काम चल जायगा ? रेल उलट दी, और कुछ तोड़-फोड कर-करा लिया इसमें, क्यों जी, तुम्हें चैन मिल जाता है ?"

"चुप रहो," जितेनने जोरसे कहा और मोहिनी खुश हुई कि चलो कुछ मुहसे निकला तो सही

कहा—"क्यों चुप रहूं ? मैं तो कहूंगी कि—"

इसी बीच मोहिनीने उसकी आग्रह इशारा देखा जिसे समझनेमें भूल नहीं हो सकी उसने अपने होंठ काट लिए ओह ! वह भी कैसी मूर्ख हो जाती है अब उसका ध्यान नर्स की ओर गया. नर्सके कमरेमें रहते वह कैसी बात कर निकली थी उसने कहा—"मिथिला, भई तुम्हारी तारीफ करनी होगी. तुम गजबकी गूगी रह सकती हो पता नहीं रहता कि तुम हो भी और हम.. क्यों, बाहर जा रही हो ?"

"बरडीपर आ जाऊंगी," यह सक्षिप्त उत्तर देकर जाती हुई नर्सको मोहिनी देखती रह गई. बोली—"गजब लड़की है !"

जितेनने कहा—"इसे फौरन अभी छुट्टी नहीं दी जा सकती ?"

"क्यों ?"

"क्योंकि तुम्हें अकल नहीं है—"

"माफ करो जितेन."

"मुझसे तुम बहस चाहती हो ? क्या बहस चाहती हो ? तुम्हारा धर्म और उपदेश मुझे नहीं चाहिए. तुम्हें मौका है उसका, क्योंकि पैसा है और आराम है. मैं तुम्हारी कोठीपर हूं और मेहरवानी पर, इससे तुम चाहती क्या हो ? उस रोज वह कण्ठा, इस रोज यह हार, आखिर क्या मतलब है तुम्हारा ? मुझे चिढ़ाना चाहती हो, ललचाना चाहती हो, दिखाना चाहती हो ? अच्छा, मैंने देख लिया. बस अब जाओ. मुझे मेरे हालपर छोड़ दो. मैं तुम्हें नुकसान पहुंचाना नहीं चाहता. ठीक कहती हो कि तुम लोग अपने-आपको मिटा रहे हो. मजेसे रहनेसे आगे तुम्हें कुछ करना नहीं है. वही दायरा है जिसमें तुम चक्कर काटो. उससे वाहरकी तुम्हें क्या सुध ! लोग विलख रहे हैं तो विलखें, मर रहे हैं तो मरें. यह मौज-शौक जानती हो तुम्हारा कहांसे चलता है ? पर जानती तुम हो, जानना चाहती नहीं हो. पर अच्छा है ऐसे ही तुम बीतो...क्या कहा था तुमने ? तोड़-फोड़से, उलट-पुलटसे क्या होगा ? जानता हूं कुछ नहीं होगा. पर नींद तुम लोगोंकी ऐसे टूटेगी. पर शायद टूटनी नहीं चाहिए, गहरी होनी चाहिए. ऐसी कि वह नींद मौत बन जाए. पर मैं भूलमें हूं. जिन्हें सोना है वे नहीं जगेंगे. मरना है वे जगें भी क्यों ? लेकिन और बहुतसे लोग हैं. तुम लोगोंके बड़प्पनको अपने सिरपर लेकर उन्होंने अपनेको नीच बनाया. तुम्हारी ऊंचाई जिनके नीचपनपर टिकी है, उनको तो जागना है. उनको जागना और जान लेना है कि यह धोखा है. धमाकेकी आवाज ही उनके कानमें पहुंचेगी, शास्त्र-उपदेशकी नहीं. तुम लोग बैठो अपनी अंहिसाको लेकर. चींटियोंको बूरा खिलाओ और हार पहनो और कठोर वचनसे बचो. हमें कठोरतासे ही काम लेना है. ढकोसला बहुत हुआ. लाखों उसके

नीचे पामाल हुए पड़े हैं. पैसा पुजता है और सम्यताका छन फैलता है. तुम्हारी यह दुनिया है. यह दुनिया ज्यादा नही रहने पाएगी. धर्मकी ओढ़ी हुई खाल खुल गई है, असलियत उघड़ आई है. असलियत यह कि नशा दे देकर दुनियाको बेवकूफ बनाया गया है. धर्मसे धन आता है और धनसे धर्म पलता है. इस षड्यन्त्रका भंडाफोड कर देना है. इसमें जानें जायगी और बेकसूर मरेंगे. पर जाग भी इससे होगी... हां, क्या कहती थी वह पुलिसकी बात ? कब बुला रही हो पुलिसको, *बताओ ?"*

मोहिनी सुनती हुई चुप रही उसे थोड़ी तसल्ली थी कि जो घुटा था फफककर निकल रहा है. लेकिन बुरा भी मालूम हो रहा था.

"बताती क्यों नही कि कब आ रही है पुलिस ?"

"पागल तो नही हो रहे हो ?" मोहिनीने कहा, "कोई नही आ रही है पुलिस."

"क्यों नही आ रही है ? तुम लोग इतना भी अपने धर्मका पालन नही कर सकते ? तुम्हारे बैरिस्टर साहब—उनसे इतना नही हो सकता कि अपराधसे न्यायको बचाएं ? तुम लोगोंपर न्याय टिका है और तुम्हें उसकी रक्षा करनी ही होगी एक तुम्हारा भगवान् है जो ऊपर बैठा सबको सब-कुछ करने देता है. उसके नीचे क्या तुम भी सबको सब-कुछ करते रहने देना चाहते हो ? पर भगवान्का एक धर्म है, भक्तोंका दूसरा. भगवान् करते-धरते आप नही हैं, भक्तोंसे कराते और धराते हैं. उनके धर्ममें तुम लोगोंसे इतना नही हुआ कि यहां एक दुष्ट बैठा है उसको दण्ड दिलाए ? आखिर तुम इतना भी नही कर सकते, तो हो क्यों ? लेकिन नहीं इतनी बड़ी भूल तुममे नही हुई होगी. पुलिससे जरूर कह दिया गया होगा."

सुनते-सुनते मोहिनीमे भी रोष हो आया, बोली—"अच्छा, कह दिया है. तो ?"

"तो यह धोखा क्यों कि मुझे आराम दिया जा रहा है, नर्स रखी

जा रही है ? जैसे मैं अपाहिज हूं और सेए जानेके काबिल हूं, यों कहो न कि रोका जा रहा है ताकि सूत इकट्ठे हो जायं, और पुलिसके हाथ केस पक्का हो जाए. मुझे नहीं मालूम था—"

"जितेन !"

"जितेन कोई नहीं है यहां. मैं सहाय हूं. इतना तुम याद नहीं रख सकतीं ?"

मोहिनीको डर लग आया, बोली—"तुम्हारे हाथ जोड़ती हूं, शान्त हो जाओ. तुम जल्दी जाना चाहते हो, जल्दी जा सकोगे. लेकिन इस हालतमें डाक्टर देखेंगे तो क्या कहेंगे ? जरा शान्त रहो. मैंने किसीसे कुछ नहीं कहा, और तुम जानते हो. फिर तुम्हें क्या हो जाता है कि—"

मोहिनीने जितेनको देखा. एकाएक वह चुप रह गया था. आंख जैसे जम आई थीं. वह स्तब्ध था. देखते-देखते उन आंखोंमें नमी आई, मानो वह आर्द्रतासे लड़ रहा हो. वह आंखोंमें आग चाहता हो, और बरबस ही पानी उनमें आ रहा हो. मोहिनी घबराई-सी उठी और पलंगपर उसके पास आ बैठी. जितेन कुछ देर उसी स्तब्ध भावसे देखता रहा. मोहिनीकी हथेली उसकी कनपटीपर फिर रही थी. देखते-देखते एक साथ वह फफककर रो उठा और मुंह उसने अपने हाथोंमें छिपा लिया. कुछ देर जैसे वह अपनेको किसी तरह न सम्हाल सका. कुछ उमड़कर भीतरसे ऐसा आता कि रुके आंसुओंको फिर खोल देता, और वह हिचकी लेकर रो उठता. मोहिनी चित्र-लिखी सी इस हालतको देखती रही. वह नहीं समझ सकी कि क्या है जो उसे मथ रहा है. उसने पाया कि एक जगह आदमी कितना बेबस है. वह किनारे ही खड़ा देखता रह सकता है, दूसरेकी वेदनाको तनिक भी छू नहीं सकता, जान नहीं सकता. यह वस्तु जो भीतरसे तोड़ती हुई व्यक्तिको यों निरुपाय, निस्सहाय कर देती है, किसी तरह हाथ नहीं

ऐसे मिनटपर मिनट निकल गए जितेन खुले हाथोंकी हथेलियोंपर अपने औंधे माथेको लेकर पड़ा था. और उससे लगी हुई और पलंगकी पाटीपर विस्मयमें देखती हुई मोहिनी बैठी थी. लेकिन जैसे मोहिनी दूर थी, वह व्यक्ति दूर था, और बीचमें ऐसा अनुल्लघनीय शून्य था, जो सब कुछ उमड़ता हुआ छोड़ जाता था, और जिसमेंसे कुछ भी हाथ न आता था. नहीं जानती थी कि क्या कहे, क्या करे. क्या कुछ भी उसका कहा या किया उस दूसरे तटको छू सकेगा ?

उसने अन्तमें हौलेसे जितेनकी बाहोंपर हाथ रखकर उच्छ्वसित कंठ से कहा—"जितेन ! जितेन !!"

पर जितेनके शरीरमें मानो चेतना न थी उसने जैसे कुछ सुना ही नहीं.

और भी अधिक आवेगसे मोहिनीने पुकारा—"जितेन !"

क्षणके कुछ भागतक उस पुकारका कोई प्रभाव न दिखाई दिया. फिर सहसा वह काया भीतरसे ऐंठती हुई जोरसे हिली, और रुका हुआ जितेन फिरसे गहरी फफकके साथ रो उठा.

दु:खके प्रति अप्रतिरोध्य आवेगको इस प्रकार फूटते देखकर मोहिनी से कुछ करते न बना. उसका हाथ भी उस शरीरपरसे उठ आया, और विस्मय-विमूढ-सी वह बैठी रह गई धीरे-धीरे वह अपनेको अत्यन्त अवश और अनावश्यक अनुभव करने लगी, जैसे वह हो ही नहीं वेदनाके उस उच्छ्वसित आवेगकी उपस्थितिमें उसका अपना होना असगत और अयथार्थ हो. जितेन वैसा ही औंधा पड़ा रहा कहीं कोई शब्द न था अब सब थम गया था सम गतिसे आते-जाते श्वासका ही जैसे एक अस्तित्व था इससे जितेनकी वह देह हलके हिलती और उभरती थी उसे देखते-देखते फिर वह उठी और चीजोंके रूमालको अपनी गोदमें सम्हालती हुई कमरेसे बाहर चली गई

अपने स्थानपर आकर उसने कह दिया कि उसे अब छेड़ा न जाय डाक्टर आएं तो देख लेंगे बहुत ही जरूरी समझें तो मिलते जाएंगे वह

दया जाए कि मेरे सिरमें दर्द है, इससे नहीं आ सकी. हिदायतें देकर
ह पलंगपर पड़ गई. चीजोंका रूमाल एक तरफ कुर्सीपर फेंक दिया..
च ही उसके सिरमें दर्द हो आया था.

पीछे डाक्टर आया. उसको रोगीकी हालत देखकर परम सन्तोष हुआ.. इतने सुधारकी उसे आशा नहीं थी. दिलकी दशा बहुत ठीक थी. नाड़ी की गति और रक्तचाप भी सम था. उसने रोगीको बधाई दी और नर्स को धन्यवाद दिया. किन्तु अपनी सफलता और प्रसन्नताको लेकर डाक्टर वहांसे सीधे चले जानेको तैयार न था. गृहस्वामिनीसे मिलते हुए जाना उसने आवश्यक माना. कहा गया कि तबियत ठीक नहीं है और—लेकिन डाक्टरके लिए यह सूचना और भी कारण हुई कि वह मिलनेका आग्रह रखे. आखिर डाक्टरने मोहिनीके सामने उपस्थित होकर सब सूचना दी. मोहिनी गम्भीर थी, और पलंगपर थी. उसने डाक्टरसे अपनी इस अशिष्टताके लिए क्षमा मांगी, और सूचनापर सन्तोष जतलाया. अपने को मिलती हुई बधाईको डाक्टरको ही लौटाया और कहा—"सब आपकी कृपा है." डाक्टरने खबर दी कि शारीरिक अवस्थाके अतिरिक्त मानसिक दशा रोगीकी बहुत अच्छी मालूम होती है. शान्त, सौम्य और प्रसन्न! मोहिनीने स्मित अभिवादनसे इस खबरको लिया.

डाक्टरने पूछा—"आपकी तबियत, सुनता हूं, इधर भारी थी. क्या हुआ ?"

"कुछ नहीं, जरा यों ही आलस-सा था."

इतनेमें आदमीने आकर फोन मेजपर रखते हुए खबर दी—"साहब का फोन है. पहले भी दो बार आया था."

मोहिनीने फोन लिया, कहा—"हलो...मोहिनी"

"क्या बात हुई ? तबियत खराब बताई गई है. सिर दर्द कैसा है ?"

"कुछ भी तो नहीं. ठीक हूं. जरा नींद आ गई थी..."

"अरे भई, वह सहायके कमरेमें चायकी बात थी. थी न ? उनका

क्या हाल है ?"

"डाक्टर बैठे हैं. यहां उन्हें फोन दे रही हूं."

"सुनो, नहीं-नहीं, सुनो तो—"

लेकिन फोन मोहिनीने डाक्टरको थमा दिया था और डाक्टरने विस्तृत स्वास्थ्य-संवाद ब्योरेवार फोनपर दिया जिसे धैर्यके साथ दूसरी ओर सुना गया, और अन्तमें फिर मोहिनीको देनेको कहा गया.

"...यह क्या किया मोहिनी ? नाहक डाक्टरसे फंसा दिया. अरे भई, बात यह है कि शामको चायपर मैं तो आ सकूंगा नहीं और मेरी तरफसे मिस्टर महायसे माफी मांगना"

"अच्छा."

"सुनो, चड्ढा सिर खाए है मैं टाल रहा हूं कहो, आज डिनर पर आनेको कह दूं ?"

"नहीं"

मैं भी सोचता हूं, नहीं. एक ही तरीका है कि किसी जगह मैं ही शामको उसे ले जाऊं देखो, बुरा न मानो तो एक बात कहूं. तरकीब करो कि वह हजरत टलें."

"अच्छा, कबतक आओगे ?"

"पता नहीं इन्तजार न करना"

"अच्छा."

"डार्लिङ्ग, मौसम ऐसा ही है स्ट्रेन ज्यादा न लिया करो, और तनदुरुस्तीका ख्याल रखना"

"थैंक यू !"

फोन बन्द करते हुए मोहिनीने पूछा—"डाक्टर साहब, आपके मरीज अब चल फिर तो मजेमें सकते हैं न ?"

"बखुशी, बल्कि अब तो थोड़ा-बहुत उन्हें टहलाते रहना चाहिए"

'क्या बजा है, डाक्टर ?"

"बजा ? साढ़े चार हो गया"

"अच्छा डाक्टर, नमस्कार...अरे सुनना. चायको बोलो. दो चाय. डाक्टर साहब, आप उधर जाएं तो मरीजसे कह दीजिएगा कि उन्हें कुछ चलना-फिरना चाहिए."

"जरूर—"

"या चायके लिए ठहर ही न जाइए."

लेकिन डाक्टर ठहरे नहीं. धन्यवाद देते हुए चले गए.

डाक्टरके चले जानेपर कुछ देर रानी बैठी सोचती रही. क्या सोचती थी, वह खुद नही जानती थी. सोचके सूत उलझे हुए थे और वे अलग न हो पाते थे. उसे लगता था कि सोच-विचार कुछ काम नहीं आता. दिमाग सोचता रहता है, होनहार होता रहता है. सोचा जाता है वह तो होता ही नहीं. मालूम नहीं कि फिर क्या है जो अपनेको घटित करता है. यह जितेनकी बात उसके वशमें नही आती. उसके सुलझाए कुछ सुलझती नहीं. उसने एकाएक कहा—"देखो, कौन है ? इधर आओ. (आदमीके आनेपर) वहां मेहमानके कमरेमें जाओ कहना बीबीजी याद करती हैं और साथ लेते आना."

आदमी सुनकर चला गया और फिर मोहिनी थोड़ी देर जैसे अनिश्चयमें बैठी रही. फिर उठी, उठकर सेफ खोला. और उसमेंसे एक छोटा बक्स निकालकर बराबर मेजपर ला पटका. कुर्सीपर फिका पड़ा रूमाल बक्सपर रख दिया. और आप पलंगकी बजाय कोचपर जा बैठी. वह अपनेसे सुलझना चाहती थी. पर मन चंचल था और वह विद्रोही था. वह किसी तरह स्थिर रहता ही न था.

"आदमी वापस आया तो पूछा, "क्यों ?"

कहा है—"अच्छा."

"साथमें क्यों नहीं लाए ?"

"आनेको बोला है, बीबीजी."

"क्या आनेको बोला, बेवकूफ ?" रिस भरकर मोहिनीने कहा, "अकेले वह कैसे आएंगे. यह कमरा क्या उन्होंने देखा है ?"

आदमी आश्चर्यमें देखता रहा. वीवीजीको रिस होते उसने कब देखा है, वह तो एक-दो शब्दसे ऊपर कभी नही बोलतीं. उसने मूढ भाव से कहा—"अच्छा, वीवीजी."

"क्या अच्छा, वीवीजी," मोहिनीने कहा, "जाओ, वही रहना. जब आएं लेते. आना"

आदमी चला गया पर कोई नही आया. चाय आ गई और कोई नही आया. पाच मिनट हो गए, सात मिनट हो गए, चाय ठडी हो गई, पर कोई नही आया. उसने जोरसे स्विच दाबकर देर तक घण्टी बजाई. आदमीके आनेपर कोशिशमे स्वर थामते हुए कहा—"मेहमान साहबको बोलो, मेजपर चाय और वीवीजी याद करती हैं."

कहकर वह उठी. बक्सपर रखे रूमालको उठाकर खोला और तीनो चीजें बक्सके अन्दर रख दी फिर बक्सको उठाकर पास तिपाईपर रख दिया. बैठी फिर इन्तजार करने लगी मिनटके मिनट बीत जाने लगे. इसी समय साहबके अदालतके अर्दलीने सामने आकर सलाम किया और एक लिफाफा पेश किया. लिफाफा लेकर गौरसे मोहिनीने देखा उसे उल्टा-पुल्टा और मोहर पढनेकी कोशिश की.

"जाऊ हुजूर ?"

मोहिनीने आख उठाई देखा अर्दली खडा इजाजत मांग रहा है. हुक्म दिया—"जाओ"

कुछ देर लिफाफेको हाथमे लिए वह देखती रही देखते-देखते उसके माथेपर बल आए ! वह उठी उठनेमे गरमी थी. पिंडलियोंमे उसने कोचको पीछे धकेला और वह भारी कोच अपने नन्हे-नन्हे पहियो के बल दो-चार इच पीछे खिसक गया नही तो सामनेकी चायकी मेज को धक्केसे फेंक देना पड़ता.

उठी और बिना क्षणकी देर लगाए तेज कदमोंमे चलती हुई वह रोगीके कमरेमे आई दरवाजेपर पहुचकर वहां खडे आदमीको रुखसत किया और अन्दर जाकर बोली—"नर्स, प्लीज़, बाहर जाओ."

नर्सने वाणीकी यह ध्वनि कभी न सुनी थी. उसने ऊपर देखा और बिना देर लगाए वह बाहर चली गई. मोहिनीने जाकर दरवाजा अंदर से बन्द कर लिया.

जितेन बिना कुछ बोले चुपचाप यह देखता रहा.

मोहिनीने लौट आकर पलंगके सामने अपनी भरपूर ऊंचाईमें खड़े होकर वह बन्द लिफाफा जितेनकी तरफ फेंककर कहा—"मैं पूछ सकती हूं, यह क्या है ?"

स्वरमें कड़क थी. जैसे सब तरफसे गुंजायश बन्द हो. जितेनने लिफाफा हाथमें थामे रखा, उसे देखने और खोलनेकी चेष्टा नहीं की आवाजकी कड़कपर वह चौंका-सा रह गया !

११

"पूछती हूं, यह क्या है ?" खड़े ही खड़े मोहिनीने कहा, इस घर में बिना जताए किसीसे मिलने या चिट्ठी-पत्री करनेका आपको हक नहीं है. मैंने पहले भी कह दिया था. फिर यह क्या है ?"

जितेन आहिस्तासे उठा और पलंगके तकिएका सहारा लगाकर बैठा हो गया, जैसे उसे जल्दी न हो. लिफाफा उसके हाथमें था. उसे खोलने या देखनेका उसने तनिक प्रयास नहीं किया. पूछा—"आप क्या चाहती हैं ?"

मोहिनी खड़ी ही थी. उसने कहा—"मैं पूछती हूं, आप क्या चाहते हैं ?"

"मैं चला जाना चाहता हूं."

"आप जा सकते हैं."

"सुना है और यह लिफाफा अपने पास."

कहकर जिनेनने वह लिफाफा मोहिनीकी तरफ फेंक दिया. वह उड़ता हुआ मोहिनीको बगैर छुए पलंग आ गिरा. मोहिनीने उसे नहीं उठाया, न उसकी तरफ देखा. वह जिनेनको देख रही थी.

"यह आपके हाथमें था कि मुझे न देतीं," जिनेन बोला—"मेरा लगाना गलती थी तो आपके बसमें था कि आप उसे दबाकर, फाड़कर, जला कर गलती सुधार देतीं. यह क्यों नहीं हो सका, क्या मैं पूछ सकता हूं ?"

"क्या तुम्हें न देती ?" मोहिनी विस्मयसे जिनेनकी ओर देखती हुई बोली—"तुम समझते हो, यह मुझसे हो सकता था ? पर यह हो तब तक तो तुम धीरज रख सकते थे." देखते-देखते जरा वह तेज हुई और बोली, "क्या नहीं रख सकते थे ? और, क्या जरूरी था कि अपनी करतूतोंमें दूसरोंको फसाओ ?"

"दूसरोंको ?" जिनेनने भी कुछ तेज होते हुए कहा, "यानी कि मैं आपको फसा रहा हूं. आते ही आपसे मैंने साफ-साफ नहीं कह दिया था ? उसकी याद है कि आपने मुझे रखा. करतूत मेरी जैसी थी, जानती थीं कि उसकी थी, इस बहसमें मुझे आपके साथ नहीं पड़ना. आपकी यह उलझनोंकी एक निगाहमें कानी पड़ सकती है. पर छोड़ो इस बात को, जो हुआ हो गया. अब आपकी इजाजत है और मैं ज्यादा ठहरने वाला नहीं हूं. बेफिक्र रहिए."

"शर्म नहीं आती है तुम्हें कि कहते हो बेफिक्र रहूं. कहां [illegible] का बड़ा जाल तैयार है तुम्हारे लिए, तुम्हें मालूम नहीं [illegible] और तुम्हें उसमें झोंक दूं ?—नहीं, तुम आज नहीं जा रहे हो."

"जी, क्यों नहीं जा रहा हूं मैं आज ? क्योंकि [illegible] नहीं करती ? आप हैं कौन ?"

"जिनेन !" क्रुद्ध भावसे मोहिनीने कहा

सकते ?"

"इतना कैदी हूं कि चुप भी रहना होगा ? मिल नहीं सकता, लिख नहीं सकता. अब मालूम हुआ कि बोल भी नहीं सकता. यह सब हुकूमत सिर्फ इस त्रिरतेपर कि मकान आपका है !"

मोहिनीने दबी चीखसे कहा--"जितेन !"

जितेन हंसा, बोला—"हम अच्छे आजादीके लिए लड़ने वाले हैं ! यह खूब हमारी आजादी है ! सरकारको हम हटाएंगें और इन औरतों-की हुकूमत सिरपर लेंगे !"

"क्या बके जा रहे हो, तुम्हें कुछ होश है, जितेन ?"

"पूरा होश है कि मुझे अब यहां नहीं रहना है, और आपके कष्टके लिए--"

"खबरदार, इस तरह तुम नहीं जा सकोगे."

"किस तरह जा सकूंगा ?"

"सोच लिया जाएगा कि किस तरह जा सकोगे. इंतजामके साथ भेजना होगा. अपनी मर्जीसे तुम जो करो. मेरी गफलतसे तुम गिरफ्तार नहीं होगे."

"ओह ! तो आप मुझे बचाना चाह रही हैं ? वैसे ही आपकी मेहरबानियां बहुत हैं. जी नहीं, अपना इंतजाम मैं कर लूंगा."

"सुनो, जितेन !" मोहिनीने आदेशके स्वरमें कहा, "इस जगह तुम्हारा अपना कोई इंतजाम नहीं चलेगा. मेरी गाड़ी इस जिलेके पार तुमको छोड़ आएगी. फिर तुम होगे और तुम्हारी आजादी. तब तकके लिए सब्र रखना होगा. सुनो, कहते हो तुम नहीं रहना चाहते. मैं कहती हूं कि मैं रखना नहीं चाहती. भूलमें न रहना कि मैं रखना चाहती हूं. अब तुम बीमार नहीं हो और अपनी देखभाल कर सकते हो. तुम्हारी वजहसे इस घरमें हर दिन मुझे झूठ ओढ़ना पड़ रहा है. मुझे उसकी खुशी नहीं है. लेकिन तुमने और तुम्हारे और लोगोंने बाहर अपने लिए जो नागफांस बो लिए हैं उनमें पड़नेसे मैं ज्यादा देर तुम्हें

रोक नहीं सकती. कर्मके भोगमें कोई क्या कर सकता है ! लेकिन तुम यहां आ गए तो अब मेरे ऊपर है कि मेरे कारण तुम विपत्में न पड़ो. तुम समझदार हो. यह बात कहते हुए भी मुझे शर्म आती है, क्योंकि क्या तुममें मैं कभी पड़ती नहीं रही ? जानती हूं कि तुम मुझे कभी उलझनमें डालना नहीं चाहोगे. फिर यह तुम्हें क्या हो जाता है, मैं कह नहीं सकती—"

बीचमें बात लेकर जितेनने कहा—"मोहिनी, जानता हूं कि तुम श्रीमती हो. समझदार हो गई हो. संभ्रांत हो, जिम्मेदार हो. बड़े कुल की आन और लाज तुमपर है लेकिन इस बूते मुझपर दया करने न चल पड़ना. तुम्हारा सब तुम्हारे पास रहेगा. आनको आंच न आएगी. भरोसा रखो कि जिसको छूतकी तरह दूर दूसरे जिलेमें तुम छोड़ आना चाहती हो वह खुद तुमसे दूर रहेगा इतनी दूर कि तुम्हें कल्पना भी नहीं होगी. मैं आ गया, क्योंकि समझता था कि तुममें कुछ बचा होगा. लेकिन आकर देख लिया. अब फिर वह गलती मुझसे होने वाली नहीं है तुम जिस लोककी हो मेरा उससे सम्बन्ध नहीं. मैं जिस दुनियामें हूं वहां चैन का नाम-निशान नहीं. देख चुका हूं कि तुम चैनसे हो और रह सकती हो. बस, और मुझे नहीं जानना है. इसलिए तुम अब जाओ और तुम्हें कसम है जो मेरे बारेमें कुछ सोचो, या इन्तजामके बारेमें सोचो. नाग-फांस मैंने ही तो बोए हैं. तो मैं ही उन्हें काट और भोग लूंगा तुम्हारा दामन उससे पाक रहेगा. बस और तुम्हें क्या चाहिए ? इज्जत चाहिए. पवित्रता चाहिए...सच मोहिनी, मैं भूल रहा था. समझता था ये चीजें तुम्हें भानेवाली नहीं हैं, तुम्हें कुछ और चाहिए. लेकिन वे दिन शायद पुराने हुए कि जब.. चलो वह सब बीत गया. अच्छा हुआ कि बीत गया. अब शायद तुम समझ गई हो कि वह अल्हड़पनका सपना था. वे कोरी हवाई आसमानी बातें थीं. उनकी थी जिनके पैर धरतीपर न थे जिनकी हैसियत न थी, इससे खाम-ख्यालियोंमें वे उड़ते थे. क्यों, है न मोहिनी? ठीक कहता हूं न मैं ? अब तुम्हारे पास हैसियत है. मेरी जैर

हो तुम, वल्कि इज्जतदार हो. वजनदार हो. कितावें शायद तुम्हारी छूट गई हैं. लिखना और कविता—सव छूट गया? वह वचपन था. क्यों था न ? अव सोसायटी है और गृहस्थी है, और कुलीन वर्गकी मान-मर्यादायें हैं. पहले विचार थे जो मर्यादाओंमें घिरते न थे, उड़ते थे और सव कुछको अपने विस्तारमें ले लेना चाहते थे. अव वे नहीं हैं, क्योंकि वे अयथार्थ थे. क्यों, थे न अयथार्थ ? झूठे थे. क्यों थे न झूठे ? क्योंकि अव सचाइयोंमें तुम रहती हो. जीते-जागते, भरे-पूरे, सुन्दर-सुसंभ्रान्त, खुश और खुर्रम लोगोंके बीच तुम रहती हो. जिसके पास वढ़िया सव कुछ है. कपड़े वढ़िया हैं, सामान वढ़िया है और अदाएं बढ़िया हैं. मुस्कराहट और उनका विनोद, उनका चैन, उनकी मौज—इन यथार्थोंमें तुम रहती हो. यह सव सच है, है न ? अव कोरे झूठ अयथार्थ खयालोंसे तुम्हें क्या काम है ? छोड़ो, मैं तुम्हें रोकूंगा नहीं. जाओ, भूल जाना कि जितेन था. समझ लेना कि वह नहीं सिर्फ सहाय है, जो तुम्हें नहीं जानता—क्यों, उल्टा काम क्यों करती हो ? कुर्सी लेकर अव इतनी देरमें वैठनेका विचार क्यों कर उठीं ?खड़े होकर डाट ऊपरसे ज्यादे जोरकी पड़ती है."

मोहिनीने झुककर लिफाफा उठाया और कुर्सीपर सामने वैठकर आहिस्तासे हाथ वढ़ाकर जितेनके आगे रख दिया. कहा—"लो, पढ़ो तो उसमें क्या है."

जितेनने कहा—"कृपा है. नहीं, पढ़नेकी जरूरत नहीं."

"क्यों ?"

"इसके उत्तरकी शायद जरूरत नहीं."

मोहिनीने मुस्कराकर कहा—"गर्म न हो. उस पत्रको जाननेकी मुझे तो जरूरत है."

पत्र अलग ही रखा था. जितेनने उसे छूआ भी नहीं. कहा—"रखा तो है, खोलकर पढ़ लो."

"देखो जितेन," मोहिनीने हंसकर कहा, "मैं खोलकर पढ़ भी सकती

हूं. यह न समझना कि—"

"नही, मैं कुछ नही समझूंगा. ले जाओ इस खतको और मुझ दिखानेकी जरूरत नही. समझनी होगी, अभिसंधि है पता लग जाएगा क्या अभिसन्धि है. लो, उठा लो और बैठो नही, लेती जाओ"

सुनकर मोहिनी कुछ देर चुप रही फिर बोली—"इधर तीन-चार रोजमें तुम्हें बदला हुआ देखती हू क्या बात है ? मेरी किस बातसे नाराज हो ?"

"कैदी नाराज हो सकता है ? और होगा तो किसीका क्या कर लेगा."

"हां नाराजी कुछ करती तो नही है" मोहिनी बोली और उसकी वाणी जैसे भीग आई, "बस दुख देती है देती क्या, नाराजी खुद अपने में दु:ख ही होती है देखो तुमसे कहती हू, यहांसे आप ही जानेकी कोशिश न करना इसमें खतरा है और मुझे दु:ख होगा"

वाणीकी आर्द्रताने जैसे जितेनको छूआ. उसने कहा—"तुम मनमें क्यों कष्ट पाती हो, मोहिनी ? मेरे लिए खतरा है सो तो ठीक ही है. पर मैं तुम्हारे लिए जो खतरा हू, यह सोचनेसे मुझे कैसे बचा सकती हो ! कितना बडा बोझ तुम्हारे मनपर है, यह क्या मैं जानता नही हू फिर देखती हो कि खत भी मेरे नामसे तुम्हारे यहा आने लगा है उस खत आनेमें, सच मानो, निर्दोष मैं नही हू लेकिन दोष मेरे स्वभावका है खाली मैं रह नही सकता. और जो बात मुझमें भरी है उससे छूट नही सकता. मेरी राह अलग है गलती हुई कि तुम्हारा रास्ता मैं काटने आया दो जन अपनी-अपनी राह जा सकते थे. फिर यह मुझे क्या हुआ ! यहा वृत्ति-भेद है, वर्ग-भेद है भेद ही भेद है. फिर मुझे क्या हुआ कि अपनत्व देख बैठा. माफ करना, मैं अपनी राह कैसे छोडू ? लेकिन उसपर रहा तो खत एक नही कई आएगे, मिलनेको भी अनेक आते रहेगे वह सब मुझे नही करना चाहिए. यह तुम कहती हो और मैं भी देखता हू. पर वह नही करना तो करना [illegible]

भी मेरी समझमें नहीं आता. मेरे पास करनेको दूसरा कुछ बचा नहीं है. तुम्हारी यह आरामकी और अमनकी और चैनकी दुनियाको उजाड़ डालना ही मेरा काम है. यहां मुट्ठी-भरके चैनने हजारोंको बेचैन कर रखा है—"

"लेक्चर फिरके लिए रख दो, जितेन ! मुझे अब जाना है"

"बड़ी खुशी है, जाओ. मुझे अकेला छोड़ दो."

मोहिनीने गम्भीर होकर कहा—"ठीक कहते हो जितेन, कि शायद राह एक नहीं है और एक-दूसरेको व्यर्थ करना हमारे लिए आवश्यक नहीं है. सुनो, चायपर बुलाया, तुम क्यों नहीं आए ?"

"क्यों आता, यही सोचनेकी बात है. सोचनेपर कोई कारण नहीं मिला, इससे रह गया."

"उन्हें अच्छा नहीं लगा."

"तुम्हें तो बुरा नहीं लगा न ? मुझे इतना ही चाहिए."

"जितेन, बातको तुम सदा बहस क्यों बना देते हो ? यह पहले भी तुममें था, अब और बढ़ गया है."

जितेन सुनकर मुस्कराया. फीकी वह मुस्कराहट थी और व्यंगसे भरी. बोला—"देखता हूं, अच्छी अच्छी शिक्षाएं तुम दे सकती हो. मैं तुम्हारा कृतज्ञ हूं."

"जितेन, क्या हो गया है तुम्हें ?"

"कुछ नहीं. कृपा है, तुम जाओ."

"हां, मुझे जाना तो है," मोहिनीने कहा, "लेकिन अभी उनका फोन आया था. पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्टको जैसे-तैसे किसी रेस्टरांमें ले गए हैं. नहीं तो वह आज यहीं आनेपर उतारू थे. तुम्हारी मुलाकातें और चिट्ठियां खतरेको बढ़ा सकती हैं. यह तुम क्यों नहीं देखते—"

"मेहरबानी कीजिए, आप जाइए."

"अच्छी बात है. लेकिन तुम डरना नहीं—"

"मैं हाथ जोड़ता हूं, आप जाइये"

"जितेन !"

"आप जाइए, अभी जाइए."

"जितेन !"

"उफ़ ! लीजिए, मैं दरवाज़ा खोले देता हूं."

मोहिनी कुछ न कर सकी. बैठी देखती रही, और जितेनने पलंगसे उतरकर नंगे पांव फ़र्शपर चलते हुए जाकर दरवाज़ेकी चटखनी खोल दी और वहीं खड़े-खड़े राह दिखाते हुए कहा—"लीजिए."

मोहिनी एक क्षण मानो अनिरोधमें स्तब्ध-सी बैठी रही, फिर स्थिति देख अपनी जगहसे उठी और निःशब्द खुले दरवाज़ेमें से होती हुई बाहर चली गई. फ़ौरन जितेनने चटखनी फिर अन्दरसे लगा ली और वापस पलंगपर आनेके बजाय वह कमरेमें टहलने लगा. इधरसे उधर, उधरसे इधर. आधेसे ज्यादा दूर तक कालीन था, बाकी फ़र्श सूना था. पलंगके किनारे तक कालीनपर कितने और सूनी जगहपर कितने डग आते थे, यह वह गिन गया. उसने डग बार-बार गिने. उसे विस्मय था कि हर बार वे उतने ही रहते हैं. काफी देर तक वह इस तरह टहलता रहा. इस बीच उसके लिए मानो कमरा न था, न उसमें चीज़ें थीं. वह उतना नपा-नपाया रास्ता था, जो वह डगोंसे नापे जा रहा था और नापे जा रहा था. सहसा उसका ध्यान बंटा, देखा यह कमरा है और उसमें चीज़ें हैं. कुर्सियां हैं, मेज है, पलंग है. जैसे वह दूसरी दुनियासे आया. निगाह गई कि पलंगके किनारे एक ख़त है. उसने झपटकर ख़त लिया और पढ़ा. कुछ देर उसके पन्नेको वह देखता रहा जैसे समझनेमें देर लग रही हो. देखते-देखते मानो उसके मनमें एक संकल्प बंधा. पांवोंमें उसने स्लीपर डाले और दरवाज़ा खोलकर वह बाहर निकल आया.

*   *   *

मोहिनीने आकर कमरेमें चायकी ट्रे ज्यों
पत्नी देकर कहा कि यह यहां क्यों है ? दूसरे

साथ भी. उसे सहसा याद आया था कि आज तो उसने खाना ही नहीं खाया है. स्वामी भी अकेले ही कुछ खा-पीकर जल्दीमें चले गए हैं. वह करती क्या रही ? कुछ समझमें नहीं आता, क्या करती रही. ट्रे उसके सामनेसे चली गई थी और वह कोचपर बैठी थी. बराबर वही मेज थी, जिसपर आभूषणोंका बक्स रखा था. तिजोरीसे बाहर वह यह मेजपर कैसे आया, मानो सहसा यह उसे स्मरण ही न हुआ- फिर किसी और तरहकी व्यस्तताके अभावमें उसने बक्स खोला और एकएक कर डिब्बे निकालकर उन्हें देखने लगी. देखती और खोलकर बराबर रख लेती. आभूषण सभी सुरुचिके थे और कीमती थे. सबमें अपनी-अपनी खूबी थी. देखते-देखते मेजपर एक खासी प्रदर्शनी लग गई.

ऐसे ही समय मेहमानने वहां प्रवेश किया. मोहिनीके लिए यह अप्रत्याशित था. बिना किसी तरहकी सूचना दिए, मानो स्थिर और कृत-संकल्प, वह बढ़ता ही चला आया. मोहिनी असमंजसमें कुछ संकुचित हुई. हाथम का डिब्बा उसने जल्दीसे अलग किया, मानों शिष्टाचारमें अपनी जगहसे वह हलकी-सी उठी, कि इतनेमें एकदम सामने पहुँचकर मेहमानने कहा—"यह आप अपनी चीज वहाँ भूल आई थीं." और कहकर लिफाफा उसने मोहनीकी गोदमें डाल दिया.

मोहिनीने उसे सम्हाला, कहा—"बैठो !"

मेहमानने कोहनियाँ अपनी कुर्सीकी पुश्त पर टेकी और जरा झुककर कहा—"जी नहीं, मैं चाहता था कि आप इस पत्रको खोलकर मेरे सामने ही पढ़ लें."

"बैठिए न, चाय आ रही है."

"आप नहीं, तो लाइए, मैं सुना दूं."

"वह हो जाएगा, आप बैठिए तो." कहती हुई मोहनी उटी.

"कहां जा रही हो ?"

मोहिनी अपनी जगहसे उठकर मेजके गिर्द होकर पास आई और मेहमान वाली कुर्सीको अपने हाथों आगे सरकाकर हथेलीसे गद्दीको

माफ करके बोली—"यहां बैठिए. मैं अभी आई"

कहकर प्रतीक्षा नहीं की और मोहिनी कमरेमें चली गई.

मेहमानके साथ आदमी आया था और पहुचाकर वह चला गया था. उसके पीछेकी तरफ देखा, कोई नही था; सामनेकी तरफ देखा, कोई नही था. वह अभी खड़ा ही था. सामने आभूषणोंके डब्बे खुले थे. कौन-सी क्या चीज है, वह नही जानता था. लेकिन आखोंको वे खीचते थे. कुछ देर वह टक बांधे देखता रहा. फिर निगाह हटाकर उसने कमरेको देखा एक तरफ टेलीफोन रखा था. पास ऊंची बड़ी तिजोरी थी जिसके किवाड़ पूरे बन्द न थे. जैसे निगाह उधर जाते-जाते रुक गई और बंध आई. तभी कुछ मनमे फूटा. एक क्षण वह अनिश्चयमें रहा फिर तेजीसे डग बढ़ाकर वह पास पहुचा. तिजोरीके दरवाजोको दोनों हाथोंसे पकड़कर अपनी तरफको खोला उन्हे ऊपरसे नीचे और नीचेसे ऊपर एक उडती-सी निगाहसे देखा और फिर बन्द कर दिया. अब टेलीफोन उठाकर उसने डायल घुमाया दूसरी तरफ कौन था मालूम नही. इधरसे कहा गया कि अब ठीक हू और सब ठीक है. रुकना अब जरूरी नही है. आज ही, हा, रातके तीसरे पहर. गाडी दो हो. पूछो नही, सुन लो और करो दो गाड़ी, तीसरे पहर, दो और तीनके दरम्यान, बस...हां, सब ठीक है.

बातमें एक मिनट भी नही लगी उसने घूमकर देखा, पास कोई न था. जेवर खुले पड़े थे कमरा सुनसान था मोहिनी अभी नही आई थी शायद चाय लेने गई हो. लौटकर वह जेवरोको मेजके पास पहुचा और एक-एकको गौरसे देखने लगा.

थोड़ी देरमें मोहिनीके आनेकी आहट हुई. मेहमान मुडा नही और उसी निश्चिततासे आभूषण उलट-पलटकर देखता रहा.

मोहिनीने आकर हाथसे चायकी बडी ट्रे मेज पर रखते हुए कहा—"आइए, बैठिए. चाय हाजिर है."

नेकलेस मेहमानके एक हाथपर लटका था उसने मोहिनी...

कर देखते हुए पूछा – "यह सब तुम्हारा है ?"
हिनीने प्रसन्नतासे कहा—"हां, मेरा है."
वाहमें मिला था ?"
पीछे भी कुछ बना. लेकिन आओ बैठो."
नेकलेसको अपनी जगह रखते हुए मेहमान मुड़ा और अपनी कुर्सी
आते-आते बोला—"विवाहमें बहुत कुछ मिलता है. मैं समझता हूं,
ी चीज है विवाह, क्यों मोहिनी !"
मोहिनीने हंसकर कहा—"तुम क्या जानो कि कैसी अच्छी चीज है.
हैं तो अंगूर खट्टे होंगे...लो, बनाऊं ?"
"थैंक यू" कहकर उसने केतलीसे दोनों प्यालोंमें चाय डाली. मोहिनी
दूध दिया और पूछा—"दो ?"
मेहमानने कहा—"दो, तीन, चार. जितनी हिम्मत हो. मीठा मैं
कम नहीं होना चाहता. चाहो उतना हो सकता हूं."
"लो, अभी दो काफी हैं. इतनी ही कड़वाहट कम सही. जितेन!
कड़वे तुम इतने क्यों हो गये ?"
"सामने ही हूं कि अब मीठा बना लो. तुम्हारे हाथमें था मोहिनी
कि मीठा बना लेतीं. पर छोड़ो। यह खत रखा है, पढ़ खोलकर? या वैसे
ही बता दूं, पीछे खोलकर तुम्हीं पढ़ लेना. बताऊं ?"
"बताओ।।
"पूछा है कि मैं कब आ रहा हूं और धन मांगा है."
मोहिनीने सुन लिया. कहा—"यह लो न. खा तो कुछ तुम रहे
ही नहीं !" कहकर उसने प्लेट मेहमानके आगे की.
प्लेटमें से कुछ खाते हुए मेहमानने कहा—"पूछा नहीं तुमने कि
धन क्यों चाहिए ?"
"मैं क्यों पूछूं ?"
"इसलिए कि हम लोग समझते हैं धन तुम्हारे पास है."
मोहिनीने हंसकर कहा—"देनेके लिए नहीं है."

ा ढालकर दिए. पर मेहमानको उससे सन्तोष न था. उसने
की और कुछ और पा लिया. लेकिन फिर रोषसे झपटकर बोतल-
ह दूर ले गई और कहा—"नहीं जितेन, अब किसी हालतमें तुमको
बूंद मैं नहीं दूंगी. जरा देखो तो."

जितेनने कहा—"तुमको मालूम नहीं है मोहिनी, मैं कमजोर हूं.
के बहुत ताकत चाहिए, बहुत ताकत चाहिए. बाहर बहुत काम है."

इतनेमें टेलीफोनकी घण्टी बजी. मोहिनीने सुना कि स्वामी कह
रहे है कि चड्ढा अजब अहमक है. हो सकता है साथ घर ही आ धमके.
क्या कर रही हो ?

"चायपर हूं...हां वह भी यहीं हैं मेरे कमरेमें."

सुनकर मेहमान अपनी जगहसे उठा, और चुपचाप चलनेको हुआ.
चलते-चलते हठात् उसे सुनाई दिया, मोहिनी फोनपर उन्हें कह रही है,
"क्यो ?...जी मैंने बुलाया था...कह तो रही हूं बुलाया था मैंने-मैंने."
आगे सुननेको जितेन ठहरा नहीं चला ही गया.

मोहिनी फोनपर बात करती रही,—"हां, कह दो उनसे कि मेरी
तबीयत ठीक नहीं है. इतवारका रखें. उस रोज ब्रिज भी जमेगा."

फोन बन्द करके उसने देखा. मेहमान जा चुका था.

दुनियामें कई दुनियां हैं और आदमीमें कई आदमी. असल
में पर्तपर पर्त है. इसलिए जो है वह निश्चित नहीं है, वह ए
...जो कहा नहीं जा सकता. जो है अनिर्वचनीय

एक, पर दीखता है, प्रतीत होता है, इसमे है भिन्न. प्रतीति होनेमे ही जगत् है. प्रतीति है माया, इसमे जगत् माया है. माया-मयता होनेकी शर्त है. यही होनेका आनन्द, यही उसका छल. अपनी प्रतीतियोंमें सब वर्तन करते है. इससे सदा नए-नए पेंच पड़ते हैं शायद होना और होते रहना छलना ही है. पर छोड़ो, इस उधेड़बुनमें क्या रखा है.

मेहमान मरीज था और उसके लिए एक नर्स थी सोनेके लिए उसके पास अलग कमरा था. पिछले तीन-चार रोजमे मरीजकी हालत ठीक थी. इतनी ठीक कि नर्स सोचती थी कि अब वह चली जा सकेगी. देखभालकी जरूरत रही न थी. नर्स यों कुछ अलग और विचित्र थी. बेहद पाबन्दपर बेहद बन्द. उसकी आंखें थीं जबान न थी. यह बात कि स्त्रीके जबान न हो, सहसा विश्वसनीय नही है. पर इस नर्सके बारेमें यह विश्वास करना ही पड़ता था आखोंसे देखती थी कि मरीज मरीज नही है, कहीं कुछ अतिरिक्त भी है उस अतिरिक्तमे वह नही उतरना चाहती थी. लेकिन वह अतिरिक्त खुद उसकी आखोंपर ऐसा आकर पड़ता था कि अपनेको उघाड़ना ही चाहता हो आख अगर देखती थी तो कान उसके सुनते भी थे. जान पड़ता था कि बोलनेमें जो शक्ति लगती है वह भी उसके देखने और सुननेके काम आ जाती थी. आखे भीतर तक देखती थी और कान निःशब्दको भी सुनते थे.

शामको जब मरीज लौटकर आया था तब नर्सने देखा था कि वह कुछ और है. आखोंमें चमक है, चेहरेपर काठिन्य देखकर वह काम करनेमें लगी रही थी, बोली नही थी

मरीजने अपने पास बुलाकर धीमेसे हठात् मिठास और मुस्कराहटके साथ अंग्रेजीमें कहा—"क्या मै अब बिलकुल तनदुरुस्त नही ? तुम्हारे कष्ट और अनुग्रहके लिए, सिस्टर, बहुत-बहुत कृतज्ञ हू अब तुम इतने दिनोंके बाद आज पूरा आराम कर सकती हो"

यह मरीज उससे पहले बोला नही था उसने एक शब्दम उत्तर दिया—"धन्यवाद".

मरीजने कहा—"खेद है कि मेरे पास देनेको कुछ नहीं है. लेकिन मैं तुम्हें भूल नहीं सकूंगा, सिस्टर !"

रोगीकी इस स्थितिको वह समझ न सकी. उसने पूछा—"आप चाहते हैं, मैं विघ्न न दूं ? अपने कमरेमें चली जाऊं ?"

प्रश्न यह उतना संगत नहीं था और मरीज देखता रह गया. फिर अंतमें कहा था—"कृपा होगी."

उत्तर सुनकर नर्स मन ही मन मुस्कराती हुई वहांसे चल दी. दरवाजे तक पहुंचनेसे पहले मरीजने फिर बुलाकर उससे कहा—"मैं उधरसे काफी डट आया हूं, अब खानेकी जरूरत न होगी और मुझे बिलकुल डिस्टर्ब न किया जाए."

उसने सुन लिया और बिना उत्तर दिए पहले कुछ क्षण खड़ी रही और फिर चली आई. रातको उसे नींद ठीक-ठीक नहीं आई. नहीं कह सकती कि उसने कुछ आहट नहीं सुनी थी, पर जैसे अपने कर्तव्यसे बाहर जाना उसने आवश्यक नहीं समझा था. मानो अपने बावजूद वह रातके तीसरे पहरके घन्टोंमें भीतर-ही भीतर यह अनुभव करती रही कि कुछ अनघट घट रहा हो सकता है; उसकी सूचना हवामें हो. जैसे अकारण, अनिर्दिष्ट वह सीधे अतींद्रियमेंसे आभास प्राप्त कर रही हो. पर उसने कोई चेष्टा नहीं की. रात निकल भी गई और सबेरा आ गया. वह अपने कमरेमें बनी रही. सबेरा होनेपर भी कुछ उसने व्यग्रता नहीं दिखलाई. काफी दिन चढ़े—कोई आठ बजेके लगभग—वह मरीजके कमरेमें गई. उसे विस्मय हुआ,—नहीं, विस्मय नहीं हुआ—कि मरीज वहां नहीं है. कर्त्तव्यपूर्वक उसमे सब जगह देख ली और कुछ देर वह शामसे अब तकके समयपर अवलोकन करती हुई अकेली कमरेमें खड़ी रही. फिर विधिवत् मालकिनके पास खबर पहुंचाने चल दी.

मालकिन जल्दी उठ जाती हैं. तभी नहा-धोकर निवृत्त भी हो जाती हैं. उनका एक अपना कमरा है. कमरा क्या कोठरी कहिए. वह प्रसाधनकी है और वही पूजाकी. पूजाका कायदा इस घरमें नहीं है. इसीलिए

इस छोटी-सी कोठरीमें ही भुवनमोहिनीने अपना इन्तजाम कर लिया है! सबके अनजानमें एकाध घड़ी चुपचाप बैठ लेती है. लोग समझते हैं कि वह प्रसाधनमें है, और वह पसन्द करती है कि लोग यही समझें. वहा किसीको जानेकी अनुमति नही है.

नर्स बाहर प्रतीक्षामें खड़ी रही. उसकी आंख तेज है. वह आंख इधर-उधर जाती कम दीखती है, पर देखती सब है. नर्स शायद जानती है. वह चुपचाप देखती रही.

मोहिनी कक्षसे बाहर आई. बाल उसके खुले थे. शरीरपर साड़ीके अतिरिक्त सिर्फ मामूली अंगिया पहने थी. आभूषणका चिन्ह न था. उसकी यह सद्यस्नात, शुचि-शान्त, गम्भीर मुद्राको देखकर एक बार बुद्धिमती मिथिला भी चकित सी रह गई.

स्मित वन्दनामें मोहिनीने कहा—"मिथिला बहन, कहो कैसे ?"

"मैडम," मिथिला अंग्रेजीमें बोली, "मरीज कमरेमें नहीं है"

मोहिनीने सुन लिया, पर जैसे आगे कहा जाएगा इस अपेक्षामें वह बिना किसी प्रकारका भाव प्रकट किए ज्योंकी त्यों खड़ी रही.

हठात् मिथिलाको ही कहना हुआ—"वहा तो मैंने देख लिया, सोचा शायद इधर आए हों .."

मोहिनीने हसकर कहा—"वह क्या पूरे तनदुरुस्त नहीं हो गए थे ? और तुम उठी कब ?"

"मैं अभी आध घण्टे पहले कमरेसे निकली थी."

"यही तो—"

और इतना कहकर मोहिनी मुस्कराती हुई चुप रह गई.

मिथिलाको बुरा मालूम हुआ उसे अपनी बुद्धिपर भरोसा था. लेकिन मोहिनी जैसे अभेद्य थी. मिथिलाके मनमें पराजय और विद्वेष के भाव उठने लगे. वह एक क्षण बिना बोले मोहिनीको देखती रही मोहिनीने कहा—"तुम्हारी मैं बहुत-बहुत कृतज्ञ हू, मिथिला. ऐसी परिचर्या कहां मिलती है. तुम्हें चिन्ताकी जरूरत नहीं. तुम्हारा

मरीज— "मोहिनीने मिथिलाको देखा, और विना रुके कहा—"अव तुम्हारी सेवाकी जरूरतमें नहीं है ! शायद तुम जल्दी जाना चाहो. गाड़ी तैयार है. जिस मिनिट सुभीता हो जा सकती हो. वावूको कह दिया है. पेमेंट वहींसे हो जाएगा."

कहकर पहले उसने हाथ जोड़े फिर बढ़कर हाथ मिलाते हुए कहा—"अच्छा मिथिला !"

मिथिला जैसे विस्मयका भी समय न पा सकी और मोहिनी फिर विना ठहरे दूसरे कमरेकी तरफ निकल गई. मिथिला इसपर कट आई. लेकिन उसने इसका किंचित भी आभास न दिया, वहांसे वह गृहपतिके कमरेकी तरफ गई. वाहर अर्दली था, बोला—"साहव गुस्लमें हैं." मिथिलाने कुछ देर इन्तजार की. आखिर उपस्थितिमें पहुंची तो गृह-पतिने उसकी ओर मुड़कर नहीं देखा ! शीशेमें अपनी टाईकी नाट देखते-देखते कहा—"क्या है, सिस्टर ?"

एकाएक नर्सको नहीं सूझा कि क्या कहे. साहवने आइनेकी तरफ ही मुंह रखकर कहा—"क्विक सिस्टर, दो-एक शब्दमें कह दो, क्या है."

नर्स असमंजसमें रही. साहव मुड़े, मानो अव वह नाराज होनेको तैयार हैं.

नर्सने जोर लगाकर कहा—"आपके मित्र, वह—"

"तो ?"

"—शायद चले गए हैं."

"दैट्स गुड !" साहवने कहा, "तुम्हें धन्यवाद है सिस्टर !"

"जी वह—"

"तुम्हारी सेवाकी प्रशंसा करनी होगी. अच्छा सिस्टर..."

और वह जैसे नर्सको एक तरफ छोड़कर वढ़नेको हुए. नर्सके लिए कुछ शेष न रहा. उसे वहांसे चल देना ही हुआ. फौरन अपने कम-रेमें जाकर, पैक करके, हिसाव लेकर वह तैयार खड़ी गाड़ीसे अपनी जगह

चली गई. उसका मन अन्दर-ही-अन्दर झुंझला रहा था, जैसे उसे हार मिली हो, उसकी बुद्धिके पनको छेड़ दिया गया हो.

* * * *

मोहिनी आज सवेरेसे ही बेहद कष्टमें थी. जैसे रातमें भी कुछ उसके मनपर दवाव दे रहा था. सवेरे उठनेपर बैठककी हालत देखते ही उसका माथा ठनक गया था. जान गई थी कि कुछ अघट घटा है. कमरेको इधर-उधर देखा. चिन्ह स्पष्ट थे और उनमें बचनेका अवकाश न था. जैसे वह न चाहती हो उस सशयको जो उसके मनमें फूटकर निश्चय बनता जा रहा था, मानो सन्नद्ध हो कि इस सशयको निर्मूल कर डालेगी. इस तेजीसे वह सेफके दरवाजे तक गई. दरवाजा एकसाथ खुल आया. ऊपर से कहीं कुछ न था लेकिन देखा गया ताला टूटा है. बेहद कुशलतासे ताला तोड़ा गया था. बाहर कहीं चोटका निशान नहीं था. जेवरका बक्स उसने खींचा. बक्स था, लेकिन अन्दर कई डिब्बे गायब थे. कुछेक बचे ज्यों-के-त्यों रखे थे. उनको खोलकर उसने देखा, अन्दरकी चीज छुई भी न गई थी. अहतियातसे उसने बक्स सेफमें ही रख दिया. फिर, आहिस्तासे वह मेहमानके कमरेकी तरफ गई. देख लिया कि वहां वह नहीं है. अभी अंधेरा था. किसीने उसे नहीं देखा. चुपचाप उस कमरे के दरवाजे भिड़ाकर वह वापस चली आई. किसीसे कुछ नहीं बोली. उसे विस्मय था कि इतने बेमालूम तरीकेसे यह सब कैसे हुआ. आखिर चोरी कोई छोटी चीज तो है नहीं. और कोठीपर सदा आदमी तैनात रहते हैं. चौकीदारको क्या हुआ? और नौकरोंको क्या हुआ? और इस नर्म भले-मानसको क्या हो गया था? लेकिन उसने तनिक भी व्यग्रता नहीं जतलाई. वह सीधी अपने कमरेमें लौट आई. भीतर उसके गहरा कष्ट था. जैसे मुक्का मारकर उसके भीतरका कीमती कुछ तोड़ दिया गया हो. कुछ देर उसे कुछ नहीं सूझा. जान पड़ता था कि वह अभी चिल्लाएगी, चोर-चोर, चोर. लेकिन चिल्लाई वह नहीं. पतिको भी उसने नहीं जगाया. कुछ भी नहीं किया. आदतके मुताबिक नित्यकर्ममें लग गई और ... आदि

जल्दी निवृत्त होकर अपने पूजाके कक्षमें आ बैठी.

नहीं कह सकते, पूजामें वह क्या करती है, क्या कहती है. हमें नहीं मालूम कि क्या उसमें किया जाता है, भगवान क्या हैं, और कैसे उनकी आराधना हो सकती है, हम नहीं जानते. कहीं कुछ हो तो उसे कहा सुना भी जा सकता है. भगवानसे कोई कैसे क्या कहते-सुनते हैं, समझमें नहीं आता. प्रार्थनाकी जाए उससे जो हो. जिसका होना ही अपरिचित है, उसकी पूजा-प्रार्थना भगवान जाने कोई कैसे करता है. पर मोहिनी आज घण्टे-डेढ़-घण्टेसे भी ऊपर वहां बैठी रही. बाहर आई तब मिथिला सामने पड़ी और वह हम देख ही चुके हैं.

आज रोजसे कुछ देर हो गई थी. मोहिनी इसके लिए अपनेको अपराधी लग रही थी. लेकिन अभी नरेशका भी पता न था. चायके लिए कह-सुनकर और व्यवस्था करके वह पतिके कमरेकी तरफ गई और बाहरसे ही बोली—"क्या हो रहा है ? नाश्तेके लिए आ नहीं रहे ?"

"आता हूं, आता हूं."

उन शब्दोंमें छिपी हुई आज्ञा-पालनकी शीघ्रतापर मोहिनाका मन मानो दब आया. लेकिन जोर लगाकर बोली—"जल्दी करो, कितनी तो देर हो गई है."

जी हुआ कि एकाध सख्त-सुस्त शब्द और जड़ दे, जैसे तुम-सा काहिल मैंने नहीं देखा, इत्यादि. पर अपराधी मनको लेकर वह इस सीमा तक नहीं पहुंच सकी.

नाश्ता अक्सर बैठकमें ही मंगा लिया जाता है. जाते-जाते मोहिनी बोली—देखना, उधर बैठकमें."

आवाज आई—"अच्छा, हुजूर !"

बैठकमें पहुँचनेपर मोहिनी यह देखकर अचम्भेमें रह गई कि मेज पर वह खत, ज्योंका-त्यों अब भी बन्द, रखा ही हुआ है. सवेरे क्यों उसका ध्यान उधर नहीं गया, वह सोच नहीं सकी. झपटकर उसने पत्रको उठाया. क्षण-भर सामने लेकर उसे देखा. अबतक वह सिर्फ अंगिया

ही पहने थी. यही बाल खुले बिखरे थे. कुर्सीकी गद्दीको उठाकर लिफाफा उसने उसके नीचे दबा दिया और स्वयं उसपर बैठ गई.

स्वामी बोलते आए—"अहो-अहो, नाराज तो नही हो गई ? ये बाल क्यों खोल रखे हैं. जरा तो गरीबोंपर तरस खाया करो...अरे तुम्हारी वह आई हुई थी--मिथिला—"

"क्या !"

"मिथिला ही नाम है न उसका ? जाने क्या सुना रही थी. मैंने टरका दिया. क्या मामला है ? और आज तुम भी देवांगना दीखती हो. जैसे वस्त्र नही जानती, वल्कल ही जानती हो !"

इतनेमें ट्रे लेकर आदमी हाजिर हो गया.

बिना उसकी तरफ ध्यान दिए, जैसे आदमी न हो वह यन्त्र हो, मोहिनी घनिष्ट स्वरमें स्वामीसे बोली--"अच्छी लगती हूं !"

"अई, वाह, क्या पूछा है आपने भी—" आदमी ट्रे रखकर चला गया.

"हां, क्या मामला है ?"

"वह चले गए मालूम होते हैं."

"कौन, आपके हजरत ? लेकिन अस्पतालमें डिस्चार्जके लायक तो हो ही गए थे"

धीमेसे बोली—"हां--"

"नई मानना होगा," नरेश बोले, "कल बात हुई और आज तुमने टरका दिया. चलो, अच्छा हुआ. अब आ जाए चट्टा, चाहे उसका बाप !"

मोहिनी चुपचाप चाय बनाती रही. प्लेट लेकर उसमें अलग-अलग चीजें उठाकर रखती रही और प्लेट स्वामीके आगे सरका दी, प्याला भर भी बढ़ा दिया. अपने लिए भी कप बनाया और सिप करने लगी, बोली नही.

"कह दिया था मैंने कि बेगम साहिबाकी तबि

पार्टी इतवारको जमेगी. कटा तो बहुत, लेकिन क्या करता. यह बताओ कि उन हजरतको तुमने टाला कैसे ? वह तो मुझे ऐसे जीव दीखते न थे."

मोहिनीने धीमेसे उत्तर दिया—"अच्छे हो गए थे न ?...मिथिला क्या कहती थी ?"

"जाने क्या कहती थी ? मैं नहीं पसन्द करता मुंह लगाना ऐसे लोगोंको. सुना किसने कि क्या कह रही थी."

"मेरी शिकायत नहीं करती थी ?"

"वल्लाह ! मुझसे ?"

मोहिनीने नाराज होकर कहा—"तुम्हारी आंखें कहां रहती हैं ? चाहे तुम्हारा यह घर लुट जाए, तुम्हें कब पता होने लगा ?"

"अजी साहब, हमारा घर हो तब न ?" नरेशने कहा, "जिनका लुटेगा उनका लुटेगा. हमारी तो आप बरकरार रहनी चाहिएं."

सुनकर मोहिनीके माथेपर बल पड़े. जैसे स्वामीका यह प्रश्नहीन विश्वास उसे असह्य हो आया. बोली—"मुझसे नहीं होती इस सबकी चौकसी. कुछ ठिकाना है. कोठी तो इतनी बडी, नौकर तो इतने सारे, और यह-वह हर कमरेकी पहरेदारी मुझसे नहीं होती. और जाने क्या-क्या घरमें भर रखा है. बेकारकी सारी चीजें. क्यों जी, कभी तुम्हें यह नहीं होता कि छोटी-सी जगह हो और थोड़ी-सी चीजें और सब तरहकी फिक्रोंसे हम दूर रहें. यह ऊंच-नीचकी दुनिया, जहां नाप-नाप कर चलना हो, और बात-बातपर मान-बड़ाईका सवाल—"

"मोहिनी," नरेशने सांस खींचकर कहा, "क्या हुआ है तुम्हें ?"

मोहिनी क्षण-भर चुप रही, बोली—"पूछती हूं कि तुम्हें क्या हो रहा है कि खा नहीं रहे हो. यह तो जरा चखकर देखो !"

नरेशने बताई टिकिया उठाई और पूरी मुंहमें डाल ली. बोला—"बस ?" और उसको गलेसे नीचे उतारते हुए कहा, "अब बताओ, क्या बात है ?"

मोहिनीने कहा कुछ नहीं. खाली कपको पास लेकर फिर उसमें चाय डालने लगी

"यह क्या कर रही हो ?"

"अभी गरम है."

नरेशने कुछ नहीं कहा. भरा प्याला उसने अपने पास खींच लिया और हठात् सिप करने लगा प्रतीक्षा थी कि मोहिनी खुलेगी. लेकिन मोहिनीके भीतर क्या बीत रहा था, कौन जानता है. ऊपर तल गोया हो, भीतर वडवानल जगा था. नरेश चायके बहानेमें रहा और मोहिनी भी उसी तरह व्यस्त रही और कुछ देर कोई कुछ नहीं बोला.

थोड़ी देर बाद एकाएक असगत भावसे मोहिनीने कहा—"सुनो, चड्ढाको भेज देना, किसी समय तीसरे पहर"

"चड्ढा ? तुम तो उसे जानती भी नहीं हो."

"देखा तो है ही, पहचान भी हो जाएगी हमारे मेहमानसे उन्हें दिलचस्पी मालूम होती थी क्या यह अच्छा न हो कि पहली खबर हमसे उन्हें मिले कि वह स्वस्थ होकर चले गए"

"तो, मैं कह दूंगा"

"नहीं, नहीं, भेज ही देना"

"अच्छी बात है," नरेशने हसकर कहा, "लेकिन एक बात है, डिप्लो-मैटिक सर्विसमें तुम हो जाओ तो सच कहता हू वे भी दंग रह जाएं."

हसकर बोली—"कर दो डिप्लोमैटिक सर्विसमें तनख्वाह एक हजार, बोलो करवाते हो ?"

"अजी, वैसे ही हम कम नाचीज नहीं है तब कहा खबर रहेगी हमारी."

कहकर नरेश अपनी जगहसे उठा और मोहिनीकी कुर्सीके पीछे आकर धीमे-धीमे उसे सिरपर थपकते हुए कहा—"यू मस्ट नॉट वरी मोहिनी मस्ट नेवर वरी" (तुम्हें चिन्ता नहीं करनी चाहिए।
बिल्कुल चिन्ता नहीं करनी चाहिए."

हिनीने उस सम्बोधनके स्वरपर पसीजकर नरेशके हाथको खींच-
ने गालसे लगाए रखा, और चुप बैठी रही.

रेश अतिशय कृतज्ञ होकर उस स्थितिमें खड़ा रहा फिर वहांसे
हुए सामने आकर उसने कहा—"अच्छा, मोहिनी चलता हूं, चड्ढा
ज दूंगा."

कहकर नरेश चलनेको हुआ. मोहिनी सहसा बोली—"सुनो, इधर
तो."

उठकर वह नरेशको साथ सेफके आगे ले आई. उसे खोला,ज़ेवरके
सकी तरफ इशारा करके कहा—"इसे निकालो तो !"

नरेशने उसे निकालकर आज्ञानुसार मेजपर रखा.

"खोलो !"

नरेशने उसे खोला.

"देखते क्या हो, चीजें तो सम्हालो !"

नरेशने कर्तव्यपूर्वक डिब्बोंको अंगुलियां छुआईं. उन्हें जरा इधर-
उधर किया. कहा—"अच्छा, तो चलूं ?"

"देख लिया, सब हैं ?"

"भई, क्यों नहीं सब हैं ? वक्त नहीं है, मुझे जाने दो."

मोहिनीने गम्भीर होकर कहा—"सब नहीं हैं, चार बक्स नहीं हैं."

"नहीं हैं. तो मैं क्या करूं. भई, मुझे तंग मत किया करो. तुम
जानो, तुम्हारा काम जाने. मेरी तरफसे आज ही सब चला जाए, मुझे
क्या है ! लेकिन यह क्या जुल्म है कि मुझसे सब कहा जाता है? कहता
हूं, हटाओ यह सब मेरे सामनेसे, नहीं तो—"

नरेश मानो क्रोधमें वहांसे झपटकर चल पड़ा. मोहिनी स्तब्ध-भा
से उसे जाते देखती रह गई.

गलीमेंसे एक गली गई है. मकान यहां पक्के हैं, लेकिन कच्चेसे खराब हैं. धूप शायद ही कभी आती हो. वहां जो लोग बसते हैं, समाजमें माननीय नहीं समझे जाते. किसी तरह बसे जाना उनका काम है—बसे जाना और जीते जाना गलियां शहरमें और गन्दी किस लिए हैं ? शहर हो सकता है क्या जिसमें गलिहारे न हों ? शहर अगर शानदार होगा तो जरूरी है कि ऐसे कूचे भी हों जहां अंधेरा सिमट आए और हवा आकर वहांकी सीलनको छेड न सके. आलीशान इमा-रतोंसे इन गली-कूचोंको सीधा वास्ता है एकपर दूसरा टिका है. जरूरी है कि ये कूचे आबाद रहें, अगर किन्हीं औरको शाद रहना है.

हम गली-गली दो फर्लांग चल आए हैं. यह बाए हाथको उसमें से एक और गली फूटी. कुछ दूर चलनेपर एक नीची गहरी कोयलेकी दूकान है. बराबरसे उधर एक रास्ता अन्दरको जाता है, वह लम्बी सुरंगसा मालूम होता है. मुश्किलसे दो आदमी सटकर उसमेंसे चल सकते हैं. एक नाली उसमेंसे बहती हुई बाहरको ओर आती है जो टे-एक जगह पत्थरसे ढकी है और बाकी [illegible] हमें इसमेंसे जाना है.

तीसेक कदम चलनेपर एक सहन [illegible] है, जो खासा खुला है. इसके तीन तरफ एक मन्जिलके बने हुए [illegible] हैं. सामनेकी तरफ [illegible] मजिल भी कुछ बनी हुई है [illegible] है और बाकी [illegible] होते हैं. अचरज है कि ये [illegible] नहीं हैं, [illegible] हैं. यहां व्यवस्था नजर आती है और प्रवृत्ति. [illegible] हों, कुछ और हों.

ऊपरकी मंजिलपर [illegible] एक बजाज

जो जीनेके पास है और खासा बड़ा है—एक युवक, आधी आस्तीनकी वनियाननुमा शर्ट पहने, हाफ पैंटमें नंगे तख्तपर मेज अपने सामने लिए वैठा है. मेज भी नंगी है. वाईं तरफ एक ऐश ट्रे (सिगरेटकी राख झाड़नेका पात्र) है, सामने कागज फैलाए वढ़िया फाउण्टेनपेनसे कुछ लिख रहा है. वाएं हाथमें जलती हुई सिगरेट है. वह रह-रहकर रुकता है, खाली पाकर सिगरेटका कश लेता है और फिर झुककर कलम आगे वढ़ाता है. कागज फुलस्केप हैं, दो-तीन लिखे हुए दाएं हाथको अलग एक पत्थरके टुकड़ेसे दवे हैं.

युवक स्वस्थ है और वलिष्ठ. पर देह इकहरी है. उसका चेहरा हमारा पहचाना है, पर वह जैसे अधिक आत्मिक हो गया है. पिछली घटनाको दो हफ्ते वीत चुके हैं. लेकिन यहां वह न सहाय है, न जितेन है. न वह भाव है, न नाम. मानो निर्णीत है और आत्म-निर्भर. जैसे वह नियन्ता हो और परिस्थिति उसके नीचे हो. आस-पासकी परिस्थिति शून्य है, उसके वीच स्वयं वह अस्तित्ववान है

इस वार व्यक्ति देरतक रुका रह गया. यह भी ध्यान न आया कि इस खालीपनको भरनेके लिए उसके वाएं हाथकी अंगुलियोंके वीचमें थमी हुई सिगरेट धुआं दे रही है. वह सुलगी हुई सिगरेट जलती गई, यहां तक कि जलन उसकी त्वचाको छू गई. तव उसने सिगरेटके उस ठूंठको जोरसे मलकर वुझा दिया. अनंतर, क्षणके सूक्ष्म भाग तक ही वह रुका होगा. फिर झुककर तेज़ीसे कलम चला निकला. इस वार कुछ वीचमें न आ सका. सोच, न विचार, न झिझक. सामनेका पृष्ठ पूरा हुआ और पलट गया, दूसरा पृष्ठ भी पूरा हुआ और एक ओर कर दिया गया, और तीसरे पृष्ठको आधा लिखकर उसने दाहिनी तरफ सर-काया. फिर सव लिखे हुए पन्नोंको जमा करके वाकी कागजोंके ऊपर रखा और पत्थरके टुकड़ेको उसकी छातीपर. अव उसने अंगड़ाई ली, पैरसे मेजको दूर किया और उठ खड़ा हुआ.

कमरेमें ज्यादा सामान नहीं है. एक तरफ वांसकी चारपाई पड़ी

है, जिसकी अदवायनपर लिपटी दरी पड़ी है. सिरहानेके पास स्टूल है, जिसपर सिगरेटका टीन रखा है. उसने सिगरेट सुलगाई और कश खींचता हुआ वह कमरेमें टहलने लगा. टहलते-टहलते उसने कमरेके पीछेवाले दरवाजेकी चटखनी खोली और कहा—"माफ करना, अब मैं हूं, तुम आ सकती हो"

एक-दो मिनटमें एक स्त्री उधरसे कमरेमें आई. स्त्री ही उसे कहना चाहिए, लड़की कहते मन रुकता है. अवस्था अधिक नहीं है, पर मन कैशोर्य पार कर चुका है. चेहरे-मोहरेसे कमनीय, पर शान्त और समाविष्ट. बंगालिन जान पड़ती है. जैसे उत्तर-प्रदेशीय बननेका यत्न किया गया हो. साड़ीकी बाधमेंसे फिर भी कुछ अयुक्त व्यक्त होता ही है. हिन्दीमें बोली—"हो गया, लिखना ?"

विपिनने (यहां नाम उसका विपिन है) एकाएक मुड़कर उधर देखा. उसकी इधर पीठ थी, कहा—"हो गया कागज वह ले जाओ. कहना अभी टाइप करके भेज देना होगा."

"अभी ! पहले जरा......"

"तिन्नी !"

उसने बस इतना ही कहा, और निगाह उठाकर देख भर लिया. उस निगाहमें अनुल्लंघनीय कुछ था.

तिन्नी जिसको कहा गया वह उस निगाहके नीचे ठहर न सकी. कागज उठाकर कोनेमें पड़ी मेज परसे एक क्लिप लेकर लगाया और कागजोंको लिए जीनेसे उतरती चली गई

विपिन घूमता रहा. सिगरेटका सिरा आया तो एक तरफ उसे फेंक दिया फिर लौटकर चप्पलसे उसे मसलकर वहीं राख कर दिया. दो मिनटमें तिन्नी लौट आई.

विपिनने कहा—"कागज जरूरी थे तिन्नी !" वह नहीं बोली. मानो मुंह सूजा हुआ हो, वह सीधी कमरेके पारकी तरफ बढ़ती चली गई. विपिनके पाससे गुजरते हुए जरा अतिरिक्त भावसे अपने

जो जीनेके पास है और खासा वड़ा है—एक युवक, आधी आस्तीनकी वनियाननुमा शर्ट पहने, हाफ पेंटमें नंगे तख्तपर मेज अपने सामने लिए वैठा है. मेज भी नंगी है. वाईं तरफ एक ऐश ट्रे (सिगरेटकी राख झाड़नेका पात्र) है, सामने कागज फैलाए वढ़िया फाउण्टेनपेनसे कुछ लिख रहा है. वाएं हाथमें जलती हुई सिगरेट है. वह रह-रहकर रुकता है, खाली पाकर सिगरेटका कश लेता है और फिर झुककर कलम आगे वढ़ाता है. कागज फुलस्केप हैं, दो-तीन लिखे हुए दाएं हाथको अलग एक पत्थरके टुकड़ेसे दवे हैं.

युवक स्वस्थ है और वलिष्ठ. पर देह इकहरी है. उसका चेहरा हमारा पहचाना है, पर वह जैसे अधिक आत्मिक हो गया है. पिछली घटनाको दो हफ्ते वीत चुके हैं. लेकिन यहां वह न सहाय है, न जितेन हैं. न वह भाव है, न नाम. मानो निर्णीत है और आत्म-निर्भर. जैसे वह नियन्ता हो और परिस्थिति उसके नीचे हो. आस-पासकी परिस्थिति शून्य है, उसके वीच स्वयं वह अस्तित्ववान है

इस वार व्यक्ति देरतक रुका रह गया. यह भी ध्यान न आया कि इस खालीपनको भरनेके लिए उसके वाएं हाथकी अंगुलियोंके वीचमें थमी हुई सिगरेट धुआं दे रही है. वह सुलगी हुई सिगरेट जलती गई, यहां तक कि जलन उसकी त्वचाको छू गई. तव उसने सिगरेटके उस ठूंठको जोरसे मलकर वुझा दिया. अनंतर, क्षणके सूक्ष्म भाग तक ही वह रुका होगा. फिर झुककर तेज़ीसे कलम चला निकला. इस वार कुछ वीचमें न आ सका. सोच, न विचार, न झिझक. सामनेका पृष्ठ पूरा हुआ और पलट गया, दूसरा पृष्ठ भी पूरा हुआ और एक ओर कर दिया गया, और तीसरे पृष्ठको आधा लिखकर उसने दाहिनी तरफ सर-काया. फिर सव लिखे हुए पन्नोंको जमा करके वाकी कागजोंके ऊपर रखा और पत्थरके टुकड़ेको उसकी छातीपर. अव उसने अंगड़ाई ली, पैरसे मेजको दूर किया और उठ खड़ा हुआ.

कमरेमें ज्यादा सामान नहीं है. एक तरफ वांसकी चारपाई पड़ी

है, जिसकी अदवायनपर लिपटी दरी पड़ी है. सिरहानेके पास स्टूल है, जिसपर सिगरेटका टीन रखा है. उसने सिगरेट सुलगाई और कश खींचता हुआ वह कमरेमें टहलने लगा. टहलते-टहलते उसने कमरेके पीछेवाले दरवाजेकी चटखनी खोली और कहा—"नाउ इरला, अब मैं हूं, तुम आ सकती हो."

एक-दो मिनटमें एक स्त्री उधरसे कमरेमें आई. स्त्री ही उसे कहना चाहिए, लड़की कहते मन रुकता है. अवस्था अधिक नहीं है. पर मन कैशोर्य पार कर चुका है. चेहरे-मोहरेसे कमनीय, पर शान्त और मना-विष्ट. बंगालिन जान पड़ती है. जैसे उत्तर-प्रदेशीय बननेका यत्न किया गया हो. साड़ीकी बांधमेंसे फिर भी कुछ अयुक्त व्यक्त होता ही है. हिन्दीमें बोली—"हो गया, लिखना ?"

विपिनने (यहा नाम उसका विपिन है) एकाएक मुड़कर उधर देखा. उसकी इधर पीठ थी, कहा—"हो गया. कागज वह ले जाओ. कहला अभी टाइप करके भेज देना होगा."

"अभी ! पहले जरा......"

"तिन्नी !"

उसने बस इतना ही कहा, और निगाह उठाकर देख भर लिया. उस निगाहमें अनुल्लघनीय कुछ था.

तिन्नी जिसको कहा गया वह उस निगाहके नीचे ठहर न सकी. कागज उठाकर कोनेमें पड़ी मेज परसे एक क्लिप लेकर लगाया और कागजोंको लिए जीनेसे उतरती चली गई.

विपिन घूमता रहा. सिगरेटका सिरा आया तो एक तरफ उसे फेंक दिया. फिर लौटकर चप्पलसे उसे मसलकर वहीं राख कर दिया. दो मिनटमें तिन्नी लौट आई.

विपिनने कहा—"कागज जरूरी थे तिन्नी !" वह नहीं बोली. मानो मुंह सूजा हुआ हो, वह सीधी कमरेके पारकी तरफ बढ़ती चली गई. विपिनके पाससे गुजरते हुए जरा अतिरिक्त भावसे अपने पल्लेको

चाया. विपिनने कहा—"सुनो !" और उसके ठिठकते ही आगे बांहसे पकड़कर खाटपर बिठाते हुए कहा—"बैठो !"

तिन्नी बैठ गई.

"तुम ऐसे क्यों रहती हो तिन्नी ?"

वह कुछ नहीं बोली.

"मेरी इतनी फिकर न रखा करो. मैं आदमी जंगली हूं, तुम तो नती ही हो. देर-सवेर मेरे लिए कुछ नहीं है. खाना चलनेके लिए, जब जो हुआ पेटमें डाल लिया. अब साढ़े नौ बज गए हैं यही तो हती हो. भई, वह तो बजता ही रहता है. लेकिन ऐं—एक बात भूल गया—कैसी अच्छी तिन्नी हो. जरा जाकर पठानसे कहना कि तीनों जनें आ जाएंगे और भई, तैयारी तुम्हारी आज चारके लिए होगी. तीन और एक चार, समझीं ? मैं एक, बाकी तीन वे."

सुनकर बिना कुछ कहे वह उन्हीं कदमों जीनेसे उतरकर गई और कहकर वापस आ गई.

इस बार अपनी कृतज्ञताको विपिन रोक नहीं सका. आगे बढ़कर मानो उसका रास्ता रोककर खड़े होकर कहा—"नाराज हो."

नाराज थी भी तो इस प्रश्नकी वाणीको सुनकर वह कृतार्थ हो आई. जोरसे बोली—"हटो आगेसे."

विपिन सुनकर हट आया और उसकी कृतज्ञता प्रसन्नतामें नहा उठी. वह हलके कदमोंसे कमरेमें घूमता रह गया. असलमें अपनेको लेक[र] यह व्यक्ति कभी उद्विग्न हो जाता है. कुछ समझ ही नहीं पड़ता कि यहांका तर्क क्या है. अपात्र सब पा जाता है, पात्र कोरे हाथ रहता [है.] वह अपनेको गिनना नहीं चाहता, पर गिनतीके लिए वही बचता [है.] यहां इस जगह वह है कि उसके आदेशसे सब चलता है. उसकी [...] भंगीकी ओर सब देखते हैं. अन्दरसे वह कितना अशक्त है, वि[...] जर्जर. पर क्या है कि किसीके हाथ नहीं आता. सब उसे यहां [...] [...] झुकाते हैं.

"हाथ-मुंह तो धो लेते जरा !"

देखा, तिन्नी आकर अपने दरवाजेसे ही यह सुझा रही है वह स्तब्ध कृतज्ञतासे बंधा खड़ा यह देखता रहा. एकाएक कुछ भी नहीं कर पाया.

उसे क्या पता कि यह उसकी आत्म-ग्रस्तता ही दूसरेके लिए शक्ति बन जाती है. तिन्नीको उस क्षण बोध हुआ कि वह तुच्छ है, यह व्यक्ति महान् है. उसने कहा--"सुनते हो, हाथ-मुंह धो लो."

विपिनने कहा--"अच्छा."

तिन्नी लौटकर गई तो, पर जानती थी कि इस आदमीका ठिकाना नही है. कब क्या भूल जाएगा, पता नही है. वाल्टीमें पानी लिया, तौलिया कन्धेपर डाला, एक हाथमे पटरा उठाया और विपिनके कमरेके एक कोनेमें जिधर पानीके लिए नाली थी जाकर यथा-स्थान रख दिया.

विपिनने कहा--"यह क्या ! मैं आ तो रहा था"

तिन्नीने सुना नही सावुनका बाक्स, मजन, ब्रुश और जौभी आदि चीजें लाकर उसने चुपचाप वही पास रख दी और लौटकर वह जाने लगी.

विपिनने नाराज होकर कहा--"यह क्या है ! मैं कोई अपाहिज हूं ? आयन्दा तुमने यह किया तिन्नी—"

तिन्नी चुपचाप सुनती हुई कमरेसे बाहर चली गई.

विपिनने विद्रोह नही किया, सीधेसे पटरेपर आकर यथावश्यक निवृत्ति पाने लगा. पटरेपर ही था कि तिन्नीने आकर स्टूल खाली करके उसे तख्तके पास वाली वेंचके बराबर ला रखा, खाटको खीचकर तख्तके मुकाबलेमें मेजकी दूसरी तरफ डाल दिया. विपिन अपने काममें व्यस्त रहा.

जीनेसे जब आमन्त्रित तीनों जन ऊपर आए उस वक्त विपिन तौलिएमे मुंह पोछ रहा था. कहा—"आइए, आइए !"

तीनो बातें करते हुए आ रहे थे. वे बढ़ते हुए आ गए. अगल

धीरकी बात सुनकर विपिन खामोश रहा. वह अबतक बैठा न था--धीरने फिर कहा—"अब खतरा नही है, यहासे बाहर भेजकर ज़ेवरको नकद किया जा सकता है"

विपिनने कुछ भी उत्तर नही दिया. बल्कि वहासे हटकर वह साथ वाले कमरेमे गया, जाकर तिन्नीसे कहा : "लाओ, मुझे दो कुछ, मै लेता जाऊं."

"मै आ तो रही थी." तिन्नीने कहा, "इतनी भूख लग आई !"

"हां, भूख लगी है." गम्भीर भावमे विपिनने कहा—"लाओ, दो !"

"चलो लाती हू" तिन्नी बोली—"अभी देर है."

"कितनी देर है ?"

"चलो, कह तो दिया, मै आती हूं."

"लाओ, जो हो दे दो" कहकर विपिन अपनी टागोपर आ बैठा और घुटनोपर कोहनी टिकाए ठोडी दोनो हथेलियोमें लेकर कहा—"जेवर तुम्हारे पास है न. जगह बदलकर रख देना"

तिन्नीने नाराजगीसे देखा और कहा—"मुझसे नही रखी जाती जोखम"

"धीरे बोलो," विपिनने कहा—"कभी तुमने पहनकर देखा है ?" तिन्नीकी आखोमे कष्ट भर आया वह उस धृष्ट प्रश्नको झेलती हुई चुप रह गई"

विपिनने जल्दीसे कहा—"ठीक है तिन्नी, यह अमीरो के चोचले है. गरीब तो सादे भले. लाओ जल्दी करो." हठात् तश्तरियाँ खीचते हुए कहा—"सुना, जगह बदल देना"

दोनो हाथोमे तश्तरिया लिए प्रवेश करते हुए दूरसे ही विपिन बोला—"आप लोग भूखे हैं, मै जानता हू. कोई दम भी नाश्तेका वक्त है ! लेकिन कल कहलाकर आज मै भूल ही गया. लीजिए."

"आप बैठिए न, वह तो सब हो जायगा"

जाकर स्टूलपर बैठ गया, दो खाटपर बैठे.

"माफ कीजिए, अभी आया." कहता हुआ विपिन झपटकर गया और नलके पास वाली खुली पत्थरकी अलमारीपरसे कंघा-शीशा खींचकर जल्दी-जल्दी बाल ठीक करने लगा. एकाएक बोला—"तिन्नी !"

तिन्नी सामने दीख रहे कमरेके कोनेमें नाश्तेकी तयारीमें लगी थी. उसने निगाह ऊपर की.

"देखो, यह देखो." अपने गाल और ठोड़ीपर हाथ फेरते हुए कहा" – याद क्यों नहीं दिलाया ? अब वहां बैठा हूआ दिखूंगा कि नहीं. भई, गजब है, तीन रोजकी हजामत हो गई है—-".

तिन्नीने देख लिया, सुन लिया, और निगाह नीची कर वह अपने काममें लगी रही.

"देखना, दोपहर याद दिलाना न भूलना !" कहकर वह अपने तीनों मित्रोंके पास कमरेमें आ गया.

"सूर जी, अभी मेरे कागज तुमने देखे हैं न ? आज रवाना हो जाएंगे. ठीक है न ?"

"हां-आं, चेतनको दे दिए हैं टाइप करने.'

"तुम्हारी क्या खबर है, वीरजी ? पुलिसकी कोई सरगरमी है ?"

"वह तो है ही, लेकिन समझ नहीं आता कि क्या बात है ?"

''क्या बात है ?"

"कहीं कुछ सुनाई नहीं देता. पन्द्रह दिन हो गए. जेवरका अब नकद रुपया क्यों न बना लिया जाए ?"

"ठीक तो है." तीसरे व्यक्तिने कहा, "विप्पा यही करना चाहिए."

इन चारों आदमियोंके बीच एक कोड चलता है. उसमें वे तीन क्रमशः सूर, वीर और धीर कहे जाते हैं और विपिन उन्हें सदा 'जी' के साथ सम्बोधन करता है. उसका अपना नाम विप्पा है, जो विपिनका ही संक्षेप है. उसके साथ 'जी' नहीं लगता.

धीरकी बात सुनकर विपिन खामोश रहा. वह अबतक बैठा न था--धीरने फिर कहा—"अब खतरा नही है, यहासे बाहर भेजकर जेवरको नकद किया जा सकता है"

विपिनने कुछ भी उत्तर नही दिया. बल्कि वहासे हटकर वह साथ वाले कमरेमे गया, जाकर तिन्नीसे कहा "लाओ, मुझे दो कुछ, मै लेता जाऊं."

"मै आ तो रही थी." तिन्नीने कहा, "इतनी भूख लग आई !"

"हा, भूख लगी है." गम्भीर भावसे विपिनने कहा—"लाओ. दो !"

"चलो लाती हू." तिन्नी बोली—"अभी देर है"

"कितनी देर है ?"

"चलो, कह तो दिया, मै आती हू."

"लाओ, जो हो दे दो." कहकर विपिन अपनी टागोंपर का टेका और घुटनोपर कोहनी टिकाए ठोड़ी दोनो हथेलियोंमें लेकर कहा—"जेवर तुम्हारे पास है न. जगह बदलकर रख देना."

तिन्नीने नाराजगीसे देखा और कहा—"तुमसे नहीं रखी जाती जोखम"

"धीरे बोलो," विपिनने कहा—"कभी तुमने पहनकर देखा है ?" तिन्नीकी आखोंमें कष्ट भर आया. वह उस धृष्ट प्रश्नको झेलती हुई चुप रह गई"

विपिनने जल्दीसे कहा—"ठीक है तिन्नी. यह अमीरो के चोचले हैं. गरीब तो सादे भले. लाओ जल्दी करो." हठात् तश्तरियाँ खींचते हुए कहा—"सुना, जगह बदल देना"

दोनों हाथोमे तश्तरिया लिए प्रवेश करते हुए दूरमे ही विपिन बोला—"आप लोग भूखे है, मै जानता हू. कोई दस भी नाश्तेका वक्त है ! लेकिन कल कहलाकर आज मै भूल ही गया. लीजिए."

"आप बैठिए न, वह तो सब हो जायगा."

"अभी आया !" कहकर विपिन लौटकर गया और दो और तश्त-रियां ले आया.

उन एल्यूमीनियमकी तश्तरियोंमेंसे मठरी और हलुएके साथ न्याय करते हुए वे तीनों जेवरको तत्काल नकद कर लेनेके पक्षमें कुछ ऐसे निश्चयसे बात करने लगे कि उन्हें ध्यान नहीं रहा कि विपिन उस संबंध में चुप है. न यही कि नाश्तेकी तश्तरीमें से वह अपनी सामग्री उन्हींकी प्लेटोंमें रखता गया है, स्वयं उसने कुछ चखा भी नहीं है.

इतनेमें तिन्नीने लाकर चार प्याले चायके रख दिए जिनके नीचे रकाबी न थी. विपिनने चायका प्याला मुंहसे लगाया और धीरे-धीरे सिप करने लगा.

अब चाय आ जानेपर उसमें व्यस्त होकर एक-दो क्षणके लिए वे चुप हुए तब उनको मालूम हुआ कि विप्पा उनको देख रहा है, बोल नहीं रहा, और उनको असमंजस हो आया.

धीरने कहा—"आपने कुछ नहीं कहा कि आपकी क्या राय है ?"

"राय क्या हो सकती है ?" विपिनने कहा—"जेवरका मूल्य पैसा है. सबका मूल्य पैसा है. हमको असल मूल्य ही तो चाहिए. बाकीसे हमे क्या है. लेकिन ..बात यह है कि जेवरके जानेकी भनकतक कहीं सुनाई नहीं देती !"

"पुलिस चतुर है, अन्दर ही अन्दर भेद पिरो रही मालूम होती है." वीरने कहा.

"तुम्हारा तो वह क्षेत्र है वीर, क्या ज्यादा तुम पता नहीं लगा सके. कोठीका क्या हाल है ?"

"कहीं कुछ नहीं जान पड़ता. हम लोग खतरा पार कर गए हैं."

विपिनकी भौंहोंपर तेवर पड़े, उसने कहा—"नहीं, एक काम करना होगा."

कोई पूछे कि बिजली एकाएक कहांसे चमक जाती है. चारों ओर अन्धेरा है, ऐसा कि मानो एक नकारके नीचे सब हुआ मिट गया हो.

तभी कहींसे कोंध आती है एक बिजलीकी रेख जो सब कुछको चीरती हुई एक साथ चमक उठती है और चमका उठती है. ऐसा ही कुछ विपिन के साथ हुआ. दो गहनताएं, दो अन्धकार, मानो टकराकर एक तीखे प्रकाशको जन्म दे आए.

विपिनके माथेपर तेवर थे, आंखोंमें ठण्डी तीखी जलन, और वाणी में जैसे उपहास और अवज्ञा. कहा—"कर सकोगे ?"

जैसे सामने चुनौती आई हो तीनोंने कहा—"क्या है जो नहीं हो सकता ? बताइए, क्या करना होगा ?"

विपिन उनको नहीं देख रहा था, उनके सिरके ऊपर जाने पार वह कहां देख रहा था. बोला—"आप जेवरका नकद दाम करना चाहते हैं. दाम यहां सुनार या सराफसे नहीं मिलेगा. सोनेसे भी कीमती एक चीज होती है, उसकी कीमत अकूत है. सराफ तो सोनेका भी आधा मूल्य न देगा. लेकिन जिसके ये प्यारके हैं, उसके लिए तो अमूल्य हैं. तुमने तो देखे हैं, कितनेके समझते हो ?"

"आठ हजार मिल जाएं तो बहुत "

"आठ हजार ?" उसी भर्त्सनापूर्ण वाणीमें विपिनने कहा—"मैं कहता हूं पचास हजार !"

इस उद्‌गारकी ध्वनिसे तीनों सहम गए.

विपिनने कहा—"हां, पचास हजार, और एक पाई कम नहीं. न सिर्फ पचास हजार बल्कि—है हिम्मत ?"

तीनोंने आंख उठाकर विपिनकी ओर देखा. चेहरा उसका ऊपर उठा था. वह पार देख रहा था, जैसे देखता हो. तुच्छता कहीं न हो, एक तल्लीनता हो. उस चेहरेपर एक आत्मिक सौन्दर्यकी आभा मानो दीख आई. तीनोंको लगा यह पुरुष जैसे स्वप्नमें समाविष्ट हो. दुर्जेय हो और दुर्ज्ञेय. और तीनोंके मनमें हुआ कि ऐसे पुरुषकी सूझकी पूर्ति वे कर सकें तो यह उनके पौरुषकी कृतार्थता ही होगी.

"नहीं, एक पाई कम नहीं. लोग भूखों मरें और कुछ हजारों

लाखोंके सोने-हीरोंपर बैठकर सुन्दरताका और सभ्यताका अभिमान करे ! मैं कहता हूं, पचाससे एक पाई कम नहीं. बोलो, क्या चाहते हो ?"

तीनोंने कुछ नहीं कहा, केवल मूक स्वरसे अपनी तत्परता जतलाई. वह तत्परता ऐसी निश्चित और ऐसी प्रगट थी कि शब्दमें उघड़कर उसकी दृढ़ता कम ही हो सकती थी.

"ठीक है," विपिनने कहा—"तब हम अपनेसे आशा रख सकते हैं. तब देश हमसे आशा रख सकता है, और क्रान्ति हमसे आशा रख सकती है. जोखम अगर हमारे लिए खेल है तो यही चाहिए. चिपटते हैं जो जिन्दगीसे वे ही उसका स्वाद नहीं जानते. जीते हैं वे जो मौतसे खेलते हे जेवरोंकी मालकिनको पकड़कर लाना होगा. सुनो वीर, तुम पुलिस पर ध्यान रखो...कहना होगा अमीरोंको कि पुलिस उन लोगोंकी बाप है तो यह गोली हमारा ईश्वर है. हो सकता है कि उन्होंने दहशतसे पुलिसमें अबतक खबर न की हो. ऐसा है तो ठीक है. कहना है अगर आइन्दा भी पुलिसको न बतानेका इकरार दें तो जेवर उसको वापस मिल जाएंगे. लेकिन तब जब कि पचास हजार पहले इस हाथ दे दिए जाएं. बैठें वह अपने सोने और हीरेपर, उसे सेएं और सड़े. ये चीजें खाई नहीं जातीं, सिर्फ मान-बड़ाईके लिए जमा की जाती हैं. चाटें लेकर अपनी मान-बड़ाईको. उसीमें लिसकर सने पड़े रहें. मगर रुपया काममें आएगा. बेसहारेको वह सहारा देगा, भूखेको खाना देगा सुनते हो वीर और तुम भी सूर और तुम धीर, पचास हजारसे कम एक पाई तुमने लिया तो तुम निकम्मे हो. जीप तो अपनी है न ! उसी अपने जंगलकी जगह उसे ले जाना. याद रखना, एक आदेश तुम्हारे हाथमें है, और एक कर्तव्य. स्त्रैण न बनना, ममता न लाना. पुलिसका भरोसा वह न छोड़े तो फिर तुम होगे और तुम्हारी गोली. जानते ही हो कि कब तुम्हें क्या करना है. वह मुझे पूछ सकती है. कह देना मेरी आज्ञासे तुम कर रहे हो, और मुझे फुर्सत नहीं है...बोलो, कितना

समय चाहिए ?"

कहते हुए विपिन उसी अपनी मानवोत्तर अवस्थामें हो रहा. जैसे अशरीरी हो, भावना-शरीरी हो. यहां न हो, वहां ही हो स्थितिमें नहीं जहां मर्यादा है, केन्द्रित आकाशमें जहां सीमाकी पहुंच नहीं है.

विपिनकी इस अवस्थासे प्रभावित होकर उन तीनोंकी कल्पना खुल आई और चुनौतीसे आहत मनकी प्रेरणाके बलसे लहलहा उठी थी. तीनोंके मनमें चित्र उदय हो आए थे कि कैसे चुटकीमें इस कामको पार लगाया जा सकता है, और पचास हजारकी रकमको लाकर इस नायक पुरुषके चरणोंमें निछावर किया जा सकता है.

कहा—"जब आप कहें."

"एक सप्ताह ?"

"आज्ञा हो तो इससे भी कम."

"देख लो, वितसे बाहर काम लगे तो अभी कह दो—"

सुनकर उन सूर, धीर, धीरका मान और उत्तप्त हो आया गर्वसे कहा—"एक सप्ताहसे पहले ही आप देख लीजिएगा कि हम क्या करते हैं."

विपिन हंसा, मानो सदय हुआ हो, कहा—

"क्या करोगे ? गोली चलाकर मार दोगे ? तुम लोगोंका मैं जानता हूं यही बड़ा करना है ! लेकिन यह करना नहीं है, यह करनेकी हार है हार जाओ तभी ऐसा करना लेकिन तुम हारोगे नहीं" कहकर उस एक खाली एलुमीनियमकी प्लेट उठाकर चायकी प्यालीको बजाया इस पर तिन्नी वहां आई तो कहा—"तिन्नी, एक ही प्याला तुम समझती हो इन सूरवीरको कम होगा ? और लाओ भई."

तिन्नीने आगे बढ़कर प्याले उठाए देखा कि विपिनके सामनेवाला प्याला आधेसे ज्यादा भरा ही है तश्तरीके चेहरेसे भी वह समझने योग्य समझ गई. इस आदमीको भी वह जानती है एक उठती हुई कड़वी घूंटको गलेमें सटकती हुई प्यालों और तश्तरियोंको उठाकर वह

चुपचाप वहांसे चली गई. आकर उसी तरह चुपचाप उनमें दूसरी चाय देनेके लिए तैयार करने लगी.

इस तिन्नीके मनकी न पूछो. पचास रुपएमें वह इस आदमीके हाथ बिकी थी. बेचनेवाला उसका पिता था. मां उससे पहले ही जा चुकी थी. बापने पचास मांगे, पचास इस आदमीने दे दिए. वह डरती-डरती इस आदमीके पास आई. इसको तीन वर्ष हो गए हैं· अब उसकी अवस्था बाईस वर्षकी है. लेकिन उसका डर इस आदमीकी तरफसे न कभी पूरा हुआ है, न कभी हट ही पाया है. चाहती है, इसको इस दुनियासे छीनकर एकांत कहीं जंगलमें ले जाए और वहां मन्दिर बना कर दिन-रात इसकी पूजा करे. ऐसा निरीह तपस्वी पुरुष भी संसार में हो सकता है, यह उसकी कल्पनामें न आया था. १६ वर्ष यों क्या होते हैं, लेकिन इतनी अवस्थामें भी पिताकी कृपासे उसने काफी दुनिया देख ली है. दुनिया तो वही है, फिर यह आदमी कहां-कहांसे हो पड़ा है, उसकी समझमें न आता था. यह दुनियाका नहीं है. दुनिया उसके लिए नहीं है, तिन्नी स्वयं उसके लिए नहीं है, जैसे यहांका कुछ भी उसके लिए नहीं है. कहीं इसका मन ठहरते उसने नहीं देखा है. जाने सब के पार वह कहांपर रहता है. सब हालतोंमें उसने इस आदमीको देख लिया है. साथी-संगियोंमें, शराब-कबाबमें, ऐशो-इशरतमें, दैन्य-दारिद्रय में और विपुलतामें; अपने घनिष्ठ-से-घनिष्ठ शारीरिक सान्निध्यमें, रात्रि की एकांत वेलामें, और दिनके उजागर पहरमें. लेकिन जहां होता है, वहां यह आदमी नहीं होता. अभावमें होकर ऐश्वर्यमें जान पड़ता है, और वैभवमें होकर मुसीबतमें. स्त्री पास होती है तो मानो वह स्त्री अपनेको उस समय उससे सागरों दूर अनुभव करती है, पर दूर होती है तो अनुभूति पाती है कि वह उसके अन्तस्थमें है, दूर बिल्कुल भी नहीं है.

एकदम अबोध तिन्नी नहीं है. ज्ञान-विज्ञान तो नहीं जानती, पर जानती है कि यह जिस प्रकारके जीवनमें रहते हैं, कलुष-कल्मषसे घिरा

है. जानती है कि यह खुलेमें आएं तो पकड़े जाएं, जेल पाएं, शायद फांसी भी पा जाएं! जरूरी वह अधमाचार और पापाचार ही होगा. लेकिन फिर भी वह नहीं देख पाती है कि इनमें कहां है वह चीज जिसके लिए कानून इन्हें खोजता है और बन्द या खतम कर देना चाहता है. वह सोचती है, दुनिया शायद अपनेको ही नहीं जानती है.

वह दो प्यालोंमें चाय लेकर गई और रखकर चुपचाप लौट आई. आकर फिर बाकी दोनों प्याले लेकर जाने लगी तो विपिनने कहा—"यह क्या भई, चौथा क्यों? मैं क्या दूसरा कप कभी भी पीता हूं?"

तिन्नीने बड़ी व्यथाके स्वरमें कहा—"आज पी लो."

स्वर सहसा विपिनको छू गया उसने ऊपर देखा, कहा—"तिन्नी क्यों, आज क्यों?"

तिन्नीने कहा—"तो जाने दो."

"नहीं, लाओ," विपिनने कहा—"लाओ दो, तुम भी क्या कहोगी!"

विपिन हलका मुस्कराया. तिन्नी भीतर-भीतर धन्य हो आई, जो इस आदमीके हाथों शायद कम हो पाती है.

१४

फोनसे मालूम हो चुका था और मोहिनी स्वागतके लिए प्रस्तुत थी. उसने अकेले ही चड्ढामें मिलना चाहा था चड्ढा भरी-पूरी कायाके रौबीले पुरुष थे. अवस्था चालीसके आस-पास होगी उन्होंने मोहिनी का बहुत आभार माना और बताया कि कहीं एक बार पहले भी उनकी भेंट हुई थी. फिर कहा"—नरेश साहबमे कई बार जिक्र आप घर आना है, लेकिन उनको फुरसत कहां मिलती है! आज कहा [illegible]

याद फरमाया है. खुश किस्मत हूं और हाजिर हूं."

मोहिनी अपने कमरेमें ही थी. उपाहारकी सामग्री भी उसने वहीं मंगा ली थी. बोली—"हां, वह बार-बार कह रहे थे. मैंने कहा कि कहते क्यों हो, उनका घर है जब चाहें आएं. मालूम होता है, आप ही टालते गए. यों कहिए न कि खुद व्यस्त रहे होंगे ! और मेरे यहां एक मेहमान भी आए हुए थे. आते ही बीमार पड़ गए. उसीकी परेशानी थी. अब फ़ुर्सत पा सकी हूं तो देखिए पहली बात मैंने आपको बुलवाने की की."

चड्ढा सुनकर दंग रह गए, बोले—"मेहमान गए ? कब ?"

मोहिनीने हंसकर कहा—"आदमी आप जानिए हमेशाके लिए पट्टा लिखाकर तो बीमार नहीं होता !"

"जी हां, जी हां ! लेकिन कलतक तो जानेकी कोई बात न थी."

"यहां पलका ठिकाना नहीं, कलकी तो क्या कहिए !" मोहिनी मुसकराकर बोली, "हमारी किताबोंमें है कि स्त्रीके चरित्र और पुरुषके भाग्यको कोई नहीं जानता."

बातें कुछ इस तरहकी हो रही थीं कि चड्ढाको उत्साह हुआ. बोले—"संस्कृतकी कहावत है शायद. पर पुलिसके लोगोंको संस्कृतसे क्या वास्ता? नरेश साहब मेहमानका जिक्र करते थे. क्या काफी बीमार रहे ?"

"आए उसी रोज जानेका इरादा था," मोहिलीने कहा—"मगर रहना हो गया आठ रोज. इसे काफी ही समझना चाहिए."

"किस तरफ गए हैं ?"

"कहीं मैसूरकी तरफ बिजनेस बतलाते थे. उधर ही गए होंगे."

"छोड़िए. लेकिन एक बात है मिसेज नरेश, संस्कृतमें लोग कह तो काफी पतेकी बातें गए हैं."

"जी हां," मोहिनी मुस्कराई, "आप संस्कृत सीख क्यों न लीजिए ! अभी उम्र ही क्या है ? जल्दी आ जाएगी."

"नही साहब," चड्ढाने कहा—"अब हमें क्या आना-जाना है. ज्ञान की बातें जाननेसे हमें सरोकार भी क्या!.. सुनिए एक दिलचस्प मामला है. कुछ लड़के भी क्या होते हैं! शायद उनके सिरपर कोई नही होता, या कहीं जख्म खा बैठते हैं बस उन्हें और कोई काम नही, 'एक सरफरोशीकी तमन्ना,' इसी किस्मके एक साहबकी तलाश है. वह हजरत इस शहरमें दाखिल हुए, यह तो तमदीक हो चुका है. लेकिन जनाब शहर में हैं दस लाखसे ऊपर आदमी. आखिर सिरके बाल तो हैं नही कि कधी कीजिए और जूँ ऊपर आ जाए. यह तो इंसानोंकी बस्ती है–तरह-तरह के नमूने और हरको हर किस्मकी आजादी! जी हाँ, आजादीका जमाना है. लेकिन हमसे बदकिस्मत भी हैं जो पुलिसमें आजादी छीननेके लिए हैं... आपका क्या ख्याल है मिसज मोहिनी? बदनसीब हैं कि नहीं हम लोग? जवान लड़के हैं, तेज खून. खून रंग न लाएगा तो क्या लाएगा? या तो राह दीजिए, नही तो जवानीको उफननेसे कौन रोक सकता है? मुझे तो ऐसे लोगों पर फख्र होता है. देखिए कि दुनिया जब दुबकती है तब ये सामने आते हैं! सिर हथेलीपर लिए दिलेरीके वे करिश्मे दिखा जाते हैं कि दिमाग दंग रह जाए! जी हा, ये देशके सपूत हैं. आप क्या समझती हैं कि मैं पुलिसमें हूं तो इस खातिर कि मुल्कके इन नौनिहालोंको किसी कदर बचाए न रख सकूं? पेट है तो नौकरी है, और नौकरीको किसी तरह निभाए चलना है लेकिन सच जानिए मिसेज मोहिनी, यह दिल भी आजादी जानता है और उसके परवानोंको समझ सकता है...क्या नाम था आपके मेहमानका ?"

प्रश्न एकदम आकस्मिक तौरपर आया. क्षणके लिए मोहिनी विचलित हुई, पर सम्हल गई. पर हसकर बोली—"आप तो हमारे इतने नजदीकी हैं. फिर कैसे हुआ कि आपने हमारे दोस्त मेहमानका नाम अब तक उनसे दरयाफ्त करके न जान लिया ? उनसे आपने पूछा नही ?"

चड्ढा अप्रतिभ नही हुए. बोले—"जी हा, इस कदर झमेले रहते

हैं कि देखिए नामतक दर्याफ्त न कर सका. खयाल था कि मिलना होगा तब ही—"

"मैं बताती हूं—मिस्टर सहाय. पर वह दिलचस्प बात आप कह रहे थे. देखिए मैं आपसे साफ कहती हूं, पुलिसको अपने फर्जमें कोताही नहीं करनी चाहिए. मैं न जानती थी कि आप अंदरसे इन लोगोंके साथ हम-दर्दी रखते हैं जो सारे समाजी निजामको तहस-नहस कर डालनेपर आमादा हैं. फर्ज फर्ज है, और हमदर्दी झूठी भी हो सकती है. गलत जगह हमदर्दी नहीं दी जा सकती. यह जुर्म होगा. देखिए चड्ढा साहब, आपके लफ्जों से मालूम होता है कि आप उन सिरफिरे लोगोंको माफ ही नहीं कर देना चाहते, शायद शह भी देना चाहते हैं, जो लूट-मार और डकैतीके जरिए बदअमनी फैलाते हैं. आप जिम्मेदार पुलिस आफिसर हैं. आप अपनी जगह कच्चे होंगे तो आगे किससे क्या उम्मीद की जा सकती है ? देखिए हम लोग, सभी और लोग जो अमनपसन्द हैं, अपने कानून और अपनी पुलिसपर भरोसा बांधे बैठे हैं. हम बेफिक्र हैं कि आप लोग हैं. लेकिन क्या यह मानना होगा कि पुलिस अंदरसे कमजोर है और हमारी धन-दौलत पर, इज़्जत-आबरू पर, खतरा है ? मैंने इसलिए आपको याद किया था चड्ढा साहब कि कहूं कि कोठीपर आपका इन्तजाम पुख्ता होना चाहिए. मुझे अंदेशा है और मेरे यहां एक चोरीकी वारदात भी हुई है. कुछ कीमती जेवरके बक्स सेफमेंसे चोरी हो गए हैं. यह मैं पुलिसमें रिपोर्ट नहीं कर रही हूं, आपको आगाह कर रही हूं..."

चड्ढा चिहुंके—"आपके यहां चोरी! कब, कैसे ? मुझसे नहीं कहा गया !"

"हां, नहीं कहा गया. और अब भी नहीं कह रही हूं. क्या कीजि-एगा जानकर तफसील—"

"जी, नहीं, हमको अपना फर्ज पूरा करनेमें आपको मदद करनी होगी. कबका वाकया है ? क्या चीजें गईं ?"

"नहीं कह सकती, कबका है. मालूम आज हुआ है. चार चीजें थीं,

कीमत होगी दस-बारह हजारके अन्दाज लेकिन कह चुकी हूं, यह रिपोर्ट नही है...इस तरहके किस्से बढ रहे हैं और आप हमदर्दीकी बात कह रहे हैं. मुझे गुमान न था, न बैरिस्टर साहबकी बातोमे अंदाज हो सका कि आपका काम एक है, मन दूसरा; काम कानूनकी हिफ़ाजत है मन कानून को तोडनेवालोकी तरफ है."

चड्ढा बातोंकी गिरफ्तमे गम्भीर हो आए. बोले—"माफ़ कीजिए" मिसेज मोहिनी, आप मुझे गलत समझी. जुर्म बढ रहा है तो हमारी कोताहीसे नही. यह तो आजकी तालीम है. जिसका यह नतीजा है. मुजरिमोमे आज पढे-लिखे लोग ही ज्यादा है. उनके साथ ऐसी हमदर्दी के माने—"

"मै समझती हू" हसकर मोहिनीने कहा--"मुझे माफ कीजिए, यह बताइए कि आप कर क्या रहे हैं वारदाते दिन-रात बढ रही है. वह रेल गिरनेका किस्सा था, सुनती हूं अबतक उस सिलसिलेमें कुछ पक्का मालूम नही हो सका है. गिरफ्तारिया हुई, पर सब बेकार, और बेकसूर. आप क्या नही महसूस करते कि ऐसे अमनकी जिन्दगीपर खतरा बढ रहा है ?"

चड्ढाने गौरसे मोहिनीको देखा. कहा—"उम्मीद है, जल्दी ही वह गिरोह हाथ आ जाएगा. तय है कि असल मुजरिम इस शहरमें आया...माफ़ कीजिएगा मिसेज मोहिनी, आपके मेहमानसे मै मिलना चाहता था."

मोहिनी बीचमें ही हसकर बोली--"कहा क्यो नही ? फोन ही कर देते. आखिर आप मुझे पहचानते तो थे मुझे निहायत खुशी होती—आठ रोजका वक्त कम नही होता. हा मगर अब वह चले गए है तो—"

"देखिए, गलत न समझिएगा. ऊपरसे सख्त ताकीदें पूरा महकमा पिछले हफ्ते उसीकी जाचमें रहा है. पर सुराग नही आ रहा है. मेरी परेशानी आप समझ सकती है.

तो किए कराए पर पानी फिर जाएगा और हो सकता है नौकरीसे मुअत्तल होना पड़े."

मोहिनी इतने अधिकके लिए तैयार न थी. बोली—"छोड़िए, आप भी क्या ले बैठे ? काम जितना जिम्मेदारीका हो, परेशानी उतनी ही बढ़ती जाती है. मैं कुछ कर सकूं तो बताइए. चोरीकी बात भूल जाइए, क्योंकि नाहक उससे आपका बोझ बढ़ेगा. मैं आपकी मदद करना चाहती हूं. लेकिन इस तरफ आपका खयाल कैसे हुआ ?"

"कह नहीं सकता, कैसे हुआ. बातों-बातोंमें बैरिस्टर साहबसे मालूम हुआ कि ट्रेनके हादसेसे अगले सवेरे मेहमान आपके यहां पहुंचे थे. फिर मालूम हुआ कि बीमार हैं और घर ही रहते हैं. इससे सोचा कि देखना चाहिए. पर वह छोड़िए.. गए किस वक्त ?"

"कल शामसे ही इस हालतमें थे कि जा सकते थे. जानेकी बात भी आई थी और मुझसे इजाजत भी ले चुके थे. रात हम देरसे लौटे और आकर सो गए. मालूम होता है कि रात किसी वक्त ट्रेन मालूम करके चले गए होंगे."

सुनकर चड्ढाने मोहिनीको देखा, पूछा—"अपने आदमियोंसे आपने ठीक मालूम नहीं कर लिया ?"

मोहिनीने भी चड्ढाकी आंखोंमें देखा, वह मुस्कराई—"नहीं, मालूम नहीं किया." आगे हठात् बोली—"अब मालूम करूं ? कहिए बुलाऊं ?"

मोहिनीके हंसते हुए चेहरेपर एक तीक्ष्ण व्यंगका आभास देख चड्ढाने कहा—"नहीं, नहीं; जाने भी दीजिए—"

लेकिन मोहिनीने बटन दबाकर घण्टी दी. वह इस समय सन्नद्ध दीख रही थी, पर जैसे अप्रसन्न भी हो. चड्ढाने अपने भीतर अनुताप अनुभव किया. मोहिनीके सामने होकर उसमें आरम्भमें एक विजयकी आकांक्षा हुई थी. धीरे-धीरे उसमें हुआ कि अगर वह हार सके तो अच्छा है. पहले पौरुषकी चुनौती थी, फिर जैसे उसीको आमन्त्रण हो

आया. इस समय भीतर ही भीतर उसे अनुभव हुआ कि विजय समक्ष है. लेकिन हाथ बढाकर वह उस विजयको ले नहीं सका. मानो यह हीनता होगी, पौरुषकी यह पराजय हो जायगी; पौरुषकी विजयके लिए इस समय उचित है कि पुरुष पराजित ही हो जाए.

आदमीके उपस्थित होनेपर चड्ढाने मोहिनीको अवसर नही दिया, सीधे उसने कहा—"देखो, हमारे ड्राइवरसे जाकर कहो कि वह गाड़ी ले जा सकता है और आनेकी जरूरत नही है, हम पहुच जायगे.'

आदमीके जानेपर कहा—"मिसेज मोहिनी, माफ कीजिएगा मुझे अब याद आया कि चलते वक्त घरसे मुझसे कहा गया था कि हो सके तो गाडी फौरन लौटा देना. बातो-बातोमे मै भूल ही गया. आप लिफ्ट तो दे दीजिएगा न ?"

मोहिनीने चड्ढाको विस्मयके भावसे देखा. वह एक साथ इस आदमीके प्रति कृतज्ञ हो आई. लेकिन कही उसने अपनी हार भी अनुभव की. इसलिए हठपूर्वक बोली—"गाडी तो मिल जाएगी, लेकिन आपने आदमीसे पूछ नही लिया कि मेहमान कब आए थे ?"

चड्ढाने कहा—"आपका काम है, पीछे फुर्सतसे पूछती रहिएगा ?"

और उसके मनमे सन्देह पक्का होने लगा. उन्होने चाहा कि इस समय वह उस बातको मनमें कही पास भी न फटकने दें लेकिन यह उनसे सम्भव न हुआ. उन्होने चाहा कि यहासे अब वह जल्दी चले जाएँ. जैसे मोहिनीकी भी रक्षाका दायित्व अब उनपर हो. अब वह किसी भांति मेहमानकी या उसके सम्बन्धकी चर्चा नही उठाना चाहते थे. मानो अपने पूरे प्रयत्नसे वह अपनेको समझा रहे थे कि सब ठीक है, कही किसी तरहकी असगति नही है. मेहमान आया था, जैसे आते है; गया, जैसे जाते है. सब यथाविधि है.

मोहिनीने कहा—"आठ वर्ष पहले वह मेरे सहपाठी थे. फिर शायद बिजनेसमें चले गए. मुझे उनसे पढाईमे बडी सहाय[illegible]
चीज वहासे—उस साइडसे—एक्सपोर्ट होती है–

कहा, उसीके बिजनेसमें है. ऐसा कुछ बताते थे. मैंने ध्यान नहीं दिया—"

चड्ढा सुनते हुए बैठे रहे. उन्हें सुनना मुश्किल हो रहा था, कहा "छोड़िए भी, होंगे ! अब तो वह गए. इससे हटाइए."

पर जैसे लड़नेका यह सस्ता अवसर पाकर मोहिनीको सन्तोष न था. वह स्पर्द्धापूर्वक प्रतिपक्षको मानो पूरी तरह विध्वस्त और निरस्त्र कर देना चाहती थी. उसने कहा—"आते ही उन्हें बुखार हो आया था. निमोनियाके आसार दिखाई दिए. बीचमें तो सरसामका डर हुआ. डा० कपूरने वह तो बात सम्हाल ली और नर्सने भी अच्छी तीमारदारी की. जल्दी रोग काबूमें आ गया और चौथे-पांचवें रोज हालत सम्हली दिखाई दी."

चड्ढाको कष्ट हो रहा था. मोहिनीकी बुद्धिकी प्रगल्भतापर पहले उनमें उत्कण्ठा और स्पृहाका उदय हुआ, उनमें स्पर्द्धा जाग आना चाहती थी. यह नारी उन्हें अत्यन्त स्पृहणीय और कमनीय जान पड़ी थी. उसका रूप, उसकी कुलीनता, उसकी वाक्-चातुरी देखकर वह सहसा पराभूत हुए थे. उस पराभवमेंसे अदम्य आकांक्षाके अंकुर फूट निकले थे. उसी नारीकी ओरसे आती हुई यह नाहक सफाई उन्हें कष्टकर हुई. वह उसे नत-नम्र स्थितिमें न चाहते थे. बोले—"दुःख है कि मैं आपके मेहमानसे भेंट न कर सका. लेकिन क्या मैं आशा करूं कि वह जल्दी ही फिर आएंगे ? तब अवसर देना न भूलिएगा."

चड्ढाके इन शब्दोंसे मोहिनी ठीक-ठीक नहीं समझ सकी कि वह कहां है, जीती है कि हारी है. और मानो यह जाननेके लिए वह छट-पटाती रह गई. कारण, चड्ढा फिर अधिक देर न ठहरे, न उस सम्बन्धकी बात उन्होंने उठने दी, और मोहिनीको आतिथ्य और लिफ्टके लिए आभार देते हुए वह चले गए.

चड्ढाको बुलाते समय मोहिनी आत्म-विश्वस्त थी. उसमें कहीं किसी प्रकारकी शंका न थी. उसे अपनी बुद्धिका, शायद अपने रूप और

कौशलका भरोसा था. आग्रह-पूर्वक उसने अपने स्वामी नरेशसे स्वतन्त्र ही चड्ढासे मिलना चाहा था. चड्ढा आकर गए तब उसका विश्वास अपनेमें जैसे स्खलित हो आया. वह झुंझला आई. अलमारी के शीशेमें उसने अपनेको देखा. वह वही थी, वही अपराजेय रूप. उसकी समझ न आया कि यह क्या हो गया, उसे विश्वास न था कि चड्ढा अपने सन्देहको नष्ट पाकर लौटे है या और पुष्ट करके. वह फिर-फिरकर पिछली बातचीतके दृश्यको और क्रमको याद करती, पर उसमेंसे सन्तोष न खींच पाती

हम यही करते हैं. बहुत भरोसा अपना बांध लेते हैं ऐसे सच को छोड़ देते हैं, झूठको ओढ़ लेते हैं. झूठके तो पैर होते नहीं हैं, वह चल नहीं सकता. चलता है तो सचके पैरोंपर सवार होकर. बुद्धिमानीके जोरपर जब हम उसीको चलानेकी जिद करते हैं तो जिद गिरती है और लगता है जैसे हम हारते जा रहे हैं. पर हार वह हमारी नहीं होती, सिर्फ मिथ्याकी होती है—वैसे ही जैसे जीत हमारी नहीं होती, सिर्फ सत्यकी होती है.

लेकिन सत्य क्या ? क्या सब स्नेह-सम्बन्धोंको अस्वीकार करता जाय, वही सत्य है ? क्या उनकी पवित्रता और आन्तरिकताको निर्वस्त्र और निरवलम्ब करता जाय, वही सत्य है ? नहीं, तो फिर इस जगतमें कैसे चलना होगा ? सब-कुछ तो बाहर आनेके लिए है नहीं. अन्दर हमारे क्या कुछ घृण्य, कदर्य, अपरूप नहीं है ? वह भीतर बन्द है, इसीमें तो सान्त्वना है ऊपर रूप है कि अपरूप भीतर रहे. ऐसा है तो क्या उचित ही नहीं है ? इसमें अन्यथा क्या है ? क्या सत्य यह कि रूपको ऊपर नहीं रहने दिया जाएगा और अपरूप ऊपर और बाहर सब ओर फैलने देना होगा ?

नहीं, यह उलझन यों खुल नहीं सकती. उसे सुलझाना एक साधना है, बड़ी कठिन साधना है साध जाता है वह योगी है साधना यह कि स्नेहको सत्यसे कैसे मिलाया जाय. सत्य एक है, अखण्ड

नेरवलम्ब है, निस्संग और निर्बंध है. स्नेह नाते खोजता है. इसका, ासका, सबका उसे संग चाहिए. वह अपनेमें नहीं है, अन्यमें होकर ही ;. इससे वह सब ओर सम्बन्धोंकी सृष्टि करता है. सब सम्बन्ध गन्तमें बन्धन ही तो हैं. स्नेह उन बन्धनोंको रचता और फैलाता है. इन्हीं तारोंसे वह हमें यहां बांधता है कि एकाकी होकर हम सूख न जायं, अपना होकर हम उड़ न जायं.

कैसे योग होगा इन दोनोंका, सत्यका और स्नेहका, भगवान् जाने. लेकिन जैसे भी हो, आदमीको यही करना है. स्नेहको भी नहीं छोड़ना है, सत्यसे भी नहीं डिगना है. स्नेह उसका जीवन है, सत्य उसका जीव्य है. दोनोंके बिना वह कहीं नहीं है. लेकिन दोनोंमें मेल जो पूरी तरह नहीं बैठ पाता है, यही उसकी समस्या है ; इसीमें उसका पुरुषार्थ है.

मोहिनी अपनी झूंझलको समा नहीं सकी. क्या करे, उसे समझ नहीं आया. टेलीफोन उठाकर बोली—"सुनते हो, चड्ढा अभी गए हैं. क्यों तुमने भेज दिया था उन्हें अकेले मेरे पास ?"

"क्यों-क्यों, क्या बात हुई ? तुम्हींने न कहा था ?"

"यह कहा था मैंने ? छोड़ो, तुम उन्हें मिलोगे ?"

"कहो तो मिल सकता हूं."

"नहीं, जाने दो. कब आ रहे हो घर ?"

"भई, तुम तो जानती हो, जब पहुंच जाऊं."

"क्या जब पहुंच जाऊं ! जल्दी आना."

"किसकी पेशी है, हुजूर ? मेरी ?"

"हर वक्त मजाक नहीं. कहती हूं, जल्दी आना."

"अच्छा साहब, बन्दा छह बजे हाजिर हो जाएगा. और हुक्म ?"

मोहिनीने फोन बन्द कर दिया. अब भी उसको चैन नहीं था. वह नहीं जानती थी कि क्या करे, या क्या चाहती है कि करे. उसे विस्मय था कि उसने चोरीकी बात कह दी. वह सोचती थी कि यह निजी बात

है, निजी हानिकी बात है. जब्तपर स्वामीसे यह दी जाएगी, बस और क्या. वह सोचने लगी कि क्या इनका सम्बन्ध सड़ा अपने सन्देहसे जोड़ेगा ?...यह बड़ा बवाल है ! पता भी नहीं कि वह जितेन कमबख्त कहां होगा ? चीजें ले जानी थी तो ले जाता और मरता अपने में जाकर ! यह मेरे लिए यहां क्यों जंजाल रच गया ? विचार या व्यथाके सूत्र उसके मनमें स्पष्ट न थे. सब बेहद उलझा था और खण्डित मानके आवेशमें उफन-भुनकर रह जाता था. प्रकृतिस्थ क्षणोंमें कर्तव्यका कुछ विचार या भार उसे अधिक न मालूम होता था. लेकिन अब प्रकृतिस्थता उससे कोसों दूर थी और वह पराभवकी यातनामें जल रही थी.

सहसा उसे उस पत्रकी याद आई जो सवेरे गद्दीके नीचे उसने डाल दिया था. जाने कैसे वह उसको भूले ही रही थी, अब झपटकर उसने उसे खोला और पढ़ा. एक बार, दो बार कुछ देर पत्र वह हाथमें ही लिए रही. उसके चेहरेपर बलात् आशाकी झलक दीखी. मानो कि समाधानकी कहींसे रेख दीखी हो उसने आंख उठाकर घड़ीमें समय देखा. घंटी देकर आदमीको बुलाया डपटके साथ कहा—"यह सब यहां फैला पड़ा है, ध्यान नहीं रहता कि खुद उठाकर ले जाओ ? साफ करो सब अभी—"

आदमी प्लेट और बर्तन सब इकट्ठे करने लगा और वह देखती रही. फिर तो कहा—"सुनो, देखना अभी गाड़ी आ गई [illegible] गई हो तो खबर देना."

आदमीने खबर दी कि गाड़ी मौजूद है. मोहिनी [illegible] बोली—"पोर्चमें लगा दो."

"बहुत अच्छा" कहकर आदमी चला गया.

पत्रको लेकर फिर मोहिनीने गौरसे देखा. [illegible] था. वह किसी तरह उस स्थानको अपने अन्दर [illegible] यह स्पष्ट न हो पाता था. इसी समय उसको [illegible]

उसके अपने नाम उसमें एक ही पत्र था. खोलकर देखा तो उसमें सिर्फ दो पंक्तियां थीं न ऊपर स्थान था, न नीचे नाम. लिखा था—'न सोचती होंगी तुम कि ऐसे भी दुष्ट होते हैं! लेकिन होते हैं और ऐसे कि उन्हें क्षमा मांगनेकी भी आवश्यकता नहीं!'

क्षणभर इस पत्रको वह हाथमें लिए रही. फिर उसने उसे जोरसे फाड़कर बारीक चीर दिया और रद्दीकी टोकरीमें फेंक दिया. अनन्तर तेजीसे चलकर वह पोर्चमें गई. ड्राईवरसे कहा कि उसकी जरूरत नहीं है और वह खुद ड्राइव करती हुई उसी समय गाड़ी बाहर ले गई.

वक्त तीसरे पहरका था. धूप तेज थी. लेकिन वह घूमती रही, घूमती रही. पर उस जगहको न पा सकी जिसका अधूरेसे भी कम पता उसके पास था. घण्टे भरसे अधिक वृथा प्रयत्न करके वह घर लौट आई और स्वामीकी प्रतीक्षामें अपनें दुखते सिरको लेकर एकान्तके ...ाममें लेट रही.

१५

नरेशके आनेपर मोहिनीने कहा—"चड्ढा अपनेको क्या समझते हैं? बहुत होशियार समझते है?"

नरेशने विस्मयसे पूछा—"क्यों, तुम्हें नाराज तो नहीं कर गया? आदमी तो अच्छा है. क्या बात हुई!"

"बात हुई कि मैंने कहा, वह अच्छे हो गए थे, जा सकते थे औ[र] हम देरसे जो घर लौटे तो इसी बीच वह किसी ट्रेनसे चले गए. इसप[र] वह कुछ-कुछ पूछने लगें. पूछती हूं उन्हें पूछनेका क्या हक है? यकी[न] न लानेका क्या हक है?"

"कोई हक नहीं है," नरेशने उसी तरह मुस्कराते हुए कहा—"बुलाकर कह दूंगा उसे कि सुनते हो, तुम्हें कोई हक नहीं है."

मोहिनी बिगड़ आई, बोली—"तुम्हें तो हंसी सूझती है हर वक्त. कभी तो तरीकेसे बात किया करो."

नरेशने हंसकर कहा—"बहुत अच्छा, तरीकेसे लीजिए, कहिए—"

"पूछती हूं, बताओ मैं क्या करूं ?"

"बजा है, बताता हूं. यह कीजिए कि कुछ न कीजिए. मजेमें और आराममें रहिए और किसीके बीच न आइए. आए थे जो हजरत विदा हुए. चलिए, छुट्टी हुई. उनके कारनामे उनके साथ और किस्मत उनके साथ. किस्मतके खेलमें बताइए हम क्या कर सकते हैं ! यही कर सकते हैं कि दखल न दें. कहिए, तरीकेसे कह रहा हूं न मैं ?"

मोहिनी इस व्यक्तिको देखती रही. वह उसका स्वामी है, बरसोंसे साथ है. पर क्या वह उसे पूरा जानती है ? उसकी बातमें वह कुछ समझ नहीं सकी, बोली—"तुम क्या सोचते हो ?"

"मैं सोचता हूं ? जी नहीं, मैं उस किस्मका काम नहीं करता यह बताइए कि आप क्या मुझे सोचनेके लिए कहती हैं ?"

"चड्ढा क्या चाहते हैं ?"

"मुझे यही नहीं मालूम कि आप उससे क्या चाहती हैं? शायद आप दोनों एक-दूसरेको मात देना चाहते हैं क्यों, यही बात है न ?"

मोहिनीने कहा—"मैं नहीं समझी—"

"मैं समझाऊंगा भी नहीं." नरेशने तनिक गम्भीरतासे कहा—"समझके लिए जगह अदालत काफी है. वहां अक्लकी पैंतरेबाजी चलाए जाइए जितनी चला सकते हैं मैं उससे आजिज हूं मैं सही और सीधे का कायल हूं. टेढ़ेसे चक्कर बनता है, बात नहीं बनती. शायद हम चक्कर के ही शौकीन हैं. हो सकता है खेलका वहीं मजा हो. [illegible] और सीधा भी कभी चाहिए. नहीं तो दुनिया जाल बनी रहे [illegible]

सके अपने नाम उसमें एक ही पत्र था. खोलकर देखा तो उसमें सिर्फ
। पंक्तियां थीं न ऊपर स्थान था, न नीचे नाम. लिखा था—'न
ोचती होंगी तुम कि ऐसे भी दुष्ट होते हैं ! लेकिन होते हैं और ऐसे
ꯕ उन्हें क्षमा मांगनेकी भी आवश्यकता नहीं !'

क्षणभर इस पत्रको वह हाथमें लिए रही. फिर उसने उसे जोरसे
ाड़कर बारीक चीर दिया और रद्दीकी टोकरीमें फेंक दिया. अनन्तर
ाजीसे चलकर वह पोर्चमें गई. ड्राईवरसे कहा कि उसकी जरूरत नहीं
है और वह खुद ड्राइव करती हुई उसी समय गाड़ी बाहर ले गई.

वक्त तीसरे पहरका था. धूप तेज थी. लेकिन वह घूमती रही,
घूमती रही. पर उस जगहको न पा सकी जिसका अधूरेसे भी कम
पता उसके पास था. घण्टे भरसे अधिक वृथा प्रयत्न करके वह घर
लौट आई और स्वामीकी प्रतीक्षामें अपने दुखते सिरको लेकर एकान्तके
विश्रामें लेट रही.

१५

• • •

नरेशके आनेपर मोहिनीने कहा—"चड्ढा अपनेको क्या समझते
हैं ? बहुत होशियार समझते है ?"

नरेशने विस्मयसे पूछा—"क्यों, तुम्हें नाराज तो नहीं कर गया ?
आदमी तो अच्छा है. क्या बात हुई !"

"बात हुई कि मैंने कहा, वह अच्छे हो गए थे, जा सकते थे और
हम देरसे जो घर लौटे तो इसी बीच वह किसी ट्रेनसे चले गए. इसपर
वह कुछ-कुछ पूछने लगे. पूछती हूं उन्हें पूछनेका क्या हक है ? यकीन
न लानेका क्या हक है ?"

"कोई हक नही है," नरेशने उसी तरह मुस्कराते हुए कहा—"बुलाकर कह दूंगा उसे कि सुनते हो, तुम्हें कोई हक नही है."

मोहिनी बिगड आई, बोली—"तुम्हे तो हसी सूझती है हर वक्त. कभी तो तरीकेसे बात किया करो."

नरेशने हंसकर कहा—"बहुत अच्छा, तरीकेसे लीजिए, कहिए—"

"पूछती हूं, बताओ मै क्या करूं ?"

"बजा है, बताता हूं. यह कीजिए कि कुछ न कीजिए. मजेसे और आरामसे रहिए और किसीके बीच न आइए. आए थे जो हजरत विदा हुए. चलिए, छुट्टी हुई. उनके कारनामे उनके साथ और किस्मत उनके साथ. किस्मतके खेलमे बताइए हम क्या कर सक्ते है ! यही कर सकते है कि दखल न दे. कहिए, तरीकेसे कह रहा हूं न मै ?"

मोहिनी इस व्यक्तिको देखती रही. वह उसका स्वामी है, बरसोसे साथ है. पर क्या वह उसे पूरा जानती है ? उसकी बातसे वह कुछ समझ नही सकी, बोली—"तुम क्या सोचते हो ?"

"मै सोचता हूं ? जी नही, मै उस किस्मका काम नही करता यह बताइए कि आप क्या मुझे सोचनेके लिए कहती है ?"

"चड्ढा क्या चाहते है ?"

"मुझे यही नही मालूम कि आप उससे क्या चाहती है ? शायद आप दोनो एक-दूसरेको मात देना चाहते है क्यो, यही बात है न ?"

मोहिनीने कहा—"मै नही समझी—"

"मै समझाऊंगा भी नही." नरेशने तनिक गम्भीरतासे कहा—"समझके लिए जगह अदालत काफी है. वहा अकलकी पैतरेबाजी चलाए जाइए जितनी चला सकते है मै उससे आजिज हू मै सही और सीधे का कायल हूं. टेढेसे चक्कर बनता है, बात नही बनती शायद हम चक्कर के ही शौकीन हैं. हो सकता है खेलका वही मजा हो पर साफ और सीधा भी कभी चाहिए. नही तो दुनिया जाल बनी रहे और होशियारी

ही रह जाए, असलियत न रहे. देखिए आपके मेहमान होशियार किस्म के न थे, शायद आप यह नहीं कह सकतीं."

मोहिनीने झिटककर कहा—"क्या मतलब ?"

नरेशने कहा—"खैर, चड्ढा यही चाहता है कि उसे ऐसे ही आदमियोंसे वास्ता हो, जिनमें गुन हो, बांक हो, जिनसे उसे काम मिले, आजमाइश मिले. इधर वह नाकाम रहा है. किसीकी अकल उससे बाजी ले जाती रही है. तुम जानती हो, हर खेलमें दो पालियां रहती हैं. दोसे दाव बनता है. यह जिन्दगीका खेल है, हार इसमें कोई नहीं मानता ; यानी बदा-बदी कायम ही रहती है. मैं अदालतका जीव ठहरा. वही दो के बीच पाला है, न्यायकी लकीर एकको एक तरफ और दूसरेको दूसरी तरफ रखती है. बस वहाँसे सजा और जुर्म इन दोनोंकी जड़ें छूटती रहती हैं और अखाड़ेमें कुश्तियाँ चलती रहती हैं. इधर खास किस्मके जुर्म गाल र हो रहे हैं जिनके लिए चड्ढा खास किस्मके आफिसर हैं. जुर्म की पालीमें इस बार कोई तेज आदमी शामिल है जो रह-रहकर चड्ढा को मुंहकी दे रहा है....क्या खयाल है, आपके सहाय तेज आदमी न थे ?"

मोहिनीने तेजीसे कहा—"नरेश !"

"नहीं, बेजा न मानिए. तेजी मैं पसन्द करता हूं. कुंद और भोंथरे भी भला आदमी हैं ! नहीं, आदमी पानीदार चाहिए. न होती मुझे यह सब रहने-सहनेकी आसाईश तो आप समझतीं मैं बसभर धार पाए बिना रहता ? लफ्ज हैं न 'हैव्ज' और 'हैवनाट्स'. उनके विग्रहमें कुछ सचाई तो माननी होगी. मैं समझता हूं, जो जुर्म नहीं करते, वे जुर्म कराते हैं. जो दोनों नहीं करते वे गिनतीके लायक नहीं. आप तो चिहुंकती हैं! मैं कहता हूं कि यह है वह, क्या—हां, 'लाजिकल करोलरी' (तर्क-संगत निष्कर्ष). दबेगा वह उभरेगा. दबाना उभारनेका गुर है. क्या समझीं ?"

मोहिनीने झल्लाकर कहा—"पहेली न बुझाओ. चड्ढा उनके पीछे

मालूम होते है."

नरेशने हँसकर कहा--"क्यों पीछे मालूम होने है ?"

मोहिनीने सुनकर नरेशको देखा. वह बिगड आई. बोली—"मुझसे व्हम करोगे, जिरह करोगे ?"

नरेशने कहा—"भई, वात माफ रखनी होगी, दो टूक—नहीं तो मेरी बैरिस्टी नहीं चलेगी."

"लो, माफ लो," मोहिनीने झुँझलाकर कहा—"वह मेरे पहले प्रेमी थे. अब कहो क्या कहते हो ?"

"नहीं, कुछ नहीं कहना. तो नम्बर एक, प्रेमी थे. नम्बर दो?"

मोहिनीने चीखकर कहा—"मुझे मार क्यों नही डालते तुम !"

तटस्थ, प्रकृतिस्थ भावसे नरेशने कहा—"यह बात मामलेमे अस-गत है. एक बात कि प्रेमी थे, दूसरी बात—? चलो बताओ, केस बनने दो."

आख फाड़े मोहिनी इस अपने स्वामीको देखती रह गई

"देखो मोहिनी," नरेशने कहा—"मैं अन्धा नही हू आखे तुम्हारा रूप देखती है वे जो देखती है देखकर यह मानना जान-बूझकर अन्धा बनना होगा कि कोई समझदार आदमी तुम्हारा प्रेमी हुए बिना रह सकता है. वह आपके महाशय मेरी समझमें जरूर नासमझ न थे लेकिन उन सबका, अर्ज है, केससे ताल्लुक नहीं है, आगे कहो."

"ट्रेन उसीने गिराई थी"

"हा ? और तुमसे उसने कबूल किया ?"

"हां, अपने ही कह दिया."

"बहादुर आदमी है.. फिर ?"

मोहिनी दंग रह गई. बेबस बनी बोली—"तुम राक्षस तो नहीं हो ?"

नरेशने कहा—"नहीं मोहिनी, तुम्हारी खबर झूठी है कि आदमी राक्षस होता है. और प्रेमी बहादुर ही हो सकता है. अब आगे तीसरी?"

"उसीने जेवर चुराए हैं."

"जेवर ! कौन-से ?"

"उस दिन तुम्हें बताए थे न !"

"ओह, वोह. लेकिन मैं तो समझा नहीं. पर भई, यह बात मेल नहीं खाती. बहादुरीसे इसका जोड़ नहीं बैठता. और जरूर बहादुर ही होना चाहिए उसे जो तुमसे प्रेम करे. बाप रे तुम्हारे मिजाज !—नहीं, मुझे सोचने दो."

मोहिनी भौंचक इस आदमीको देखती रह गई,

नरेश सचमुच माथेपर अंगूठा देकर थोड़ी देर स्थित और स्तब्ध बैठा रहा. मानो कुछ उसके माथेमें न आ रहा था, निकल-निकल जाता था.

एकाएक आंख खोलकर बोले—"हैन्ज और हैवनोट्स. क्यों मोहिनी, वही बात है ?"

मोहिनी दृढ़तासे बोली—"नहीं."

आश्चर्यसे नरेशने कहा—"फिर ?"

मोहिनीने कहा—"जाने दो. यह बताओ, अब क्या करना है ?"

नरेशने पूछा—"किसमें क्या करना है ? चाहती हो वह पकड़ा न जाए ?"

"तुम क्या चाहते हो ?"

"दखल न देना."

"चाहते हो गिरफ्तार करा दूं ?"

"वह भी एक तरह दखल देना होगा."

"फिर ?"

नरेशने मोहिनीको देखा. देखते रहे. उस दृष्टिमें स्निग्धता थी. उसमें एक विश्वास था, जो सब सन्देहको समा सकता था. उन्होंने कहा —"मोहिनी, प्रेमपर कोई दायित्व नहीं होता, उसे कुछ करनेकी आवश्यकता नहीं होती. कुछ न करोगी तो भी प्रेम अकृतार्थ न होगा. सम

भली तो हो न मोहिनी ? छोड़ो, यह बताओ चन्द्राकी जेवरकी चोरीकी बात मालूम है ?"

"मालूम है."

"पूछ सकता हूं, क्यों मालूम है ?"

"मेरी गलतीसे मालूम है."

सुनकर नरेश कुछ देर ठहर गया. फिर भरी सांस छोड़कर बोला—"कोई गलती भारी पड़ जाती है, मोहिनी !"

मोहिनी इस व्यथाके स्वरको झेलती हुई बोली—"भारी क्या पड़ जाएगी? चीज चोरी गई है, क्या इस बातको कहा भी नहीं जा सकता?"

"अपने प्रेमसे पूछो, मोहिनी ! कहा जा सकता है ?"

दृढ़पूर्वक मोहिनीने कहा—"हां, कहा जा सकता है; अगर्चे अभी मैंने कहा नहीं है."

नरेश जैसे कातर हो आया. बोला—"अपने विरुद्ध न जाओ, मोहिनी ! अपने प्रेमके अस्वीकारमें क्या है? जिसने चुराया, तुम जानती हो, सिर्फ इसलिए कि वह उसे उस तरह गैर न समझ सका, मानो उसे उसने अपने हरता माना. मतलब कहना है तुम्हारा कि वह चोरी है ?"

हां, सरासर चोरी है. और तुम्हें क्या हो गया है? तुम मेरी खातिर नफरत भी नहीं कर सकते ?"

"तुम्हारी खातिर ही तो नहीं कर सकता हूं, मोहिनी ! नहीं तो नफरत क्या मुश्किल है."

मोहिनी इस समयके नरेशका बिल्कुल न समझ सकी. उदारता वह समझ सकती थी. लेकिन यह तो हद पारकी वस्तु थी, जैसे व्यंग्य और विडम्बना ही न हो. बोली—"खैर छोड़ो, बताओ कि क्या करना चाहिए ?"

"मैं समझता हूं, कुछ नहीं करना चाहिए," हंसते हुए नरेशने कहा—"और जो बचा है उतने ही जेवरसे काम चला सकना चाहिए."

मोहिनी जैसे हारकर हार रही थी. उसे यह [illegible] लगा.

बोली—"यह तुम क्या कह रहे हो ?"

"ठीक कहता हूं, मोहिनी ! पुलिसकी मदद करना हमारा अतिरिक्त धर्म हो, निज धर्म नहीं है. उसके वगैर भी चल सकता है. और मेरे खयालमें गए जेवरके वगैर भी चल सकता है."

"सुनो," मोहिनीने कहा—"अभी कुछ पहले मैं उसकी तलाशमें गई थी. कहीं पता नहीं मिला."

"कहां गई थीं तलाशमें ?"

मोहिनीने वह पत्र निकाला और नरेशको दिया. आज आया दूसरा पत्र भी उसके हाथोंमें थमा दिया.

नरेशने दोनोंको पढ़ा. दोनोंके लिफाफोंको उल्टा-पल्टा. पहले पत्रको सामने करके कहा—"यह यहां कैसे रह गया ?"

"जितेनने पढ़ा नहीं था. पढ़नेको मुझे ही कहा था."

"जितेन !—सहाय नहीं ?...अच्छी बात है...तो पढ़ा नहीं था... खैर तुम इसके सहारे चल पड़ी. चलो जो हुआ, हुआ. अब कहीं आने-जानेकी जरूरत नहीं है. चड्ढासे मैं ठीक कर लूंगा. पर क्यों जी, वह आदमी इन हरकतोंसे वाज नहीं आ सकता और तुम यह नहीं कर सकतीं ?....ठीक बताओ, क्या चाहती हो ?"

"ठीक पूछते हो !" मोहिनीने कहा—"चाहती हूं कि पुलिस उन्हें न पकड़ पाए."

"क्यों न पकड़ पाए—"

अविचल मोहिनीने कहा—"चाहती हूं वह खुद पुलिसके हवाले अपनेको कर दें."

नरेश सुनकर हंसा, बोला—"इससे फर्क तो नहीं पड़ेगा."

"पड़ेगा," मोहिनी जोरसे बोली—"बहुत फर्क पड़ेगा."

"तुम इसी कोशिशमें हो? यानी आप फांसी पाए, पुलिससे नहीं ?"

किन्तु मोहिनीने कोई उत्तर नहीं दिया. जैसे इसका उत्तर उसके वाहर सबके लिए अनावश्यक है. वह कुछ देर अपनेमें समाई रही, अंत-

मुंह ऊपर उठाए देखती रही. फिर उन घुटनोंपर सिर टेककर बोली —"ओह यह क्या करते हो ? मैंने क्या किया है, बताते क्यों नहीं ? मैं तुम्हारी माफी मांगती हूं."

नरेश झुका. रुमाल निकालकर उसने आंखें पोछीं और मोहिनीके चेहरेको अपने घुटनोंसे उठाते हुए कहा—"मोहिनी, सुनो, तुम जाओ, जरा घूम आओ."

"कहां घूम आऊं ?"

"गाड़ीमें घूम आओ. मुझे थोड़ी देरके लिए छोड़दो."

"तुम्हे छोड़ दूं ? और तुम मुझे माफ नहीं करोगे ?"

"यह सब छोड़ो, मोहिनी ! तुम जानती हो मुझे शिकायत नहीं है- लेकिन इस समय तुम जाओ, कष्ट न पाओ."

कुछ था नरेशके स्वरमें जो प्रश्नका अवकाश न छोड़ता था. फिर भी मोहिनीने कहा – "मैं जाऊं, तुम कहते हो ?"

"हां, जाओ मोहिनी ! मेरी प्रार्थना है"

मोहिनीने ऊपर देखा. देखा कि चेहरा शान्त है. विकल्प उसपर नहीं है, न विकार. मानो सब सम्बन्धोंसे वह स्वस्थ है. जैसे वह स्वयं उसके लिए इस समय असंगत हो. वह खड़ी हो आई और उसमें काठिन्य उभरा. बोली—"अच्छा, इसमें सन्तोष है तुम्हें तो मैं जाती हूं."

कहकर वह चली. अपेक्षा थी कि अब भी वह रोकेंगे. पर नरेश-ने कुछ नहीं कहा, वह अचल अविचल ही बने रहे. कमरेसे बाहर आकर मोहिनी कुछ क्षण अनिश्चयमें रही. फिर कहीं और न जाकर वह ऊपर छतपर चली गई. सांझ धीरे-धीरे गहरी हो रही थी. दिनका कोला-हल थमा लगता था. दूर पेड़ दीखते थे और मकान. कहीं व्यक्ति न था, सब प्रकृति ही थी. जैसे वह उसके लिए नई हो. व्यक्तियोंमें—अपने-में, अपनोंमें, और परायो में—वह इतना रहती आई थी कि यह चारों ओर खुली फैली निर्वैयक्तिकता उसे नई और अनोखी लग आई. यह है वह जिसमें अपनेको निक्षेप दिया जा सकता है, जहांसे लौटनेको कोई

पहले प्रेमी था. लेकिन बादमें भी प्रेमी हो, निरन्तर प्रेमी हो, तो मुझे उसमें क्या कहना है? क्या मेरा आशीर्वाद है कि ऐसा हो ? हां, है आशीर्वाद. मेरी मोहिनीको सबका प्रेम मिले, सब ही का प्रेम मिले. क्या उसके मेरी होनेकी सार्थकता तभी नहीं है कि अभिन्नता इतनी हो कि मेरा आरोप उसपर न आए ? यही है मोहिनी, यही है. देखोगी कि मेरी ओरसे तुमपर आरोप आनेकी आवश्यकता कहीं नहीं रह गई है. हे ईश्वर, तू हो तो तुझसे मेरी यही प्रार्थना है....

देखा, मोहिनी नहीं है. जरूर वह चली गई है. चली क्यों गई ? रूठनेमें इतना वह नहीं समझ पाई ?...कमरेसे वह बाहर आए, पोर्चतक गए. देखा, गाड़ी मौजूद है. पूछनेपर यह मालूम हुआ कि दूसरी भी मौजूद है. उन्हें चिन्ता हो आई. क्या पैदल बाहर चल दी? चौकीदारसे पूछा, दरवानसे पूछा, नौकरसे पूछा, कोई कुछ नहीं जानता है. कैसे जानेगा ? उन्हें तनख्वाहसे मतलब है ! अपने फूटे मानको घूंटकी भांति उन्होंने भीतर निगला और गाड़ी ले ड्राइव करते हुए वह बाहर निकल गए.

इस सड़क गए, फिर उस सड़क. थोड़ी दूर गए, फिर अधिक दूर. सब चक्कर वह वृथा ही हुआ. अन्तमें चड्ढाके घर पहुंचे, जो उन्हें पाकर चकित रह गया. उससे नरेशने कहा—"क्यों जी, तुम वहां क्या-क्या कह आए हो ? मुझसे विगड़ रही थीं."

चड्ढाने कहा—"ऐसी तो कोई बात नहीं हुई." लेकिन देखा कि नरेश भरे हैं, कह रहे हैं—"छोड़ो, यह बताओ चड्ढा कि तुम क्या चाहते हो ? मुझसे लड़ना चाहते हो ?"

चड्ढा असमंजसमें था और कुछ न समझ सका.

"मेरे पीछे उनकी तौहीन करनेकी हिम्मत तुम्हें हुई कैसे ?"

चड्ढाने माफी मांगी, कहा—सख्त गलत-फहमी हुई है आपको. मेरी यह मजाल कि मैं—"

"फिर क्या बात है चड्ढा, साफ कहो ? तुम्हें शक है ! क्या शक

है ?"

"जी नहीं, आप यह क्या कह रहे हैं ?"

"देखो, तुम यहांसे अपना तबादला करवा लो. मैं तुम्हारी मदद कर सकूंगा."

"बैरिस्टर साहब, आप कहेंगे तो वह भी हो जाएगा. आप चाहें तो मुअत्तल करा सकते हैं. पर बात आखिर क्या है ? चलिए अभी साथ चलता हूं. गलत-फहमी रफा हो जाएगी."

इसी समय आदमीने आकर खबर दी कि एक खातून आपसे मिलना चाहती हैं.

नरेशका माथा ठनका. चड्ढाने पूछा—"कौन है ? कह दो अभी नहीं, कल सवेरे आए."

नरेशने कहा—"मालूम तो कर लिया होता कौन है ?"

"हटाओ, होगा कोई."

आदमीने लौटकर कहा—"सिर्फ दो मिनट चाहती हैं, इसी वक्त."

चड्ढाने नाराज होकर कहा—"तुम अहमक तो नहीं हो? जब कह दिया कि वक्त नहीं है—"

नरेशने कहा, "यह क्या बेअदबी है, चड्ढा ? जाने कौन दूरसे आई है, और तुम—"

"अच्छा," चड्ढाने आदमीसे कहा—"उधर बिठाओ, मैं आता हूं"

नरेश बड़े असमंजसमें थे बोले—"यहीं न बुला लेते—"

"जाने कमबख्त कौन हो ?"

नरेशने घूंट सटका. वह चुप रहे

चड्ढाने कहा—"देखिए बैरिस्टर साहब, आप बैठिएगा, मैं अभी आता हूं. आपके साथ चलूंगा और देखिएगा कि आप सारी गलत-फहमीके शिकार हुए हैं. मैं तो उनका तावेदार हूं, उनकी शानमें कुछ कह सकता हूं ?"

नरेश सुनते हुए बैठे रहे, कुछ नहीं बोले.

चड्ढाने उधर जाकर पूछा—"कहिए, कैसे तकलीफ की ? मैं क्या खिदमत कर सकता हूं ?"

आनेवालीने बताया—"मेरा नाम मेथिल्डा है. मैं वैरिस्टर नरेश-चन्द्रके यहां अभी नर्सकी ड्यूटीपर थी—"

चड्ढाका ध्यान उधर न था और शब्द भीतर जैसे कुछ देरसे पहुंचे. एकाएक कहा—"क्या ? किसके यहां ?"

"वैरिस्टर नरेशचन्द्र."

धमकीके स्वरमें चड्ढाने कहा—"तो ?"

"—वहां नर्स थी."

उसी तेज स्वरमें कहा—"तो इसमें मैं क्या कर सकता हूं ? मेरा वक्त खराब न कीजिए."

"मुझे एक इत्तला देनी है."

झपटकर कहा—"कहिए—"

मेथिल्डाका साहस खोता जा रहा था. बोली—"वहां एक मेह-मान मरीज थे."

"जी थे, तो बताइए इसमे मेरा क्या वास्ता है ? देखिए सवेरे तशरीफ लाइए आप, अभी तो—"

"वह रातमें एकाएक—"

"देखिए मुझे माफ कीजिए. कोई आपको शिकायत है तो थानेमें जाइए, वहां लिखाइए. बदसलूकीका केस हो सकता है, लेकिन माफ कीजिए आपका पेशा—"

मेथिल्डाने इस बार सचमुच नाराज होकर कहा—"आपका क्या मतलब ?"

चड्ढाने प्रभावशाली स्वरमें कहा—"मतलब कि अर्ज है, आप जा सकती हैं." घंटी देकर आदमीके आनेका इन्तजार किए बिना ही चड्ढा चल दिए. कहते गए, "आदमी आता होगा, वह आपको बाहर तक पहुंचा देगा." चड्ढाने अनुभव किया उसने अपनेपर बड़ी विजय पाई

है. आफिसरपर मनुष्य जीता है.

आनेपर नरेशने पूछा—"जल्दी आगए, कौन थी ?"

"जाने कौन थी स्साली ! बदमलूकीकी शिकायत लाई होगी. मैं सब जानता हूं इन दस घाटकी पानी पीने वालियोंको . लीजिए चलिए, चलने है ?"

"कहा ?"

"आपके घर चलता हू. वही सफाई लीजिएगा."

"नही, क्या होगा, रहने दो. लेकिन चड्ढा, खयाल रखना—"

चड्ढाको नरेशका यह स्वर अच्छा नही लगा अभी वह जिसको भिड़कीसे टालकर आया है, उसकी उसे याद आई. लेकिन उसने कुछ कहा नही. मोहिनीके लिए उसके मनमें स्थान हो गया था. मोहिनीकी हारने उसे हरा दिया था. लेकिन नरेशके अभिमानके स्वरने उसके मनको बरबस दूसरी ओर मोड़ा फिर भी उसने कहा—"मैं तो आपका गुलाम हू बैरिस्टर साहब."

नरेश क्षोभमें घरसे निकले थे, उसी क्षोभमें यहा आए थे. अब घूमकर, कुछ कहकर, कुछ सुनकर वह अपेक्षाकृत स्वस्थ हो आए थे. बोले—"हटाओ यार, और कहो क्या हालचाल है ?"

"दुआ है"

"और तारीद-सबीह तो नहीं आई ऊपरसे ?"

"यह तो आसी ही रहती है. कभी तो जी होता है इस्तीफा दे दूं. पर फिर क्या होगा, कुनबा कहा जाएगा, इससे मन मार रह जाता हूं."

"क्यों, तरक्की आगे नहीं बढ़ी ?"

चड्ढा चौकन्ना हुआ. बोला—"कहा कुछ आगे बढ़ती है, साहब. इस सियासतने गजब कर रखा है, जुर्मको सवाब बना दिया है इसने अच्छे लोग भी उसे सहारा देते है. बताइए ऐसेमे किया जाए तो क्या किया जाए ?"

नरेशने कहा—"यही तो है, हम अजब जमानेमें रह रहे हैं. अच्छा भाई चड्ढा, मैं चलूं, कहेको माफ करना."

नरेश चले गए और चड्ढा उन्हें बारीकीसे देखता रहा.

१६

●●●

तीसरे पहरका समय था. आदमीने आकर सूचना दी कि आपने कहा था सो शालोंके नमूने लेकर दुकानसे आदमी आया है.

मोहिनीने कहा—"क्या ?"

आदमी संकोचसे बोला—"नमूने लाया है."

मोहिनी कुछ न समझ सकी. सोचकर बोली—"अच्छा भेजदो,"

एक छोटा-सा पुलिन्दा साथ लिए आदमी उपस्थित हुआ. कश्मीरी साफा, वही पहनावा. उम्र यही इक्कीस-बाईस होगी. मोहिनीने उसे गौरसे देखा, कहा—"कहिए ?"

आदमीने शालोंके नमूने खोलनेकी जल्दी नहीं की. कहा—"मैं एक कामसे आया हूं."

"जी हां, कहिए," कहती हुई मोहिनी सावधान हुई, "आप किस फर्मसे आए हैं ? मैंने बुलाया था ?"

"जी नहीं...आपके कुछ जेवर गुम हो गए हैं. वे मिल सकते हैं. आप कहांतक देनेको तैयार हैं ?"

सुनकर मोहिनीके माथेपर बल आए. बोली—"तुम उन चोरोंमेंसे हो ?"

"जी नहीं,....आप उनके लिए क्या दे सकती हैं ?"

मोहिनी कुछ देर जैसे सोचती रही वह उस युवककी धृष्टतापर विचार कर रही थी. सोचती थी कि क्यों न इसे अभी गिरफ्तार करा दिया जाए. लेकिन सोचती ही थी, और सोच उलझनका नाम है. पूछा—"तुम्हें किसने भेजा है ?"

"किसीने भेजा हो ! कहलाया है कि पचास हजारपर गहने वापस हो सकते हैं, कमपर नहीं."

मोहिनी हसी. उसको कौतुक हुआ. लागत दाम उन चीजोंके बारहसे अधिक न होंगे. मूर्ख ही है जो पचास हजारकी बात करता है. लेकिन—

उसने कहा—"तुमने ज़ेवर देखे हैं ?"

"नहीं !"

मोहिनीने हसकर कहा—"वे तो चौथाई कीमतके भी नहीं हैं " फिर सहसा क्रुद्ध होकर बोली—"तुमको ख्याल है कि तुम यहांसे बाहर जा सकोगे. सुनो, अब तुम बाहर नहीं जा सकते. चोरी करते हो, डकैती करते हो, उसपर सौदा करने आते हो ?"

लेकिन देखा कि इसका प्रभाव युवकपर कुछ नहीं हुआ.

इतनेमें पैरोंकी आहट हुई युवकने झटपट पुलिन्दा खोला और शाल फैलाने शुरू किए. आदमी टेलीफोन उठाकर लाता हुआ दिखाई दिया.

मोहिनी रुष्ट हुई झपटकर मानो चोंगा छीनते हुए बोली—"मैं हूं मोहिनी, कहिए ?

मालूम हुआ कि दूसरी तरफ चड्ढा हैं और किसी मैथिल्डा नर्सके बारेमें पूछ रहे हैं.

"जी हां, कहिए ? यहां साफ सुनाई नहीं दे रहा है जरा जोरसे कहिए—" जो नर्स थीं...हा हा...जी आइए, आइए, आपका घर . अभी, मैथिलडाके साथ ?.. अभी नहीं...इस वक्त तो नहीं, माफ कीजिए अभी तो एक जगह जाना है. हां, दो घण्टे बाद खुशीसे आइए.

(हंसकर) हुआ है...क्या कर रही हूं ? शालोंका मुआयना कर रही हूं...फिर जानेकी उजलतमें हूं ..जी हां, पांचपर आइए, वखुशी."

उसी झल्लाहटमें मोहिनीने फोन बन्द किया और आदमीसे कहा--"पहले मुंशीको दिया करो फोन, हर वक्त सीधे यहीं चले आते हो."

आदमीके जानेपर शालवालेने कहा—"आपने रकम वताई नहीं ?"

"रकम ? रकम यही है कि तुम यहांसे वाहर निकल जाओ."

युवकने इसपर एक लिफाफा जेवसे निकालकर मोहिनीके सामने किया. उसमें एक मामूली कागज पर सिर्फ यह सतर लिखी थी—"कुछ नमूनोंके साथ भेजा जा रहा है." पढ़कर उसने कागजको फाड़कर फेंक दिया, कहा—"यह किसका खत था ?"

"सरदारका."

"कह देना मुझे कोई नमूने पसन्द नहीं हैं. वह दुकान करते हैं ?"

युवक प्रश्नका कुछ मतलव न समझ सका और निरुत्तर रह गया.

मोहिनीने कहा—"कवसे सरदार है वह तुम्हारे ?"

इसका भी युवकने कुछ उत्तर नहीं दिया.

"रुपए तुम किसलिए चाहते हो, जानते हो ?"

युवकने भी इसका कोई उत्तर नहीं दिया.

"सुनो, जाकर कह देना कि तुम तो इस वक्त वचकर जा रहे हो और इसलिए जा रहे हो कि आगाह कर दो. लेकिन यह ठीक नहीं है कि चोरी की जाती है और उसपर सीना-जोरी."

देखा गया कि युवकके चेहरेपर सुर्खी आई.

मोहिनीने कहा—"खत तुमने आते ही क्यों नहीं दिया मुझे ?"

"सरदारने कहा था कि जरूरतपर ही देना और पीछे देना."

व्यंगसे मोहिनीने कहा—"और क्या कहा था ?"

"कहा था कि कह देना, सीधी तरह नहीं तो रुपया टेढ़ी तरह देना पड़ेगा. इसीलिए मुझे भेजा था कि वह दयावान हैं. जेवर घर-गृहस्थी की चीज हैं. दुश्मनी हमारी सिक्केसे है. क्यों एक जगह धन इकट्ठा हो

जाता है, जब कि सब जगह उसकी जरूरत है ? उसके फँसानेकी कोशिश को चोरी कहा जाए कि डकैती,—उस कोशिशसे हम बाज नही आ सकते. इकट्ठा हुआ धन फटेगा और उस वक्त जो होगा, आखो न देखा जाएगा हम लोग अपने ऊपर पातक लेकर उस घटीको टाल रहे है. यह आपका कोढ, आपका पाप आपको खा जाएगा इसलिए हम उसको बाध रहे है. पाप कर रहे है हम लोग, चोरी कर रहे है, बुराई कर रहे है ! होगा यह सब कुछ पर एक जरूरी काम कर रहे है. अपने सर्डं न सही, पर आपके हकमे भलाईका काम कर रहे है "

मोहिनी चुपचाप सुन रही थी. बोली—"तुम्हे यह सब किसने बताया ?"

"हमारी आखोने बताया और सरदारने हमारी आखे खोली है "

"उन्हे खयाल है कि मुझसे आसानीसे पचास हजार मिल जाएगे ?"

"नही, आसानीसे नही, शायद मुश्किलसे मिले, लेकिन उस मुश्किल के लिए हम तैय्यार है" कहकर उसने पुलिन्दा सम्हाला और चलनेको तैयार होते हुए कहा—"आपका निश्चय यही है ? आसानीका नही, मुश्किलका रास्ता लेना होगा ?"

मोहिनी हसी—"तुम खैरियतसे जा रहे हो, जाओ, चले जाओ वैसे बात पाईकी न करो लेकिन यह कहो कि तुम्हारे सरदार रहते कहा है ? है कहा ?"

युवक मुस्कराया, बोला—"जल्दी मालूम हो जाएगा."

"हा जल्दी मालूम हो जाना चाहिए. बादल गहरे हो रहे है, बिजली कडककर कभी टूट सकती है मालूम नही, यह तुम्हे मालूम है कि नही, इसीसे जल्दी मालूम होना चाहिए."

युवकने उसी मुस्कराहटसे कहा—"भगवान् चाहेगा तो जल्दी ही हो जाएगा."

उसके बाद मोहिनीने युवकको ठहराया नही. वह भी बाचा सम्हालकर वह चलता हुआ. मोहिनी उसे जाते हुए

क्षणके लिए विचार हुआ कि किसीको इशारा कर दे, और वह पीछे जाकर इन लोगोंका स्थान तो मालूम कर ले. पर यह भी उसके गहरे मनके योग्य नहीं हुआ.

* * *

शामको चड्ढा आए, लेकिन नर्स साथ न थी. कुछ अनन्तर नरेश भी घर आ गए थे. नर्स चड्ढाको परेशान करती रही थी. लेकिन वह उसे टालते ही गए थे. आखिरमें उनका विचार था कि यहां इनके सामने लाकर हमेशाके लिए उसे इस तरह खतम किया जाए कि फिर वह मुंह ऊपर न उठा सके. लेकिन यहां आनेको वह राजी नहीं हुई और चलो यह अच्छा ही हुआ. उसके बाद चड्ढाके लिए यहां आना अनिवार्य नहीं रह गया था. पर वक्त हो चुका था और मोहिनीके साथ बातचीतका मौका उनको प्रसन्नता और उत्साह देता था, इससे वह समयपर आ ही गए.

पिछली बार मोहिनीने कुछ अभिमानसे काम लिया था. वह अपने विश्वाससे चली थी और अपने कौशलपर उसने अवलम्ब रखा था. पीछे उसने देखा कि ये गुण अवगुण बन जाते हैं. जो सहजतामें है, सत्यतामें है, वह सावधानता और चतुरतामें नहीं है. वैसे हम सीधा पाते हैं, दूसरी तरहसे अपने घेरेमें लेने या दूसरेके घेरेसे बचनेकी कोशिश में ही रहते हैं. परस्परकी उपलब्धि नहीं हो पाती बुद्धिके प्रागल्भ्यसे. हृदयके अनुदानसे वह सहज होती है. शब्द उसमें नहीं लगते. बाहरी कोई सामग्री जरूरी नहीं रह जाती, न समय व्यवधानके लिए रहता है. कैसे, किस नियमसे, बिना समय या प्रयास मांगे दो जन निकट आ जाते हैं, पता नहीं चलता. जब कि लाख कौशल और लाख शब्द एकको दूसरेके तनिक भी निकट नहीं ला पाते, बल्कि और दूर डाल जाते हैं. मोहिनीने कहा—"मैथिल्डा साथ नहीं आई, आप तो कहते थे—"

"जाने क्यों कतरा गई. पर अच्छा है. नाकमें दम कर रखा था."

"देखिए चड्ढा साहब," मोहिनीने कहा—"तबसे आपने आज खबर ली है, दो हफ्ते हो गए ! लगता है, मैंने आपको उस रोज खफा कर दिया था."

"क्यों, क्यों, नहीं तो."

"देखिए, आप गए तो मालूम हुआ कि मैं खफा हूं और आप भी खफा गए हैं खफगी वह इनपर उतरी शायद यह शामको आपके यहां पहुंचे और लड़-भगड़ आए. सोचती थी कि आपको फोन करूं पर सकोचके मारे रह जाती थी और आप ऐसे कि दो हफ्ते निकाल दिए. अब भी आप क्या आए, काम आपको लाया है हां मैथिल्डा हमारे यहां थी और हमेशा वक्तपर आती रहती थी. हम लोग उसको मिथिला कहते हैं."

"मिथिला !" चड्ढाने हर्षमें कहा, "वाह, नाम तो खूब है !"

"तो कहिए क्या कहती थी ?"

"कहती थी खाक ! जब यहां आ ही न सकी तो उस कहनेकी क्या कीमत है ? कायर, मुंह छिपाती है, बात बनाती है !"

"आखिर क्या बात बनाती है ?"

"मालूम नहीं, जाने क्या-क्या शक और कयासकी बातें कहती थी पर शकसे क्या होता है और कयासमें क्या होता है. चाहिए वाकया"

"आखिर शक क्या ?"

"शक यही आपके मरीजके बारेमें है उसका खयाल है कि—"

"मोहिनीने मुस्कराकर कहा—"क्या खयाल है ?"

"कि वह उस गिरोहके हो सकते हैं"

उसी मुस्कराहटसे मोहिनीने कहा—"और आपका खयाल है कि नहीं ?"

"मेरा खयाल है कि खयाल बेकार है"

इतनेमें नरेश आ गए और फिर उनमें हंसी-मजाककी, इ चर्चा होती रही, दूसरी बातका कोई जिक्र नहीं आया.

हुआ कि किसी शोमें चला जाए. लेकिन मोहिनीमें उसके लिए उत्साह न था. बहुत कहा गया, बहुत कहा गया, आखिर वह राजी हुई. लेकिन हाल उस रोज ज्यादा घुटा था, या हवाके बन्दोबस्तमें कुछ खराबी थी या कुछ और बात थी कि मोहिनीको बैठे-बैठे हलका सिर दर्द हुआ, फिर मतली मालूम हो आई. तस्वीर शुरू हुए आधा घंटेसे ज्यादा न हुआ होगा. उसने नरेशसे कहा और उठकर वह हॉलसे बाहर चली आई. नरेश भी उठने लगा, लेकिन मोहिनीने जताया कि ऐसा करना चड्ढाके खयालसे नामुनासिब होगा और वह मान गए. मोहिनीने बाहर आकर शोफरसे गाड़ीको कुछ खुली तरफ घुमा लानेको कहा. आठके आस-पासका समय होगा. अक्टूबरका महीना था. ठंड सुहावनी लगती थी. फर-फर आती हवासे उसका चित्त कुछ स्वस्थ हुआ. वह गाड़ी बढ़वाती ले गई. आसमान तारोंसे भरा था. निर्जनता आती जाती थी. गाड़ी सिविल लाइन्सके पार हो गई. बस्ती पीछे जा पड़ी. अब छुटपुट बंगले ही राहमें आते थे. उसके पार सूना और बियाबान शुरू हो जाता था. मालूम नहीं मोहिनीके मनकी क्या अवस्था थी. ड्राइ-वरने पूछा कि क्या यहांसे लौटा जाए, पर उसने लौटनेको कोई समर्थन नहीं दिया. गाड़ी वहांसे और पांच-छः मील आ गई. अब सन्नाटा था. सड़क सीधी चली जाती थी. रोशनी गाड़ीके लैम्पोंकी थी या आस-मानकी, बाकी अंधेरा था. अंधेरा यहां काला न था, मानो गेहुंआ था. डराता न था, न बुलाता मालूम होता था. मानो वह अपने मनमें समा-धिस्थ है, किसीकी मित्रतापर उसका आरोप नहीं है, वास्ता नहीं है, वह अपनेमें है, कि सब अपनेमें रहें. दूर, कभी दाएं कभी बाएं, छुट-पुट बस्तीकी जोत दिख जाती, जो इस ध्यानस्थ, सुन्न, शांत, प्रगट अंधकार को दिखा जानेके सिवा कुछ न कर पाती थी.

"लौटो !"

एकाएक यह आज्ञा आई ! शोफरने गाड़ीका वेग कम किया और वह लौटा. लौटते हुए करीब एक मील चलनेपर राहमें खड़े दो व्यक्तियों

ने हाथ आगे किया और स्वामिनीकी आज्ञासे गाड़ी रोकी गई. रुकते-रुकते वह कुछ आगे आ गई थी और दोनों व्यक्ति बढ़ते हुए पास आए तो पूछा गया—"शहर जाइएगा ?"

"हां."

ड्राइवरने अपने पासकी खिड़की खोली. व्यक्ति चक्कर देकर उस ओर आनेवाले थे कि मोहिनीने अपने पासका दरवाजा खोला. खोलते ही गाड़ीके अन्दरकी बत्ती जल गई.

"आइए."

दोनों व्यक्ति उसी दरवाजेसे अन्दर आए

मोहिनी एक ओर सरक आई थी. प्रविष्ट हुए पहले व्यक्तिपर प्रकाश पड़ा और उसने देखा कि वही शालवाला युवक है. दूसरेको ठीक तरह देखनेका उसे अवसर न हुआ कपड़े अब दूसरे थे, बुश-शर्ट और पेंट. देख लेकर मोहिनीने चाहा कि वह स्वयं न पहचानी जाए, पर सान्त्वना न थी कि वह पहचानी नहीं गई है दरवाजा बन्द हो गया. गाड़ी चल दी. अब गाड़ीमें भी अंधेरा था और बराबर था वही परिचित युवक. मोहिनीने कुछ भारी स्वरमें पूछा—"आप कहां उतरिएगा ?"

"शहर आते ही उतार दीजिएगा. चले जायंगे." बराबर वाले युवकने कहा.

"नहीं, नहीं, जहां आप कहें छोड़ दिया जा सकता है ?"

"कृपा है, लेकिन नहीं, बस्तीके किनारे ही उतर जाएंगे."

मोहिनीने इसपर कुछ नहीं कहा चुप रह गई. मगर थोड़ी देर बाद पूछा—"आप लोग इधर क्या कहीं - "

"जी नहीं, रहते नहीं हैं यों ही जरा घूमते हुए—देर हो अंधेरा हो गया था . इससे आपको कष्ट दिया."

मोहिनीने कष्ट होनेसे इन्कार किया और जानना चाहा कि ठीक किस जगह आप रहते हैं, वहां ही गाड़ी पहुंच.

सकती है.

युवकने इसका उत्तर न दिया और शहरका किनारा आनेपर गाड़ी रुकवाकर वह उतरनेको हुआ. लेकिन देखा गया कि कोनेका साथी उतनी शीघ्रतामें नहीं है. वह जैसे सिमटकर बराबर वालेके लिए उतरने की जगह किए दे रहा है. यह असमंजस क्षणके सूक्ष्म भाग तक ही रहा. फिर कोनेके साथीने दरवाजा खोला. वह आप उतरा, बराबरका युवक उतरा. ड्राइवर पीछे हाथ बढ़ाकर दरवाजेको बन्द करता ही था कि दूसरे साथीने कहा—"जरा ठहरो." और फिर धीरेसे युवकसे कुछ कहकर खुले दरवाजेसे वह मोहिनीकी बराबरकी सीट पर अन्दर आया. कुछ देर तक ही रही रोशनीमें मोहिनीने आते व्यक्तिको देखा. वह चिहुंक पड़ी. वह दूसरा कोई नहीं, जितेन्द्र था. अजब चाल-ढाल थी. जैसे शहरी किस्मका घरेलू नौकर हो. दरवाजा बन्द हो गया और गाड़ी चल दी.

"आप कहां उतरेंगे ?"

"आगे किंघे ही उतर जाऊंगा."

मोहिनीने हाथ बढ़ाकर भीतरकी बत्ती रोशन कर दी, अब उसने गौरसे जितेनको देखा. जितेनने भी उसे देखा. निगाह नीची कर फिर मोहिनीने घड़ीमें समय देखा. आठ बीस था. नौ बजे गाड़ी सिनेमा हाल पर पहुंच जानी चाहिए. कोठी यहांसे अभी तीन मील होगी. वहां से फिर सिनेमा डेढ़ मील. तीन, डेढ़, साढ़े चार. दस मिनट. रहे तीस मिनट. शोफरसे कहा—बाजार अभी मिल जाएगा? एक दवा लेनी है."

"मिल जाएगा हुजूर."

"तो उस तरफसे ले चलो."

बाजारमें एक बड़े ड्रगिस्टकी दुकानपर आकर गाड़ी रुक गई और शोफरसे कहा गया कि जाओ, ये दो तीन चीजें लेते जाओ. उसे रुपए दे दिए गए. वह चला गया तब जितेनकी तरफ देखकर कहा—"तुम मुझसे अब क्या चाहते हो ?"

"दिनमें कहलाया तो था," जितेनने कहा—"पचास हजार !"

"क्यों अभी पेट नहीं भरा ?"

"नहीं," जितेन बोला—"वक्त कम है, और जवाब चाहिए."

"जवाब यही है कि जितेन, देखो, मेरी राह फिर न आओ."

जितेनने दांत पीसकर कहा—"कौन आता है तुम्हारी राह ? अपने को इतना समझती हो ?"

विषादके स्वरमें मोहिनी बोली—"मेरे पास नहीं है पचास हजार. मेरे पास नहीं है एक पैसा भी मुझे और सताओ मत. खुले घूमते हो और खयाल नहीं है, तुम्हारे सिरपर क्या है ?"

"मौत है, यही न ?" जितेन मिस-मिसाकर बोला—"तुमपर तो सारे कानूनकी रक्षाका हाथ है ! वक्त नहीं है, जल्दी करो"

"एक काम करो," मोहिनीने कहा—"डकैती डालकर कोठीमेंसे बचा हुआ लूट ले जाओ. तृष्णाका पेट तो भरे !"

"शायद यही करना होगा. मुझे भला-मानस माने जाओगी, इसीसे कहती हो. लेकिन कहता हूं मोहिनी, मैं नहीं जानता कुछ भी. जो ठान लिया, लिया. डकैती मुझसे दूर न समझना."

"नहीं समझती हूं दूर जाओ, करो और मरो. मेरे सामने डींग क्या हांकते हो !"

"जितेन अपनी जगहसे उठा झटकेसे दरवाजा खोला और उतरकर उसे बन्द कर दिया फिर तेजीसे ड्राइवरकी सीटपर आकर गाडीको स्टार्ट करने लगा"

मोहिनीने हाथ बढ़ाकर उसका कंधा पकड़ा. कहा—"क्या करते हो, पागल तो नहीं हुए ?"

उसनेकंधे पर आए हाथको एक हाथमें थामा. जैसे वज्रकी पकड़ अंगुलियोंपर आ रही हो, ऐसा मोहिनीको लगा वे अंगुलियां उस जकड़के नीचे बेकाम हो आईं. जैसे सारी बाहमें शक्ति न रही. बाहकाकी सारी शक्ति खो गई. सब इतना आकस्मिक हुआ कि उसे सूझ न

कि जितेन तेजीसे गाड़ीको लिए जा रहा है. कुछ क्षण तो वह बे-भान रही. पता नहीं क्या हो रहा है, क्या नहीं हो रहा है. फिर उसे स्थिति का भान हुआ और एक गहरे क्षोभ और अवसादने उसे घेर लिया हो. एक घोर अश्रद्धा उसको मथ उठी. क्रोध उसमें नहीं रह गया, न विरोध. एक घनी फीकी क्लांति. एक काली ग्लानि उसमें आ छाई. सामने बैठे वेगसे गाड़ीको भगाए ले जाते हुए उस अभागे आदमीको कुछ कहनेकी, कुछ उसका प्रतिरोध करनेकी उसमें इच्छा नहीं रह गई. वह जाने एक कैसी पीड़ा और व्यथासे मथी जाकर धीरे-धीरे गहरे उच्छ्वाससे सिसक उठी. उसने अपनेको छोड़ दिया, जैसे जो अभाग्य हो, हो. इस अभागे आदमीकी वह और क्या सहायता कर सकती है. उसने सब ओरसे आंखें मूंद लीं और अपनी वेदनामें ही भीतर डूब गई.

जितेन किधर गाड़ी लिए जा रहा था, नहीं जानता था. सब अप्रत्याशित हुआ. किसीको कुछ पता न हो पाया. जिस क्षण उठा उसी क्षण घटा. देखते-देखते उसमें एक घोरताका उदय हुआ. देखते ही देखते गाड़ीके स्टीयरिंग व्हीलपर वह आ बैठा. और स्त्रीके हाथोंकी ओरसे पीछेसे विघ्न आया इसलिए आग्रहपूर्वक चला भी बैठा. मानो वह कर्ता न था, क्रिया का कर्म था. क्रिया उसको कर रही थी और स्वयंमें वह न था. कहते हैं, आदमीमें भाव होते हैं. कभी जी होता है मान लें कि आदमी होता ही नहीं. देवता होते हैं, राक्षस होते हैं. वे इतने होते हैं कि मानो सब शरीरों में वही होते हैं. आदमी शरीर-धारी होकर इनके वश होता है, कभी उनके. शरीर तो माध्यम है, कर्ता भाव है दुर्भाव राक्षस; सद्भाव देवता. हस्ती उनकी है, आदमीकी नहीं है. कुछ वैसा ही जितेनके साथ था. जितेन इन क्षणोंमें न था. चलते-चलते उसे सुन पड़ा जैसे पीछे कोई सिसक रहा है. तो कोई है ! रह-रहकर वह सिसकी वेगकी ध्वनि और इंजनकी आवाजके बीचसे उसके कानोंमें पड़ती ही रही. जैसे वह कुछ न कहती थी. वह उसके लिए न थी, किसीके लिए न थी. वह अपने आपमें पूर्ण थी और किसी ओरसे सुने जानेकी अपेक्षामें न थी. वह

गाड़ी चलाता रहा और कहीसे, उसके पाससे, मानो उसके भीतरसे उठते हुए उच्छ्वसित सिसकारको सुनता रहा. अत्यन्त तत्पर, सावधान निश्चलताके साथ, भीड-भड़क्केके शहरमें से बेहद तेज चालसे गाडीको वह चलाता ही गया. इस करतबमें आत्यन्तिक अवधानकी आवश्यकता थी वह जैसे उसे आप ही सिद्ध हो आया. कारण तब वह स्वय न था, अपनेसे उत्तीर्ण था.

"उतरिए"

एक कोनेमें ढुलकी हुई स्त्रीने सुना—

"उतरिए."

एकाएक उसे चेत न हुआ. ठहरकर वह यथार्थतापर आई. देखा व्यक्ति दरवाजा खोलकर कह रहा है—"उतरिए" वह वस्त्र सम्हालती उतरी. पर यह क्या? देखा कि उसकी अपनी ही कोठी है, उसीका पोर्च है. दरबान दूर ससम्भ्रम खडा है उसे कुछ समझ न आया. वह अविश्वाससे एक क्षण चारो ओर देखती रही जैसे सब जादू हो और सच न हो. फिर उसने आदमीको देखा, वह जितेन ही था. उसने सहसा कहा—"मैं आपकी कृतज्ञ हू."

"देखिए," व्यक्तिने कहा—"समय क्या है ?"

मोहिनीने अनायास घडी देखी, कहा—"पौने नौ हुआ है." कहने के साथ ही उसे कुछ याद आई बोली—"एक कष्ट आप कर सकते है? ड्राइवर तो आप देखते हैं, इस समय है नही. मै थक गई हू. उस सिनेमासे साहब आनेवाले हैं. उनको ले आ सकते हैं ?"

व्यक्ति इस प्रश्नको न समझ सका. वह चुप रह गया, मोहिनी भी कहकर स्वय विस्मित हो आई थी. सम्भव न था कि वह बातको लौटा लेती या मोड़ देती. किन्तु निपट नौकर दिखते हुए उस व्यक्तिने सलाम देकर कहा—"बहुत अच्छा !"

मोहिनीको कुछ दूसरा विचार सूझे कि व्यक्ति गाडी वहासे ले गया था. वह अपने कमरेमें आकर बेहद असमजसमें हो आई. लेकिन क्या

हो सकता था ! सोचती रही कि वह ही गाड़ी क्यों न ले गई ? पर अब सोचती थी, तब इसकी सम्भावना भी मनमें न उठी थी. उसका मन उसे बहुत-बहुत दंश देने लगा. यह क्या हो गया ? किन्तु गाड़ीका पहुंचना भी जरूरी था. जो हो, वह उसी उधेड़-बुनमें तड़फड़ाती-सी साढ़े नौ, पौने दस तक इंतजार करती रही.

जितेन यथा-विधि चड्ढाको उनके स्थानपर पहुंचाकर नरेशको कोठी पर ले आया. इस बीच उसने अपनेको और नौकर बना लिया था. आगे बढ़कर उसने पहचानकर बैरिस्टर साहबसे कहा था कि गाड़ी आप की इधर है, आइए. दोनों अभी देखी तस्वीरमें लिप्त थे. ज्यादा उधर ध्यान नहीं दिया. जल्दीसे पूछा—"हमारा ड्राइवर कहां है ?"

जवाबमें जो कहा उसीको लेकर वे लोग सीधे गाड़ीमें बैठ गए.

पोर्चमे गाड़ीके लगते ही व्यग्र भावसे लपकती हुई मोहिनी वहां आई नरेशसे गले मिलती हुए बोली—"बड़ी देर लगा दी !"

नरेश इस व्यग्रता और आतुरतापर विस्मित हुए. बोले—"पिक्चर जरा लम्बी थी."

"चलो," मोहिनीने कहा—"तुम चलो. वक्तपर इस ड्राइवरने बड़ा काम दिया है, इनाम देकर मैं अभी आती हूं."

नरेश निश्शंक बढ़ते हुए अपने कमरेकी ओर गए. मोहिनीने हाथ बढ़ाकर जितेनका हाथ पकड़ा. कहा—"मैं बहुत-बहुत कृतज्ञ हूं."

जितेनने कड़वे-पनसे कहा—"इनाममें कुछ बखशीश दीजिएगा ? गरीबका भला होगा."

मोहिनी कष्टसे कट आई, बोली—"पैदल जाओगे ?"

"जी प्लेनमें जाऊंगा."

"चलो, मैं पहुंचा आऊं."

जितेनने कहा—"शब्द भी क्यों खोती हैं. आप आराम कीजिए."

दरवान सीढ़ियोंके ऊपर बल्लम सम्हाले सतर्क सावधान खड़ा था. मोहिनीने पास आकर फुसफुसाकर कहा—"जितेन, माफ कर देना मुझे."

आवाज मोहिनीकी कंप आई थी. जितेनको अपना आपा बहुत-बहुत असह्य हो रहा था. उसे इतना गुस्सा आ रहा था कि क्या कहे. लेकिन उसने अपनेको काबू किया. बिना कुछ कहे मुड़कर वह चल दिया

"सुनिए!"

आवाज लपकती हुई उसके पीछे दौड़ी. उसमें जाने एक कैसा अनुरोध, कैसा उपालम्भ था. जितेनने लौटकर सलाम देते हुए कहा—"गाड़ीको गराजमें रखना होगा शायद, बहुत अच्छा."

मोहिनी घाव-पर-घाव देते हुए इस आदमीको देखती रही. बोली—"हां, चलो, बैठकर बता दूं गराज कहां है."

गराजमें गाड़ी डालकर बाहर होनेको हुआ कि मोहिनीने उसका हाथ थामकर कहा—"जितेन !"

जितेनने जोरसे उस हाथको अपनेसे झिटक दिया और तेजीसे कदम बढ़ाता हुआ कोठीसे बाहर निकल गया.

१७

जितेनका वही कमरा. शामका छह का समय होगा. जितेन उसी तरह उसी तख्तपर बैठा है. सामनेकी मेजपर छ-सात प्याले या गिलास रखे हैं. वे खाली हैं चारों तरफ उतने ही कुर्सी-मोढ़े-स्टूल पड़े हैं. वे भी खाली हैं उनपरसे लोग अभी गए मालूम होते हैं.

तिन्नी आई. जितेन देखता रहा. वह गिलास और प[illegible]मेट कर ले गई. जितेनने सिगरेट सुलगाकर मुंहमें ली. ति[illegible]

ंको ठीककर और स्टूल और मूढ़ोंको हटाकर जाने लगी तो जितेन
ा—"तिन्नी !"

तिन्नी सुनकर मेजके पास आ खड़ी हुई.

जितेनने सिगरेटका कश खींचा, धुआं छोड़ा और बिना तिन्नीकी
देखे पूछा—"सुना तुमने, हम क्या बातें कर रहे थे ?"

तिन्नी गुम-सुम खड़ी रही. प्रश्न अनावश्यक था और साफ था कि
उत्तरके लिए नहीं है.

"नहीं सुना न ? अच्छा ही किया. अच्छा करती हो कि नहीं सुनती
. हमारी काम-धामकी बातें सब फिजूल हैं." कहकर उसने तिन्नी
ो देखा, फिर निगाह हटाकर सिगरेटका कश लिया और निकलते हुए
ुएंके छल्लोंमें गुम हो रहा.

दो-एक मिनट हो गया. सहसा ध्यान आया कि तिन्नी खड़ी है.
कहा—"जाओ तिन्नी, काम करो."

तिन्नी बिना कुछ कहे चली गई. थोड़ी देर जितेन वहां उसी तरह
बैठा रहा, फिर उठकर उस कमरेमें ही घूमने लगा. धीरे-धीरे अंधेरा
घना पड़ने लगा, पर उसके कदम ढीले नहीं हुए, वह इधरसे उधर जाता
और उधरसे इधर.

तिन्नीने लालटेन लाकर मेजपर रख दी. जितेनने देखा, लेकिन
बिना कदम रोके, या बिना उसे टोके वह उसी तरह चलता रहा.

लालटेन रखकर तिन्नी चुपचाप लौट आई. उसे कुछ अपेक्षा थी
तो मालूम नहीं. वह इस आदमीको समझनेका प्रयास अब नहीं करती.
इतना समझ चुकी है, या समझनेकी सम्भावना छोड़ चुकी है. वह अपने
में रहते हैं, इसलिए वह अपनेमें रहना सीख गई है. देवता पुरुष हैं,
उनका लोक जाने कहां हो, यहां रहते तो उसने उन्हें कभी पाया नहीं.
जैसे वह स्वयं बाहर ड्योढ़ीपर है, भीतर अन्तःपुरमें क्या है सो पत
रखनेका काम उसके भाग्यका नहीं है. वह उससे बहुत दूर है, बहु
अंतरंग है. वह अपनी ड्योढ़ीपर तुष्ट है. अनुमान उसका जाता

पर हार थककर उसीके पास लौट आता है. इसमे वह अनुमानको कहीं ले जाना नही चाहती. वह काममें लगी रहती है और चाहती है कि उनके बारेमे न सोचे. उसके सोचके बसके वह है कहा ! तीन-चार रोजसे हुक्म है कि सिर्फ खिचडी ही खाएंगे. साग भी नही, या जो हो उसीमें डाल दो. खिचड़ी उसने छोटी अगीठीपर चढा दी है और खुद कुछ माज-धो रही है. सहसा सुना, पीठ पीछे उसे नाम लेकर पुकारा गया है—"तिन्नी !"

उसने मुह पीछे मोड़ा. लालटेनका मद्धिम प्रकाश था. जितेनके चेहरेपर उसने मुस्कराहट देखी. मुस्कराहट वहा कम दीखती है. पर इस मुस्कराहटको देखकर उसे अधिक आनन्द नही हुआ

हंसकर जितेनने कहा—"तिन्नी, समाजी निजाम जानती हो ? यह चारों तरफ है सब समाज है, हम सब समाज हैं उसकी व्यवस्थाको यानी उसके निजामको हम बदलना चाहते हैं क्या समझी ?" और जितेन जोरसे हसा हसी वह तिन्नीको भयकर लगी. अपने काम पर उसके हाथ शिथिल हो गए. वह उस हसनेवाले चेहरेको देखती रही.

"क्या देखती हो ?" जितेनने कहा—"काम छोडो और इधर आओ. मैं तुम्हे समझाऊंगा. पगली, समझना जरूरी है. तुम प्यार समझती हो, मैं क्राति समझाऊंगा" कहकर जितेन विचित्र भावसे हंसा. बोला —"यह गीला प्यार नहीं है. यह आजकलका विज्ञान है, स्पष्ट और वास्तव."

ए फिर टहलने लगा. उसे शांति नहीं थी. जाने क्या उसके भीतर रहा था. हंसी गायब हो चुकी थी. चेहरेपर कठोरता थी. मानो रताको और मजबूत किया जा रहा हो. मानो किसी संकल्पकी ोसे चारों ओरसे बांधकर उसे जुटाया जा रहा हो.

तिन्नी प्लेटमें खिचड़ी और चम्मच लिए कमरेमें आई. बोली—ा हो गई, आओ बैठो."

जितेन रुका, मानो वेगको किसीने पीछेसे खींचा हो. सम्हलकर ला—"आया !"

"ऊपर घीको तो तुमने मने कर दिया है. जरा ले लेते."

झटककर कहा—"नहीं."

"अचार ले आऊं ?"

"नहीं."

"क्या बात है ? किसीसे नाराज हो ?"

जितेन बिना कुछ बोले चुपचाप मेजपर आया. तिन्नी गई और पानीका गिलास ले आई. जितेन मनोयोग पूर्वक चम्मचसे खिचड़ी खाने लगा. तिन्नी बराबर खड़ी रही.

"बैठो !"

झिड़की झेलती तिन्नी बैठ गई. जितेन बहुत धीमे-धीमे खा रहा था. जैसे मन मुंहसे अलग हो.

"क्या समझा रहे थे ?" तिन्नी बोली...."अब समझाओ."

जितेनने आश्चर्यसे पूछा .."मैं समझा रहा था ?"

"हां, समझा रहे थे न तब ? खाली हूं, अब बताओ."

जितेनने धीमेसे कहा·· "तुम भी खा लो."

"मैं !" विस्मयसे तिन्नी बोली—"खाती रहूंगी, मेरा क्या है."

और भी आहिस्तासे जितेनने कहा—"नहीं, पहले खा लो"

"तो इसके माने यह हैं कि तुम्हारी समझानेकी बात उतनी जरूरं नहीं है."

"हां, उतनी जरूरी नहीं है." जितेनने परम सन्तोषके भावसे कहा.

कहनेका स्वर और था. उस स्वरपर तिन्नी गल आई. वह इस पुरुषको देखती रह गई. खिचड़ी खत्म कर चुका तो उसने प्लेट सरकाई और तिन्नीने उसे उठा लिया. गिलास उठाकर उसने दो घूंट पानी लिया और कुल्लेके लिए उठनेको था कि तिन्नीने प्लेट सामने की, कि क्यों कष्ट करते हो, कुल्लेको यह है तो. जितेनने तिन्नीको देखा. होंठे इशारेसे सामनेके हाथको अपनी बांहसे हटाते हुए मेजके बीचमें राह बनाता हुआ वह उठकर कोनेकी तरफ गया और वहां उसने कुल्ला किया. तिन्नीने आकर गिलास थाम लिया और प्लेट और गिलास दोनोंको झट नीचे रख, सामने तौलिया खींच, जितेनके हाथोंमें दे दिया. जितेनने कुछ नहीं कहा. तौलिएसे हाथ पोंछ वह फिर अपनी जगह आ गया. तिन्नी जा चुकी थी और जितेनका बुरा हाल था.

थोड़ी देरमें वह लौटकर आई बोली—"अब समझाओगे ?"

"तुम खा चुकी ?"

"खा चुकी."

"लेकिन मैं तो भूल गया तिन्नी कि मुझे क्या समझाना था."

"कुछ तुम समझाने वाले थे जिसे शान्ति कहते थे और समाज, और व्यवस्था. बताओ, धीरे-धीरे शायद मैं समझ जाऊं."

जितेनने अपना माथा हाथमें लिया. वह स्वयं भूला जा रहा था. प्रसन्नता उसको मानो भीग आई थी. बारूद सूखी ही हो सकती है. चित्त भीगा हो तो कुछ चल नहीं सकता. बारूद भीगसे बेकार होती है. वह सब उससे इस समय खो गया. जो उसके निकट स्पष्ट था, निर्णीत था. यह कि व्यवस्थाको बदल डालना होगा, शान्ति से आनी होगी, जैसे दूरकी बात हो गई. वह [illegible] और [illegible] आई. उतनी बड़ी और उतनी [illegible] होन रह गई. [illegible]

"तिन्नी, जेवर वे तुम्हारे पास हैं न ? [illegible] देखे हैं [illegible] ऐसे, जानता हूं. पहनकर एक बार [illegible] भी नहीं [illegible]

"नहीं."

"क्यों, वड़े तो सुन्दर लगते हैं."

"वड़े लोगोंको लगते हैं. मैं कहां सुन्दर हूं."

जितेनने सांस भरी, कहा—"तुम भी सुन्दर हो."

उसका मन उभरा, बोली—"सच कहते हो ?"

"हां, झूठ नहीं कहता."

एकाएक बोली—"तुम पहनाओगे मुझे ?"

जितेनको जैसे किसीने डस लिया. सम्हलकर कहा—"वड़े लोग पहनते हैं, छोटे नहीं पहन सकते. अमीर लोग पहनते हैं, गरीब नहीं पहन सकते." कहते-कहते उसे आवेश हो आया—"गरीब भी क्यों नहीं पहन सकते ? पहनेंगे, और मैं पहनाऊंगा. हां, मैं पहनाऊंगा तुम्हें, तिन्नी."

तिन्नी शब्दोंको नहीं समझ सकी. लेकिन उसका उछाह मन्द हो गया. जहां प्रेमकी अपेक्षा थी, वहां कुछ सख्त उसे अनुभव हुआ. प्रीतिकी जगह सिद्धान्त. वातमें सिद्धान्तको उसने समझा नहीं, सिर्फ गुठली सा सख्त उसमें कुछ लगा जो रसीला न था. कहा—"जाने दो, क्या होगा."

जितेनने आग्रहसे कहा—"नहीं, लाओ तो—"

अब तिन्नी स्वत: न थी, आज्ञानुवर्त्तिनी भर थी. गई और जेवरोंके डिब्बे ले आई. जितेनने एक-एकको खोलकर देखा और कुछ देर देखता रह गया. फिर कहा—"आओ तिन्नी."

तिन्नी जा रही थी, सुनकर लौटी. बोली कुछ नहीं, उसे जो पहनाया गया पहनती चली गई. समझती थी, यह खुश हो रहे हैं; उसीकी खुशी को चेहरेपर लिए वह जितेनके सामने होकर एक-एक आभूषण अपने तन पर स्वीकार करती गई.

पर उससे जितेनको सन्तोष न था. वह कुछ अधिक चाहता था. बोला—"क्यों तिन्नी, कैसा लगता है ?"

"तुमको नहीं अच्छा लगता ?"

जितेनने तिन्नीको देखा. उसे वह ग्रीवा याद आई जो इससे कहीं सफेद थी और वह चेहरा जो—. वहांसे छीनकर वह इन आभूषणोंको यहां ला सका है. वहां साधिकार समझे जाते थे, यहां अनधिकृत हैं. बोला—"कितनी तो सुन्दर लगती हो ! जाकर देखो शीशेमें."

"जाऊं, देखूं ?"

प्रश्नमें उल्लास न था. उसको कष्ट हुआ. ओह, वह कुछ भी तो न कर सका. उजाड़ ही सका, फिर बहार वहीं न ला सका अमीरकी अमीरी लेकर गरीबको वह खुश कर सकता, तो भी बात थी. कहीं ऐसा तो नहीं कि अपने करतबमें वह अपनी ही खुशी मानता रहा, गरीबकी या किसी औरकी खुशीकी तरफ नहीं देखा ? उसने कहा—"हां, जाओ, जाकर शीशेमें देखो."

आज्ञा पाकर तिन्नी चली गई और जितेन अपनेमें डूब आया. जो सोचता था वह न हुआ. इस बिचारीको एक बार खुशीसे खिला सका होता तो भी मान लेता कुछ हुआ. जानता था, कुछ है जो उसे प्रफुल्लित कर सकता है. पर वह तो उसके पास है नहीं, रह नहीं गया है. कभी था, लेकिन तब तिन्नी कहां थी. तिन्नी आई तब वह दिवालिया हो चुका था. सोचा था, गरीब इनसे बहलेगी. लेकिन वह नहीं हुआ, शायद उल्टा हुआ, और उसका कष्ट बढ़ आया.

तिन्नी देखकर लौटी, बोली—"हां, बड़ी सुन्दर लगती हू"

जितेनने पीड़ाके भावसे कहा—"सोचती होगी, यह जेवर किसी और के हैं. नहीं, उसके अब नहीं हैं धनी लोगोंको हक नहीं है, हक गरीबों का है. वे जो दुःखमें रह रहे हैं, उन्हींको हक है कि ये चीजें पाएं और बहलें. जो अभी आराममें हैं वे ही ये चीजें भी रखें, यह सरासर जुल्म होगा." कहते-कहते वह रुका. उसे खयाल हुआ कि जेवर तो पचास हजार पर वापस हो जाएंगे उसे यह अच्छा नहीं लगा इच्छा हुई कि पचास हजार तो मिलें लेकिन जेवर भी वापस न जाएं. "—— —— जुल्म है, और जुल्म बर्दाश्त नहीं किया जा सकता."

तिन्नी पहले तो सुनती रही, फिर जैसे एकाएक याद आया हो, वह जेवरोंको पहने हुए ही गई और विछौना उठाकर कन्धे पर रखे हुए बोली—"उठो, बिछा दूं."

निरुत्तर हो जितेन उठा और तिन्नीने संक्षिप्त सा बिस्तर तख्तपर फैला दिया. जितेन देखता रहा. बिस्तर हो गया तो यंत्रवत् आकर वह उस पर बैठ गया.

तिन्तीने कहा—"अब इन्हें उतार दूं ?"

फिर जितेन कुछ देर तिन्नीकी ओर टक बांधे देखता रहा. एकाएक बोला—"कुछ बचा-खुचा है क्या पीनेको, तिन्नी ?"

तिन्नी आंख फाड़े देखती रह गई. जैसे सुना नहीं, सुना तो समझा नहीं.

"देखो, कुछ बची हुई हो तो—"

तिन्नी अपनी जगहसे हिली नहीं. कभी होता है कि वह इस चीज की मांग करते हैं. वह दिन जल्दी नहीं आता. जबसे वह जानती है चौथा या पाँचवां अवसर होगा. एकान्त संयमी और तपस्वी यह पुरुप है. ऐसे पुरुपके अधिकारकी सीमा नहीं होती. बरसोंमें कभी शरावकी मांग करते हैं तो उसमें अन्यथा कुछ नहीं हो सकता. उसके अपने संस्कार इसके प्रतिकूल पड़ते हैं, लेकिन उसमें इस कारण अश्रद्धा तनिक नहीं हो पाती. इस आदमीके मनके भीतर ज्वाला दहकती रहती है. क्या है वह, नहीं जानती. पर अति दारुण है, यह पहचानती है. उसके लिए यह औपध की बूंद आ जाती है तो अन्यथा क्या है. बल्कि इसकी वह कृतज्ञ है. नहीं तो देख चुकी है कभी यह व्यक्ति एकदम खो जाता है, ऐसा डूब जाता है कि ऊपर आएगा ही नहीं. अमृतकी ये बूंदे ही जाकर उसे तब जिला लाती हैं. जैसे जीवनमें कभी पर्व आते हैं, वैसे ही अवसर आते हैं, जब इन बूंदोंकी यादकी जाए. उस समय वह सहम आती है, यद्यपि प्रसन्न भी होती है. जैसे शिखर गल रहा हो, तपस्वी आदमी हो आ रहा हो. इसीसे जितेनकी बातपर वह ठिठकी सी खड़ी रह गई.

गिलासमें बाकी शराब ढाली और एक घूंटमें निगल गया, जैसे दवा हो. फिर वह कमरेमें पहलेकी भांति टहलने लगा. उसमें सरूर आया, कदमोंमें तेजी और फुर्ती आई टहलते-टहलते उसने अलमारीमेंसे कापी निकाली और कलम. मेजपर आकर लालटेनकी बत्ती उकसाई और उसकी रोशनीमें तेजीसे एक-दो पन्ने लिखता चला गया. वह लिखता चला जाता, लेकिन बराबरसे दरवाजेपर ठक-ठककी आवाज आई. उसने कहा—"क्या है तिन्नी ?"

ठक-ठककी आवाज जारी रही

जितेनने जोरसे कहा "देखो, अपनी तरफसे कुण्डा बन्द कर लो और किसी तरह आवाज न हो."

लेकिन खट-खट जारी रही नाराज होता हुआ जितेन अपनी जगहसे उठा और उसने झटकेसे दरवाजा खोला तिन्नी उधर खड़ी थी. जितेनने कहा—"क्या है, क्यों खट-खट कर रही हो ?"

तिन्नीने जितेनके चेहरेकी तरफ एक उड़ती निगाहसे देखा, फिर बिना कुछ कहे बढ़ती हुई आई और बोतलको ऊपर करके जाचा उसमें बूंद बाकी नहीं बची थी. जितेनपर एक करुण दृष्टि डालते हुए वह बोतल और गिलास लेकर अपनी जगह वापस चली आई, बोली नहीं

जितेन देखता हुआ दरवाजेपर खड़ा रहा हठात् रोषसे उसने कहा—'दरवाजा बन्द कर लो और अपनी तरफसे साकल लगा लो, और आवाज बिलकुल न आए कैसी भी चुपचाप सो जाओ."

उत्तरमें तिन्नीने लोटेमें पानी लिया, कटोरीसे उसे ढका और तिपाई सटाकर लोटा जितेनके तख्तके सिरहाने रख दिया

जितेनने कहा—"नहीं थी मुझे जरूरत पानीकी."

तिन्नीने सुना नहीं, नलके नीचे बाल्टी रखी, भर जानेपर उसे उठाया और पटड़ेके साथ जितेनके कमरेमें उसे यथा-स्थान रख आई.

जितेनने अब उद्धत भावसे कहा—"बस, हो गया ? और नहीं है काम अब इस कमरेमें ?"

तिन्नीने बिना कुछ कहे कोठरीमें जितेनके चरणोंसे मानो छूती हुई ईंटके फर्शपर एक दरी डाली, सिरहाने तह की हुई एक धोती रखी, और सोनेकी तैयारी करने लगी.

जितेनने हठपूर्वक कहा—"ठीक, अब दरवाजा बन्द करता हूं. तुम भी कुंडा लगा लेना...जरूर लगा लेना." कहकर जितेनने दरवाजा बंद किया, कहा—"लो, अब लगा लो कूंडा.'

उसने उधर कुंडा लगनेकी आवाज सुनी. वह निश्चिन्त हुआ और मेजपर आया. निश्चिन्त वह किससे हुआ, मालूम नहीं. पर भीतर उसने ऐसा ही अनुभव किया जैसे संकट कहीं ऊपरसे अब अलग बन्द हो गया हो. कापी खोली और उसने आगे लिखना चाहा. पर कलम बढ़ी नहीं. वह सोचता ही रह गया. माथेपर जोर डाला, भौंहोंको कसकर अंगूठे और दो अगुलियोसे पकड़कर पास लिया, फिर छोड़ दिया, और फिर पास लिया. किन्तु कलम नहीं चली. आखिर उसने कापी बन्द की, लालटेन बेहद मद्धिम करके दूर कोनेमें रखी और तख्तपर आकर लेट गया.

कमरेमें ऊपर एक रोशनदान था और नीचेकी तरफ एक खिड़की. खिड़की बन्द थी और रोशनदान बन्द न हो सकता था. हलकी सर्दीके दिन थे. काला पाख शुरू ही हुआ था. चांद शायद निकला न होगा. या ऊंचा न चढ़ा होगा. चांदनी अन्दर न आ रही थी. जितेन पड़ा रहा, पर नींद न आती थी. सिर दुखता-सा लगता था. वह पड़ा रहा, पड़ा रहा. नींद जैसे भाग गई थी और सिर चकराता था. उठकर उसने खिड़की खोली. खोलते ही हवाका एक मीठा झोंका उसे लगा. वह कुछ देर हवा पीता वहां खड़ा रहा. आखिर आकर चादर सिरतक ले पड़ गया. कोशिश की कि करवट भी न ले. आध घण्टे तक उसने करवट नहीं ली. पर नींद पास न आई, और सिरकी चकराहट बढ़ती गई. अब करवट ली, और सिर कसकर आध घण्टे उसी दूसरी करवट पड़ा रहा. पर कुछ लाभ न था. ऐसा कितना समय बीता,

अपनेमें सुला लेना चाहती है. क्या है जो उसे भटका रहा है, लुभा रहा है, तरसा रहा है, सता रहा है? ओह, चाहती है आंचल पसारकर सबका सब उसका त्रास वह अपने लिए ले ले, जिससे कि यह आदमी आए और हौले-हौले उसकी थपकीके नीचे पलक मूंदकर सो जाए !

प्रस्ताव किया—"खाट डाल दूं ?"

"चाहो डाल दो."

जल्दीसे गई और भीतरसे खटोला लाकर टीनके उजले किनारेकी तरफ डाल दिया.

जितेन अपनी जगहसे उसके पास आया, बोला—"वह तो तुम्हारा है."

तिन्नीने सुना नहीं. गई और बिछौना लाकर बिछा दिया.

"तुम धरतीपर सोती हो ?"

वह निरुत्तर रही, जैसे कि और कहां सोनेके लायक है.

"अच्छा दरवाजा बन्द कर लो."

"कर लूंगी."

जितेनका मन सुनकर भारी हो आया. उसने हठात् मुंह मोड़ा. चांद चढ़ रहा था. चांदनी दूधिया होकर छतोंपर छा आई थी. जैसे यह सब आज ही हुआ हो. या उसका अपना जन्म आज ही हुआ हो. खटोलेपर थोड़ी देर बैठा, फिर उठकर खुली छतपर घूमने लगा. दीखा, तिन्नी दरवाजेमें ही एक ओर सिमटी बैठी है, हटकर गई नहीं है. उसका मन गहरे शोकसे भर आया, लेकिन उसने कुछ नहीं कहा और वह उसी तरह टहलता रहा. एक बार छतकी छोरपर जाकर लौटा तो देखा कि तिन्नीकी मूर्ति वहां नहीं है. उसने सांत्वनाकी सांस ली.

कुछ ही देरमें उसके कानमें फुसफुसाहटमें दो आदमियोंके बात करनेकी आवाज पड़ी. पहले तो उसने उधर ध्यान नहीं दिया, लेकिन आवाज सहसा बन्द नहीं हुई. इसपर खुले दरवाजेसे होकर वह तिन्नी की कोठरीमें आया, लेकिन दूसरा दरवाजा उधरसे बन्द था. उसने

सुना, जीनेके पास कोई कह रहा है—"मुझे [illegible]
जरूरी है."

सिन्नी कह रही थी—"वह आराम कर रहे हैं, [illegible]"

"नहीं, कल किसी तरह नहीं हो सकता."

"नहीं, आज और अब किसी तरह नहीं हो सकता, [illegible] पलकोंको नींद पड़ी होगी और तुम आ गए. नहीं, [illegible] मैंने कह दिया नहीं, और होंगे वोलो, जोरसे नहीं."

वह आदमी नहीं मानता था और इधर सिन्नी नहीं मानती थी; सुनता हुआ जितेन चुपचाप खड़ा रहा.

आखिर जितेन सिन्नीसे कहा—"अच्छा [illegible] रहोगे, यहाँसे जो भर न हिलोगे मैं [illegible] पाकर जग पड़े तो वह दूंगी क्या कह दूं?"

"कहना, चोर."

आदमी विस्मयसे अपने सरदारको देखता रहा और एकाएक उत्तर लेकर जा न सका.

जितेनने संक्षिप्त आदेशसे कहा—"जाओ."

आदमी मानो मनमें अपने कानोंका अविश्वास लिए चुपचाप चला गया. जितेन मूर्तिवत् बैठा रहा. फिर बोला—"तिन्नी, इधर आओ."

तिन्नी पास आते डरती थी. ऐसा आमन्त्रण तो उसे कभी मिला नही. जाने क्या कसूर उससे बना होगा. वह आकर कुछ पग दूर ही खड़ी रह गई. खटोलेपर पास थपथपाते हुए जितेनने कहा—"इधर आओ, तिन्नी."

तिन्नीके तनमें सिहरन हो आई. वह अपनी जगहपर पत्थरकी सिल बनी बंधी खड़ी रह गई.

"डरो नहीं तिन्नी, आओ."

तिन्नी आई. हाथ बढ़ाकर जितेनने उसे पकड़कर पास बैठाया. उसका मुंह झुका जा रहा था. हाथ देकर उसकी ठोड़ी ऊंची की, कहा—"तिन्नी !"

अबोध बालाने अपनी मुग्ध आंखे ऊपर कीं. आंखोंमें स्नेह तैरता था.

जितेन अपने प्रति धिक्कारसे भर आया. उसके भाग्यमें धन्यता कहां है ? बोला—"इस पत्थरको, पशुको, तुम माफ कर सकोगी. तिन्नी ?"

यह निर्दय व्यक्ति उससे क्या कह रहा है. उसकी आंखोंसे आंसू झरझर झर आए.

मैंने तुम्हें पचास रुपएमें लिया था. यह पाप मैं कैसे धो पाऊंगा?" कहकर उसने तिन्नीके झरते हुए आंसू पोंछे. वह मुंह छिपाकर जितेन की गोदमें गिर आई और और भी फूट-फूटकर रोने लगी, जितेनने प्रतिरोध नहीं किया.

रोना हल्का पड़ा तो उसने गोदसे तिन्नीका सिर उठाया. आकुल अपेक्षासे टिका वह चेहरा—जो नहाकर अभी हरा हुआ है !—हाय, शापग्रस्त यदि वह न होता तो...उसने धीमेसे उस मस्तकपर चुम्बन दिया, जैसे आशीर्वाद दिया हो.

तिन्नी लज्जा और अपमानसे सिमिट आई. लेकिन कही भीतर सब ग्लानिके नीचे जैसे उसने गौरव भी अनुभव किया.

जितेनने कहा—"जब जानोगी कि कैसे अधम अभागेके हाथो तुम पड गई थी तब आशा करता हू कि तुम और न सोचोगी, और मुझे माफ कर दोगी."

तिन्नी मनमें शिव-शिव करती हुई वहासे भागी एक शब्द भी ऐसा सुनना वह कैसे सह पाती जितेनने अपनेको खाली पाया और उसने अपना मुंह चन्द्रमाकी ओर किया जो प्रकाशमें आ गया था !

३८

•••

जितेन आखिर उठ बैठा. नींद तो कभी की टूट चुकी थी, पर वह लेटा ही रहा था. उठकर उसने इधर-उधर टटोला.

बराबरसे धीमी आवाज आई—"लालटेन जला दूं ?"

"तिन्नी !" जितेनने चौंककर नाराजीसे कहा—"तुम जागती हो?"

तिन्नीने बिना कुछ उत्तर दिये लालटेन जलाई और लाकर चुप-चाप मेजपर रख दी.

इस प्रकाश से अंधेरा दीख आया. आसमान तारोंसे भरा था. घड़ी देखी. साढ़े चार हो गया था.

जितेनने कहा—"दरवाजा क्यों खुला है ! बन्द कर लो."

तिन्नीने कुछ नहीं किया, वह जाकर फर्शपर बिछी अपनी दरीपर लोई सिर तक लेकर लेट गई. जितेनने बढ़कर अपने हाथसे द्वार झपाया और कोनेमें रखी बाल्टीके ठंडे पानीके छींटे जोरसे मारकर मुंह धोया, अब उसने अपनेको कुछ ताजा अनुभव किया.

तिन्नी सो नहीं रही थी. लेटे-लेटे ही उसने हाथ बढ़ाकर आहिस्तासे द्वारके पट फिर खोल लिए थे. दिन ये भारी थे. तिन्नी जानती न थी पर अनुभव करती थी. इससे सोतेमें भी वह जागती थी. यह आदमी उसके लिए है ताबीज, जिसके अन्दर जन्तर बन्द होता है. नहीं जानती मन्तर वह क्या है, अक्षर तक नहीं जानती. यह आदमी क्या लिखता है, क्या पढ़ता है, क्या सोचता है, क्या चाहता है, क्या करता है—सब उसे अगोचर है. निश्चय ही जहां वह रहता है अपर लोक है. वह तो रत्न है; पर मान बैठी है कि उसपर होनेके लिए डिबिया जैसे वह स्वयं है. रत्न जौहरी जाने और उसे जो पहने सो पहने. पर सुरक्षाको डिबिया है. किसीका पीछे हो, पहले वह डिबियाका है. इस नाते इस आदमीके वह चारों ओर रहती है और नहीं चाहती कि हवा भी उसे छुए.

जितेनने तौलिएसे चेहरा अच्छी तरह रगड़-पोंछकर मेजपर आया और नोट-बुक सम्हालकर बैठ गया. वह लिखता गया, लिखता गया. बीस-पच्चीस मिनिट हो गए. फिर नोट-बुकको दूर कर वह उठा और कमरेमें ही टहलने लगा. घड़ी देखी, पांचसे ऊपर हो गया था.

"तिन्नी !" जितेनने कहा और देखा दरवाजा खुला है. फिर कहा—"कुछ नहीं, सोती रहो."

कहकर लालटेन उठा जितेन तिन्नीके कमरेमें आया और दूसरी तरफका दरवाजा खोल उधर चला गया. तिन्नी उठनेको थी, लेकिन अनावश्यक होकर लेटी रह गई. फिर कुछ उसे ध्यान आया. जल्दी-जल्दी कोयले डालकर उसने अंगीठी सिलगाई और उसपर पानी रख दिया.

जितेन आया तो विना किसी ओर ध्यान दिए अपने कमरेके कोने की वाल्टीकी तरफ बढ़ता चला गया. साबुन ले हाथ धोनेको ही था कि झपटती तिन्नी आई और पानी फेंक लोटेको सामनेसे उठा ले गई. जितेनको बुरा लगा, लेकिन वह भीतर ही भीतर अतिशय कृतज्ञ हो आया. एक मिनिट बाद गरम पानीका भरा लोटा उसके आगे आ गया. जितेनने मन्जन किया, फिर खडे होकर घडी देखी और वह कमरेमें घूमने लगा. जैसे सहसा कुछ याद हो आया, कहा—"दरवाजा बन्द कर लो."

तिन्नीने धीमेसे कहा—"तुम्हें नींद नहीं आई !"

जितेन क्षणके सूक्ष्म भाग तक ठिठका. बोला—"दरवाजा बन्द कर लो."

बात तेज पडी. तिन्नी कटी खडी रही. उपाय न देख आखिर लौट आई. इस आदमीके सब कपाट बन्द है, किसी ओरसे भी प्रवेश नहीं. उसने भी खीझकर दरवाजेका कुंडा अपनी ओरसे लगा लिया.

जितेन घूमता रहा, घूमता रहा. तडका फूटनेको था. अंधेरा जा रहा था. रह-रहकर वह घडी देखता और अधीर होता अब तक खबर आ जानी चाहिए थी नहीं सोच सकता कि वह नाकाम हो सकता है होगा वह जो तय किया है होगा सोचते-सोचते रुकता, कि चल पडता.

कुछ ही देरमें लम्बे डीलडौलका वह पठान आया जितेनने आंख उठाकर देखा, कहा एक शब्द भी नहीं.

पठान इस स्वागतपर झिझका आया वह उछाहमें था, जैसे फतह लाया हो अब झिझकता हुआ बोला—"कुछ देर हो गई, विप्पा !"

"हां, दस मिनिट. तुम पठान हो, यह भूल तो नहीं जाते ?"

पठान घबराया-सा बोला—"नहीं सरदार ?"

जितेन मुस्करा आया. बोला—"कहो, सब ठीक है ?"

"जी, लेकिन—"

"अच्छा !" मुस्कराहटमें जाने कैसा व्यंग मिलाकर जितेनने कहा "लेकिन भी है ! कहो, लेकिन क्या ?"

"ड्राइवरको चोट आई मालूम होती है."

जितेनके माथेमें त्योरी आई, लेकिन वह सुननेकी प्रतीक्षामें रहा, बोला नहीं.

पठानने बताया कि क्या किया जाता. उसने डरना नहीं चाहा, बचना नहीं चाहा. आखिर गोली जरा उसे छील गई तब बसमें हुआ.

जितेनने मानो झल्लाहटमें अपने दाएं हाथको हवामें झटका, कहा —"छोड़ो, असल बात कहो."

पठान डर आया. हकलाता-सा बतलाने लगा—"जी, जीपमें हम उन्हें ले आए. कोई दिक्कत नहीं आई. अजब हैं, न रोई, न मुकाबला किया, न शिकायत की...जी, पट्टी बांध दी थी. मुंह बांध दिया था, लेकिन...शिकन, न मलाल...रुपएका सवाल रखा. कुछ नहीं कहतीं, न हां, न ना. डराते हैं तो डरतीं नहीं. उलटे पूछती हैं किसलिए चाहिए ? तुम लोगोंका सरदार कहां है ? हमने कह दिया है...उनका हुक्म है, और उनको फुरसत नहीं है.. बोलीं—'फुरसत हो तब देखा जाएगा. अभी तुम लोग आराम करो, मेहनत पड़ी होगी ' सरदार..."

जितेनने झिड़कीसे कहा—"क्या है ?"

पठानने अन्दरसे एक चिट्ठी निकाली, कहा—"यह दी थी कि सरदारको देना, फौरन पहुंचा देंगे."

"कब दी थी."

"उसी वक्त."

"तो अब लाए ?"

"सवेरे आनेका हुक्म था. इससे सोचा..."

"सोचा !" तीखे व्यंगसे जितेनने मुस्कराकर कहा—"तो पठान भी सोचता है ! हाँ, क्या सोचा--? मगर जाने दो, सोचना पास रखो. ड्राइवरका क्या हुआ ?"

"वहीं सड़कपर छोड़ आए. हम लोग..."

"बहुत अक्लमन्द हो तुम लोग," जिनेनने कहा और टहलते हुए बोला—"चलो, हुआ सो हुआ...अभी जा रहे हो ?"

"आप उधर आ रहे हैं ?"

"कह देना, फुरसत नहीं है, जरूरत भी नहीं है. और कहना, पैसा हमको मिलना चाहिए."

कहते-कहते जिनेनके कदमोंमें तेजी आ गई. अनायास उसकी अंगुलियां कस आईं. दाहिने हाथमें थमा लिफाफा भिंच गया और थोड़े समयके लिए जैसे और कुछ वहां न रहा. पठान सरदारकी इस तल्लीन मुद्रापर जैसे दहशतमें हो आया और अपनी जगह बंधा खड़ा रह गया

"चाय लाऊं ?"

चौंककर देखा, निन्नी खड़ी पूछ रही है. पूछनेका कायदा नहीं है, वह सीधी करती ही है. जिनेनने बिगड़कर कहा—"क्या है ?" फिर उसे निन्नीका खयाल हुआ और साथ ही पठानका कहा—"लाओ न. पठान, आओ बैठो."

चाय पीते हुए वह गुमसुम रहा पठानको साहस न होता था. एकाएक जिनेनने कहा—"नहीं, कह देना फुरसत नहीं है और जरूरत नहीं है."

पठान चुप रहा वह मेजपर कटोरीके नीचे दबे उस लिफाफेको देखता रहा. उसे हिम्मत न हुई कि खतकी याद दिलाए

"जीप कहां है ?"

"साथ है."

"नम्बर ?"

"बदल दिया है."

"अकेले हो, और नहीं है ?"

"जी, नहीं है—"

"अच्छा गाड़ी यहीं रहने दो और चाय...और न लेनी हो तो जा कते हो."

पठान जाने लगा तो जितेनने कहा—"हां, और कहना तकलीफ ना हमारी मंशा नहीं है. हमारा काम आराम पहुंचाना है...जाओ."

पठान सुनता हुआ चला गया. जीनेसे उसके उतरनेकी आहट बीतते ो जितेनने लिफाफा खोला और पढ़ा. लिखा था—

"माई डार्लिंग,

बड़े मजेमें हूं. फिक्र न करना. ड्राइवर नाहक चोट खा बैठा. दो-एक रोजमे आऊंगी.

प्रेममें तुम्हारी ही
मोहिनी"

पत्रमें नीचे नरेशचन्द्र बैरिस्टरका नाम और पता था.

जितेन दो-एक मिनट पत्र हाथमें ही लिए रहा, फिर लिफाफा दूसरा लेकर उसमें खत रखा और अपने हाथमे पूरा पता लिखकर पुकारा—"तिन्नी !"

तिन्नीके आनेपर कहा—"नीचेसे किसीको बुलाना तो." और आदमीके आनेपर ताकीदके साथ वह खत उसे दिया कि अभी फौरन ठीक जगहपर पहुंच जाए.

आदमी चला गया. तिन्नी चायके बर्तन ले जा चुकी थी. जितेनने फिर आवाज दी—"तिन्नी !"

तिन्नी आकर खड़ी हो गई.

"हाथ धो आओ."

तिन्नीने देखा कि बर्तन मांजने-मांजते वह उठ आई है, हाथ मैले हैं. धोकर फिर आकर खड़ी हो गई.

"तिन्नी," जितेनने कहा—"तुम नाराज भी नहीं होतीं ?"

तिन्नी नाराज हुई. बोली—"कहो भी क्या कहते हो ?"

"हां, एक बात कहनी है. लेकिन पहले नीचे बीर होगा उसे बुला

करते हैं. क्रान्तिका यही करना कहाता है. दुनिया छीन-झपट है. झपटकर जो लिए बैठे हैं, हम उनसे छीनते हैं! हमसे कोई दूसरा छीन लेता है. एक और जात भी है, तिन्नी. वह बहादुरीसे नहीं छीनती, कायदेसे छीनती है...छोड़ो-छोड़ो, मैं बहकने लगा. कहता था, वह आ गई है. मिलोगी उससे ?"

"कारन ?"

"कारण! यही कि अमीर है, पढ़ी-लिखी है, सुन्दर है...मिलोगी!"

"मुझे जेवर चाहिएं नहीं."

"क्यों ?" जितेनने पूछा—"उस दिन पहने थे. कैसे तो अच्छे लगते थे!"

"जाओ भी. पराए जेवर!"

"पराए! इसीसे तो कहता हूं तिन्नी, तुम्हारे अपने हो जाएंगे तब उसे जाने देंगे. क्या कहती हो ?"

तिन्नी क्या कहे ? वह बहकको सुनती रही.

बहक ही थी. जितेनने तिन्नीकी तरफ देखकर कहा—"सोना पीला होता है, पर कभी अच्छा भी लगता है. भांति-भांतिके आकार, भाँति-भांति के प्रकार. पर भारी बहुत होता है. खिलौने हों तो अच्छे, पर खेला न जाए उनसे इतने भारी हों ?...और ये पत्थर!...हों पत्थर, पर हीरा, पन्ना, मानिक लगते सुन्दर हैं. क्यों तिन्नी, नहीं लगते सुन्दर ?...मैंने कहा मैं सुन्दर बनाउंगा .. दीनता है वहां सुन्दरता लाऊंगा...क्यों तिन्नी, सुन्दरता नहीं चाहतीं ?"

तिन्नी उठी.

जितेन बोला—"क्यों, उठी क्यों ?"

"दाल जल न जाए."

"आजके दिन जलने दो उसे, सब जलने दो. और तुम सुनो."

पर तिन्नीने नहीं सुना. कारण, वह दालके या किसीके जलनेसे सहमत न थी.

जितेनने उनके जानेपर हाथकी अंगुलियोंसे अपनी दोनों कनपटियों को कसकर दबाया. दाईं ओर अंगूठे और बाईं ओर चारों अंगुलियोंके दबावके नीचे सिमटा हुआ उसका माथा दुखने लगा था. वह चुपचाप उसी तरह कुहनीको मेजपर टेके, हाथमें माथा भुकाए, देर तक बैठा रह गया. क्या उसका यही भाग्य है ? अपने भीतरकी घुटनको शब्दोंमें लाकर कहीं भी तो वह दे नहीं सकता, कहा नहीं जाता. वह अलग है, सबसे छिटका हुआ, सबसे दूर. कभी होता है कि इस दीनहीन तिन्नीके चरण पकड़कर बिछ जाए और अपनेको रीता कर दे. पर, हाय, तिन्नी भी इतनी दूर इतनी ऊंची हो जाती है कि -

वह उठा जैसे अभाग्यको ही लेगा और जिएगा. दृढ़ कदमोंसे वह कमरेमें इधरसे उधर टहलने लगा. फिर जैसे सहसा उसे कुछ याद आया. तत्क्षण उसने शेव किया, तिन्नीके कमरेको पार करते हुए जाकर पैंट चढ़ाई, मैलर्सी बुशशर्ट पहनी, मोजे और जूते डाले, हैट लिया और अपने कमरेकी ओर आते हुए पूछा—"हो गया ?"

तिन्नीने ऊपर देखा. इस आदमीके लिए विस्मय उसमें इतना भरा है कि उसका अवकाश नहीं है. सीधेसे कहा—"हो गया. कहीं जा रहे हो ?"

"हां, जा रहा हूं"

"बैठो, लाती हूं"

दाल-रोटी थालीमें लाकर तिन्नीने मेज पर रख दी. वह यहां अपने मनकी कुछ भी तो नहीं कर पाती. रोटी तक नहीं चुपड़ पाती. जितेन को इस पोशाकमें सूखी रोटी एक दालसे खाते हुए देखकर उसका मन होता था वह अपनेको पीट ले, या इस आदमीको घरकर पीटने लग जाए.

जितेनने हंसकर कहा—"यह क्या आदत है तिन्नी तुम्हारी ? पूछती भी नहीं हो कि कहां जाते हो ?"

"अचारकी एक फांक ले लो."

"—वहीं जा रहा हूं."

तिन्नीने जैसे उधर ध्यान नहीं दिया. पर दिया, और जाने भीतर क्या समझ लिया. बोली—"एक फांक ला दूं ?"

"अब तो मैं खा भी चुका, भई ! तो तुम नहीं मिलोगी न ? छोड़ो, अमीरोंके पास एक घमंडके सिवा क्या है ?"

तिन्नी चुप रही, फिर एकाएक बोली—"बहुत अमीर हैं ?"

"बहुत" जितेनने खुश होकर कहा.

"और बहुत सुन्दर हैं ?"

"हां, बहुत."

सुनकर तिन्नी एक क्षण चुप रही, फिर बोली—"तुम्हें प्यार करती है ?"

जितेन चौंका, बोला—"प्यार !"

"और तुम प्यार करते हो ?"

"मैं ! प्यार !!" और जितेन ठहाका मारकर हंसा. उस हंसीसे वह डर आई. वह पीछेको सिमटी.

देखते-देखते हंसी उस चेहरेसे गायब हो गई. हवामें गूंज अभी उसकी बाकी थी, लेकिन जितेन मुंह गिराए कमरेमें टहलने लगा था. अचानक वह तिन्नीकी ओर बढ़ा. तिन्नी सहमी-सी पीछे हटी. बढ़कर जितेनने तिन्नीकी ठोड़ीको हाथमें लिया, उपर उठाया—

तिन्नी दहशतमें आंखें फाड़े खड़ी रही.

रुककर उन आंखोंमें देखते हुए जितेनने कहा—"प्यार अच्छी चीज नहीं है, मेरी बिन्नो !" कहकर ठोड़ी छोड़ हौलेसे गरदनके पीछेसे कमर पर एक हाथसे उसे घेरकर साथ लिया और बढ़कर उसी हाथसे ठेलकर उसे दूसरे कमरेमें कर दिया. फिर फौरन दरवाजा बन्द किया और अपनी ओरका कुण्डा चढ़ा दिया.

थोड़ी देरमें वीर आया और खबर दी कि शहरमें सनसनी है. ड्राइवर को ज्यादा चोट नहीं आई. अस्पतालमें है और उसके बयानमें कोई

खास बात नही है. चढ्ढा अपनी जगह हैं और किसी तरफ बढ नहीं सके हैं.

जितेन भौंहें समेटे सब सुनता रहा. बोला—"वीर! एक बात कहो. मुझे छुट्टी दे सकते हो ?"

वीरने आश्चर्यसे सरदारको देखा.

"अपने पास कुल कितना पैसा है ?"

"पैसा कहां है ?"

"तो पैसा हमे चाहिए?" जितेन हसा, "पैसेके बगैर कुछ नही होता. सरकार पैसा छापकर बनाती है, हम लूटकर लाते हैं छपा पैसा बाटकर वह सिपाही और मेम्बर और नौकर जमा करती है. लाखो सिपाही और लाखो नौकर और हजारो मेम्बर नौकर अफसर होते हैं, मेम्बर नेता होते है. अब हम क्रान्ति करेंगे और उसके लिए रुपया लूटेंगे, बना-बनाया रुपया. बनाएंगे नही, लूटेंगे. क्यों जो बनानेवाला इससे लुट सकता है, टूट सकता है ? वीर हो तुम, क्या सोचते हो ?"

वीर जिसे कहा गया वह सरदारको देखता रह गया.

"तुम चुप हो. मुझे भी चुप होना चाहिए, क्योंकि बात बनती नही है. मान लो रुपया हम बनाना शुरू करते हैं ठप्पा लगा लेते हैं और सिक्का ढालने लगते हैं, जैसा पहले विचार था. बात सीधी है पर विचार छोड़ दिया. जानते हो क्यो? क्योंकि वह जाली होता है क्योंकि मोहर सरकारी देते हैं, अपनी नही देते, इससे जाली होता है उससे पैसा सस्ता बनता है, पर आदमी नहीं बनता. आदमी सस्ते पैसेमे नीच बनता है. इसलिए रास्ता हमने मुश्किलका पकडा. हमारी चोरी चोरी नही है, सीनाजोरी है. उसमें सीनेका जोर लगता है, अक्ल लगती है, विज्ञान लगता है. लेकिन सवाल दूसरा है, वीर ! हम सामान पैसेसे लेते हैं. आदमी पैसेमे जुटाते हैं, उस पैसेसे जिसपर छाप सरकारी है. ऐसे हम सरकारको हटाते नही, जमाते हैं. सवाल है, पैसेके बगैर हमारा काम हो सकता है ? या पैसा हो सकता है जो हमारा हो, सरकारका न भी हो?

हमारा सिक्का, हमारी साख. सुनो वीर ! असल क्रांति वह है. तमंचा तोपका सामना न कर पाएगा. चलेगा वह जिसके आगे तोप न चले. क्यों वीर, ठीक कहता हूं ?"

वीर सरदारके तर्कमें किसी सूतको न पा सका.

जितेनने हंसकर कहा--"चलो छोड़ो. तो रुपया चाहिए. कितना चाहिए ?"

"आपने पचास हजारके लिए कहा था."

"अच्छा ! उतनेके बाद छुट्टी होगी ?"

वीरने असमंजससे कहा—"आप क्या सोच रहे हैं ?"

"जाने क्या सोच रहा हूं, वीर" जितेन खुलकर बोला--"खुद मेरी समझमें नहीं आता. सब गड़-बड़ा गया मालूम होता है. आदमी किसपर टिका है ? आखिर एक टेकपर. श्रद्धाकी हो, या वह हठकी हो. टेकसे डिगा कि गया. क्या कहते हो ?"

इस अपने सरदारको समझना साथियोंके लिए कठिन होता है. बातों में उसके सीधी संगति नहीं मिलती. पर लगती फिर भी वे पतेकी हैं. तर्क करते उनपर नहीं बनता, चकित रह जाना पड़ता है.

"छोड़ो," जितेनने कहा—"क्या बज गया है ? ओह, साढ़े नौ ! गाड़ी कहां खड़ी है ?"

"वही बड़के पास."

"अच्छा वीर ! रुपएकी कोशिश करूंगा. लेकिन बात सही नहीं है. रुपया सरकार बनाए, हम क्यों न बनाएं ? सिक्केके हाथ नहीं, श्रमके हाथ सत्ता होनी चाहिए. श्रम सिक्का हो और सिक्का मिट्टी हो, तब है क्रांति. बाकी तमाशा है, बाकी सब सरकारकी पूजा है. क्रांति कहते हैं, पर करते पूजा हैं. धन लूटकर सिवा इसके क्या होता है कि धन ईश्वर बनता है. नहीं-नहीं वीर, बात सही नहीं है. . खैर, खयाल रखना, पीछेके लिए तुम हो....मैं जा रहा हूं. वह दरवाजा खोल देना—अब बंद रहनेकी जरूरत नहीं है."

कहकर जितेन ठहरा नहीं, सीढ़ियोंसे उतरता चला आया और जीप लेकर तेजीसे जंगलवाले डेरेकी ओर चला. (वहाका नक्शा देनेकी आवश्यकता नहीं है, अखबारोंमें आ चुका है.) मोहिनी एक अलग कमरेमें थी. कमरा उसे क्या कहे, खपरैलसे पटी एक जगह थी. जगह काफी आराम-देह बनाई गई थी. तख्तपर मोटी तोशक, तकिया, कुर्सी, तिपाई, स्टूल और एक तरफ स्नानादिकी व्यवस्था बाहर पहरा था.

"आ सकता हूं ?" कहकर जितेन कमरेमें घुसा. उस समय मोहिनी तकिएका सहारा लिए, शाल शरीरपर डाले लेटी थी और आवाजपर सम्भ्रम-से बैठी हो आई थी.

आकर जितेनने दरवाजेको अदरसे देखा. कहा—"क्षमा कीजिएगा, लेकिन क्या आप यहा यह साकल नही लगा सकती थी ?"

मोहिनी चुप बैठी रह गई

"इतनी डर गई है कि अपनी सामान्य सुरक्षाके लिए इतना नहीं कर सकतीं...इजाजत हो तो अब लगा दू ?" कहकर जितेनने अन्दरसे साकल चढा दी और बढकर कुर्सीपर बैठते हुए कहा—"इजाजत है, बैठ सकता हूं ?"

"क्या मुझे हुक्म है कि मैं खड़ी हो जाऊं ?"

"आप तकलीफ न कीजिए—"

मोहिनीने पांव तख्तके नीचे लटकाए. वह सीधी हो आई और बोली—"खत मेरा पहुँचा दिया ?"

"क्यों ?"

"नहीं पहुंचाया ?"

"छोड़िए," जितेनने कहा—"आपको मालूम है आप किसलिए यहां हैं. हमको रुपएकी जरूरत है."

मोहिनीने कहा—"हो सकता है. मुझे जवाबकी जरूरत थी."

"खत वह खास जरूरी न था. रुपएकी बाबत आपने—"

"मैं इसमें क्या कर सकती हूं ?"

"आप जानती हैं आप क्या कर सकती हैं. जरूरत पूरी कर सकती है."

"रुपया तो मुझमें नहीं है, जान है. वह लेकर आपका काम नहीं चल सकता ?"

"समझा, तो रुपया जानसे प्यारा है. शायद उसीसे काम चलाना पड़े."

"उसमें मैं आपकी पूरी मदद कर सकती हूं. देखिएगा, एक भी आह न छोड़ेगी."

"जेवर आप वापस चाहती हैं ?"

"मेहरबानी है आपकी."

गुस्सेमें जितेनने कहा– "मोहिनी, बनो नहीं. रुपएकी हमें जरूरत है."

"जाइए लूट ले आइए. आपके लिए क्या कमी ? यह तो हम बूर्जुआ हैं कि कुछ नही कर सकते, सिर्फ कमा ही सकते हैं !"

तैशमें सिसकी-सी भरते जितेनने कहा—"यह कमाया है जिससे लाखोंके जेवर बने हैं ? और महल और ठाठ और..."

"नहीं, लूटा है !"

"हां, लूटा है. नहीं हड्डी चूस-चूसकर जमा किया है....छोड़ो, सीधे दोगी ?"

"कह चुकी हूं जाओ, और डाका डालकर उठा लाओ. क्यों डरते हो ? यही समझकर लूटमारको धंधा बनाया है न कि सब तुम लोगोंका है. उनका थोड़े ही है जो काम करते हैं. सब उनका है जो क्रांति करते हैं. शरम नहीं आई तुम्हें कि इतने बड़े क्रांतिके करनेवाले होकर एक औरतसे मांगने बैठ गए !"

धीमी आवाजमें जितेनने कहा—"तो मोहिनी, यही करना होगा ?"

"मुझसे पूछते हो. यही पूछने आए हो ?"

"हां, यही पूछने आया हूं और यह कहने भी कि हमारे पास वक्त

नहीं है."

वक्त नहीं है तो जाओ, यहां उसे वृथा न गंवाओ."

"जाता हूं और समय व्यर्थ न करूंगा." कहकर जितेन उठा, उसने दरवाजा खोला और पहरेके आदमीको इशारा किया. थोड़ी देरमें दो युवक भीतर आए, उनके हाथमें रस्सी थी.

जितेनने उनके हाथसे रस्सी खींचकर झटकेसे एक कोनेमें फेंक दी. कहा—"तुम लोग जानवर तो नहीं हो !" फिर मोहिनीकी ओर मुड़कर कहा—"ये लोग दूसरी जगह तुम्हारा इन्तजाम करने आए हैं. यह डेरा उखाड़ना होगा. यहांसे दूर जाना होगा. (युवकोंकी तरफ) ले जाओ."

युवक ठिठकेसे रहे. मोहिनी क्षण-भर स्तब्ध बैठी रह गई. उसका क्षोभ पार लांघ गया. वह जैसे करुणा बन आया [illegible] और जितेनकी कुर्सीके पास घुटनों बैठकर उसने जितेनका [illegible] आंखोंमें उसकी विह्वलता थी. जितेनने हाथ छुड़ाकर कहा—"[illegible] नहीं, ले जाओ."

युवक बढ़े. मोहिनी कातर कण्ठसे बोली—"जितेन

"जितेन यहां कोई नहीं है. और, तुम [illegible] न लो. यह जंगल है."

पैरोंसे माथा टेककर मोहिनी बोली—"[illegible] इतने निर्दय न बनो."

जितेनने अपना पैर खिंचकर कहा—"[illegible] नहीं जाते ?"

मोहिनीने विवश उनके [illegible] सिपाहीको एक तरफ हटा [illegible] गया. मोहिनीने [illegible] लिया

जितेनने कहा—"[illegible]

युवकोंके जानेपर उसने कहा—"यही तुम आह न भरने वाली थीं !"

मोहिनीने जितेनके दाहिने हाथको खींचकर बार बार मुंहसे लगाया, आंखोंसे लगाया, सारे चेहरेसे लगाया और सुबकते-सुबकते कहा—"जितेन.. जितेन !"

"उठो," जितेनने कहा—"दरवाजा खुला है, बंद कर दो. इतनी नीच बनती हो ! इसमें तुम्हें न आए, मुझे शरम आती है."

इसपर मोहिनी बूटके तस्मोंसे ऊपर पांवके मोजोंपर बार-बार जितेनके दोनों पैरोंको चूम उठी.

जितेन कुछ न समझ सका. घबराकर उठा, दरवाजा बंद किया और आकर मोहिनीको ऊपर उठाया. मोहिनी कटे वृक्षकी नाईं उसकी छातीपर सिर टेककर पड़ रही. अवश बने जितेनने कहा—"मोहिनी मोहिनी !"

मोहिनी उसकी छातीमें सिर छिपाकर सुबकती ही रही, कुछ बोली नहीं. जितेनने उसे सम्हालकर उठाया और तख्तपर बैठा दिया. प्रयत्न-से ही उसे अलग करके वह अपनी कुर्सीपर आ सका. देखा, मोहिनीकी आंखोंसे आंसुओंकी धारा चल रही है. वह नाराज हुआ, बोला—"क्या है यह सब, मोहिनी ?"

अपने आंसुओंके बीचमेंसे मोहिनी बोली—"मुझे सचमुच मार क्यों नहीं देते हो, जितेन ? क्यों त्रास पाते हो ?"

जितेनने बेहद तेज होकर कहा—"आंसूसे बात न कर औरत, सीधी बात कर."

"कहती तो हूं जितेन, सीधे मुझे मार दो. टेढ़ेसे अपनेको न मारो."

जितेन ठण्डे, कटे स्वरसे बोला—"मुझे रुपया चाहिए."

"सब लेते रहना," मोहिनीने कहा—"मुझे पहले खतम कर दो."

पैरके बूट जोरसे फर्शपर पीटकर जितेन खड़ा हो गया. दरवाजा

खोलकर बोला—"ए ! कह दो, वे आ सकते हैं."

थोड़ी देरमें वे ही दो युवक आए. इस बार जितेनने उठकर कोनेमें पड़ी रस्सी खुद उठाकर उनके हाथमें दे दी. कहा—"ले जाओ वेश्याको."

युवक बढ़े. मोहिनी खड़ी हो आई और हाथ उसने आगे कर दिए. युवकोंने हाथ बांधे अब आंसू उसके बन्द हो गए थे. एक गहरी विषाद भरी मुस्कराहट चेहरेपर आ गई थी. जितेनकी ओर देखकर बोली—"जाऊं ?"

जितेनने सख्त रोबसे कहा—"ले जाओ."

युवक मोहिनीको बंधे हाथों बाहर ले गए. जितेन खड़ा देखता रहा, देखता रहा. फिर कुर्सीपर बैठा और कोहनी तिपाईपर रखे सामने देखता रहा, देखता रहा. सामने दरवाजेके बाहर सूना था सब चला जा चुका था. उस सूनी सफेदीमें देखता रहा, जहा कुछ न दीखता था.

दस-पन्द्रह मिनट हो गए वह कहीं नहीं गया, न कुर्सीमें से हिला या डुला. दोनों बाहोंकी हथेलियोंपर मु ह टिकाए और सुन्न भवितव्य मे आंख गडाए वह बैठा रह गया.

फिर सिर एकाएक पीछे फेंककर उसने आवाज दी और आदमियों को बुलवाया. पूछा—"कहा रखा है ?"

"उसी कोठरीमें."

"कोठरी नहीं," गुस्सेसे उसने कहा—"वहा क्या है ?"

"चटाई है, कम्बल है, बाल्टी पानी है"

"मालूम है, सरदीके दिन हैं ?"

"पुआल रख दें साथ ?"

"इसके लिए मुझसे पूछोगे ? जाओ..."

उनको विदा कर फिर जितेनने मालूम किया आशंका है, कितनी मुरक्षा. रह-रहकर खबर ली

निगाहमें आ चुकी है और अब अधिक सुरक्षित नहीं समझी जा सकती. वदलना तो है ही, पर सहसा दूसरी जगहका इन्तजाम मुश्किल है. डेरेका पूरा पक्का मुआयना करके आखिर वह मोहिनी वाली कोठरीमें आया.

मोहिनीने मुस्कराकर स्वागत किया और कहा—"चटाईपर कैसे वैठोगे ? कुर्सी मंगा लेते !"

जितेन चटाईपर ही जैसे-तैसे वैठ गया. वोला—"तुमको क्या हुआ है, मोहिनी ?"

मोहिनीने हंसकर कहा—"छोड़ो, तुम क्या यहीं रहते हो ?"

"नहीं, यहां नहीं रहता हूं."

"तुम्हारा घर एक बार देखना चाहती हूं. कैदी वहीं वना लेते."

"घर हां, एक हो तो गया है."

"कोई है वहां ?"

"हां, है. सुनो रुपया तुम अगर दे सकतीं .. नहीं तो मैं क्या करूंगा ?"

मोहिनीने हंसकर कहा—"रुपएके वगैर जो सव किया करते हैं. इतने सारे लोग क्या किया करते हैं ?"

"तुम समझो, मोहिनी ! हमारा वड़ा परिवार है. सव मेरे आश्रित हैं. लानेको एक मैं. कहांसे लाऊं सवका पेट भरनेको. आखिर वहीं से आएगा जहां है. जहां है वहां उसके होनेका तुम्हीं सोचो कोई समर्थन है ? सहते जाना हो तो सहते जाओ. पर सही समर्थन तो कहीं है नहीं. इससे दल वांधता चला गया, वढ़ाता चला गया और इधर-उधरसे लेता चला गया. सच जानो, हममें यथावश्यकसे ज्यादा कोई नहीं लेता है. सव अकेले हैं और झमेलों नातोंसे दूर. तव वे क्यों न अपने रहें और करें ? और इस रहने-करनेमें कोई वाधा कैसे वर्दाश्तकी जाए ?—इससे कहता था कुछ रुपएका इन्तजाम कर दो. न सही पचास, कम सही. देखो जिद न करो."

हंसकर मोहिनीने कहा—"इतना बड़ा परिवार है, एक मैं और सही. सब ऐसे रहते हैं न जैसे यह तुम्हारी कोठरी. मैं ऐसे रह लूंगी. पर पैसा नहीं है एक भी मेरे पास."

जितेन भीतर छिड़ गया.. वह नाराज हुआ. उठकर खड़ा हो गया. कोठरीके बीचमें आकर उसने इधर-उधर देखा, फिर बाहरकी ओर आवाज देकर कहा—"इधर आओ."

आदमी पुआलका गट्ठा लिए सामने आया जितेन बोला—"बाहर उस कोनेमें डाल दो."

मोहिनी अपनी मुस्कराहटको अपनेमें झेलकर एक ओर चुप रह गई.

जितेनने आदमीसे कहा—"कहे तो एक कम्बल और दे देना, और एक स्टूल ला देना पूछो, कुछ और चाहिए."

आदमीने मोहिनीसे पूछा—"कुछ और चाहिए ?"

"कुछ नहीं चाहिए."

जितेनके लिए जैसे मोहिनी रही ही नहीं. चटाईपर एक ओर उसे छोड़कर वह कोठरीमें अपने जूतोंमें घूम-घूमकर इन्तजाम बताता रहा आखिर बोला—"सब ठीक कर देना, समझे ? शामको पुआल बिछा देना."

कहकर जितेन चलनेको हुआ. मोहिनीने बढ़कर जितेनका हाथ थामना चाहा किंतु जितेन हाथ बचाकर दृढ़ कदमोंसे बाहर निकलता चला गया.

१६

•••

जितेनने बाहर आकर सख्त हिदायत की कि किसीको पास जानेकी जरूरत नहीं और न ही रियायत करनेकी मालूम हो कि वह ठीक है रही है और कुछ कहना चाहती है तो सुन लिया जाए, खास ...

खबर दी जाए...और कुछ होगा तो सदर मुकामसे खबर आयगी.

वहांसे जितेन चला तो मन भारी था. जीपपर वह अकेला था और खुद ड्राइव कर रहा था. मालूम हुआ कि उसे ढील चाहिए, हर वक्त कसा रहना ठीक नहीं, मनको तानकर रखनेका तो मतलब है कि दुनियामें प्रकृति है नहीं, आदमी ही है, जिससे राग-द्वेष आवश्यक होता है पर खुली प्रकृति भी है, जो हमें ज्यों का त्यों लेनेको तैयार है. विधि-निषेध उसके पास नहीं है, अच्छा-बुरा नहीं है, उसमें हम डूब सकते हैं, नहा सकते हैं. इस मनकी वहकमें वह जीप दौड़ाता जमना आ गया. जमनाके तीरपरसे देखा, उधर रेत है और जंगल है. उसके पैरोंके नीचे होकर धारा वही जा रही है. चार-पांच मिनट वह इस निर्जन विस्तार को भूला-सा देखता खड़ा रहा. सहसा भीतरसे उसमें दबावने उठकर बताया कि काम है. हर समय सिरपर यह काम-धामका हुए जाना उसे बुरा मालूम हुआ. वह जमनाके किनारे-किनारे चलने लगा. चलते-चलते बांई ओर देखा कि बोट-क्लबका साइनबोर्ड है. याद आया कि यह तो वही प्रोफेसर मित्रवाला बोट-क्लब है. वह उसके अन्दर हो लिया. वहां कोई नहीं था. मल्लाहकी घरवाली थी जो दौड़ी हुई आई और हुकुमके लिए पूछने लगी.

जितेन खाली मन था. अनायास बोला—"नाव है ?"

औरत कुछ चकित-सी रही, प्रश्न कुछ अजीब था. नाव भी नहीं है तो यहां क्या है ! बोली—"पतवार निकालूं ?"

"हां, लेकिन ..रख लो निकाल के."

कहकर वह अपनेपर विस्मित हुआ. स्त्रीने कहा—"कब आएंगे ?"

मालूम हुआ कि उसे अब समय देना चाहिए. बोला—"रातको आएंगे दस बजे."

"पीलीवाली छोटी डोंगी..."

"हां...हां वही."

वह इन कालिजवालोंको जानती है. मौजी लोग होते हैं. उस

दिन पिरोफेसर साहब रातके तीन बजे आए और डोंगी लेकर चल दिए. उस दिन तीन लडकिया आईं, बोली कि नाव दो. चाद था और इगारह बजा था. कहने लगीं कि हम तीन अकेले जाएगे मैंने कहा भी कि मैं ले चलता हू नाव, पर वे नही मानी कि हम अकेले जाएंगे. सो ऐसे लोग उसके लिए बिल्कुल नए नही थे. सोचती हुई बोली—"अच्छा बाबू."

जितेन खड़ा था और देख रहा था. उसे अनुभव हुआ कि अब यहां रहना अनावश्यक है. कमीजकी जेबमें हाथ डालकर वह वहासे चल दिया, जैसे निकाला जा रहा हो. स्त्री कुछ देर इन मौजी बाबूको देखती रही. और फिर काममें लग गई.

जितेनने ऐसे ही पाच-दस मिनट बिताए. पर इससे क्या हो सकता था. अपने आपको तो उसे उठाना ही था. हारकर वह जीपपर आया और उसे स्टार्ट करके उसी पक्की सड़कपर आगे बढा. क्या उसे रोकता है ? क्या बाधता है ? जैसे अभी राह-बेराह वह जमनाके किनारे चल रहा था, वैसे ही निर्बन्ध होकर नही चला जा सकता क्या ? क्या यह जीप और यह पक्की सडक और यह भागना—कोई विवशता है ? नहीं विवशता नही है, वह स्वतन्त्र है. पर अपनेमें ही बधा है. बन्धन कर्मका कहो, व्यवस्थाका कहो, नियतिका कहो, वह है और अमोघ है. ओह ! क्या उससे छुटकारा नही होगा ?

पहुचा वही अपनी तिन्नीके पास. तिन्नी देखकर घबरा आई. चेहरा सदा वाला न था हमेशा उसपर एक प्रण, एक सकल्प रहता था. मानो वह जानता है, खूब जानता है कि उसे करना है और क्या करना है. पर यह चेहरा और था, मानो वह भूल गया है, अपने करनेकी बातको लेकर खो गया है बोली—"कहांसे आ रहे हो ?"

"वहीसे आ रहा हू."

"क्या बात है ?"

"कुछ नही, तकिया डाल दो, सोऊंगा."

तिन्नीने बूटके तसमे खोले, जूता अलग रखा, कमीज टांग दी, तकिया उठा लाई और चादर दे दी. जितेन लेट गया. तिन्नीने सिरहाने बैठकर माथेपर हाथ रखते हुए कहा—"दूर गए थे क्या ? थक गए हो !"

"हां थक गया हूं; मुझे सोने दो, जगाना नहीं."

तिन्नी धीरे-धीरे माथेपर हाथ फेरने लगी और जितेन आंख बन्द किए कुछ मिनट पड़ा रहा. इसके बाद सोते-सोते उसने अपने माथे पर घूमते हुए तिन्नीके हाथको हौलेसे लेकर अलग कर दिया. तिन्नी अलग होकर कुछ देर विषादमें बैठी इस सोते हुए भटके शिशुको देखती रही. फिर उठकर चली गई.

उठकर जितेन कुछ देर कमरेमें टहला. फिर तख्तपर आकर उसने दो पत्र लिखे. दोनोंको लिफाफेमें रखकर अपने हाथसे बन्द किया और तिन्नीको बुलाकर कहा—"तिन्नी, य दो लिफाफे हैं. यह वाला पठान को देना, कल सवेरे ठीक जगह पहुंचा देगा. दूसरा अपने पास रखो. शामको कोई आएगा. वह आयंगी जिनके जेवर हैं. जेवर उनको दे देना और यह चिट्ठी देना और वह जैसा कहें वैसा करना."

तिन्नीने लिफाफे लिए और कहा हुआ सुन लिया. वह कुछ बोली नहीं, इस व्यक्तिसे ज्यादा बोला-चाला नहीं जा सकता, न पूछा-ताछा जा सकता है. ऐसा नहीं कि वह कुछ छिपाता है, सिर्फ यही कि पूछना संगत नहीं होता.

लिफाफे हाथमें लिए वह गुमसुम खड़ी रही, जानती थी कि क्षण भारी है, पर चुपचाप झेलते जाना उसका अपना भाग है. जितेनने कहा—"तिन्नी, जैसा वह कहें करना, जैसे रखें रहना. मेरी जगह उन्हें मानना. मैं तो..." आगे जितेन बातको अपनेमें समाकर रह गया और अन्यत्र देखता रहा. तिन्नी उस ओर टक बांधे रही. जितेनको सहसा ध्यान आया कि वह देखा जा रहा है और बात बीचमें अधूरेपर रह गई है. बोला—"मुझे जाना है तिन्नी, बहुत दूर जाना है !"

"अच्छी बात है. उसका कष्ट क्यों मानते हो ? मेरी तुम्हे चिन्ता है ?"

जितेनको सचमुच कष्ट हुआ, बोला—"तुम्हारी व्यवस्था करके जाऊंगा."

तिन्नी मुस्कराई, बोली—"अच्छी बात है, लेकिन मैं चिन्ताके लायक नही हू. तुम भगवान्‌को नही मानते, जो सबकी व्यवस्था करता है... दूर कहा जा रहे हो ?"

"सबसे दूर तुम्हारे भगवान् है, राह बताओ तो मै उधर ही जानेकी सोचू."

"वह तो पास ही है...विप्पा, मत जाओ"

जितेन एक सूखी मुस्कराहटसे हसा, बोला—"वारट आए तो जाना पड़ता है, तिन्नी ?"

तिन्नी घबराई, बोली—"वारट !"

"घबरानेकी बात नहीं है." जितेनने हसकर कहा—"वारन्ट सरकारी नही है ..तुम्हारे भगवान् कैसे बुलाते है ? उनका वारन्ट कैसा होता है ? यमदेवकी मार्फत आता है न ? उन्हीका वारन्ट होता तो तिन्नी मै पार पा जाता. सच मे तग आ गया हू. तुम्हारे भगवान् क्या सुनते नही है ? कहो तुम उनसे तिन्नी कि मुझे बुला लें. तुम्हारी वह सुन लेगे मै तो उन्हे जानता नही, कभी पुकारता नही ."

"क्या बात है ?" तिन्नी बोली—"तुम्हे क्या नींद नही आई ?"

"खूब आई थी, छोडो . कपडे तो देना "

कपड़े पहनकर, मानो फौजी अफसर हो, वह चल दिया.

* * *

मोहिनी चौबीस घण्टे उसी कोठरीमें रखी गई. वह सारे काल बहुत प्रसन्न रही, मानो यह रहन-सहन उसका अपना हो, इसीकी वह आदी हो. वह मजेमें कम्बलपर सोई, दूसरा कम्बल ओढनेको कभी कुछ देरके लिए विषादकी छाया उसपर आ जाती. पर वह

देर न ठहर पाती. वह अपने आस-पास देखती और प्रसन्न हो आती. कठिनाइयोंका उसे अभाव था, मानो उनकी उसमें साध थी. घरमें यह वस्तु उसे दुर्लभ थी. न पीहरमें, ससुरालमें उसे इसका अवकाश था ; दोनों ही जगह प्रचुरता थी. अब यह अवसर आया तो उसे नया मालूम हुआ. गहरेमें वह यह भी अनुभव करती थी कि वह तो एवजमें है, आगे बढ़कर सजा ले रही है, सजा असलमें किसी औरके भागकी है. इसपर एक गहरी कृतार्थताका उसे बोध होता और तब सबके लिए उसके मनमें प्रसन्नता हो उठती.

दिन-भर बीत गया. कोई घटना नहीं हुई. उससे न कुछ पूछा गया, न कहा गया. यह अप्रत्याशित था. समझती थी उससे पूछा जाएगा, लेकिन जैसे उधर किसीका ध्यान ही न था. शामके समय उसे बताया गया कि चलना होगा.

एक बन्द मोटरगाड़ीमें उसे ले जाया गया. आध एक घण्टे बाद मोटरका दरवाजा खुला और उसने पाया कि सामने ही एक पर्देदार डोली रखी है. उसमें उसे बिठा दिया गया और दो जने कन्धेपर उस डोलीको उठाकर चले. डोली जमीनपर जब रखी गई और एक तरफ का पर्दा हटा तो मोहिनीने देखा, ऊपरको जाती हुई तंग सीढ़ियां उसके सामने हैं. कहा गया कि वह ऊपर चले. मोहिनी सीढ़ियोंपर चढ़ती चली गई और उसने अपनेको एक कमरेमें पाया.

मोहिनीके आते ही तिन्नीने बढ़कर जीनेका दरवाजा बन्द कर दिया. मोहिनी कुछ न समझ सकी कि वह कहां है ?

"आओ, बहन !"

मोहिनीको सुनकर विचित्र मालूम हुआ. जिसने यह कहा वह कमरेकी लालटेनकी बत्ती ऊंची करके उस ठिठकी हुईके पास आई और अंगुली पकड़कर तखत तक ले गई और वहां बिठा दिया.

मोहिनीने कमरेको देखा. (हमारा वह देखा हुआ है). कमरा जितेन वाला था और उसी रूपमें था. मोहिनीने पूछा—"तुम कौन हो ?"

तिन्नीने कहा—"मैं तिन्नी हूं और यह हमारा घर है...ठहरिए और बताती हू..." कहकर वह जेवरोंके डिब्बे ले आई और उनके साथ एक लिफाफा.

मोहिनीने डिब्बे पहचाने, मगर उन्हे छुआ नही. वह विस्मयसे सामने इस नन्ही सी तिन्नीको देखती रह गई.

"ये आपके है न ?" तिन्नी बोली—"देख लीजिए."

"मेरे है !" विस्मयके भावसे मोहिनीने कहा—"मेरे ये कैसे है ?"

"वही कहते थे. कहते थे कि आएंगी, उनके है. उन्हे ही दे देना."

"कौन कहते थे !"

"वही." कुछ लाल पडकर तिन्नीने कहा—"सरदार कहते थे कि तुम्हारे यहासे उठाए गए है"

मोहिनीने कहा—"कौन है वह तुम्हारे सरदार ? बहकाते होगे"

तिन्नीने बीचमे ही उत्तेजित होकर कहा—"नही, वह झूठ नही बोलते."

"और यह सच है" मोहिनीने हसकर कहा—"कि वह चोरी करते है ?"

"कहा तो सच ही होगा." तिन्नी बोली—"कहते थे मुझे समझाकर कि चोरी हम करते है, लेकिन चोरोंके यहासे चोरीका माल चुराकर लाते है कि साहको दे दे...और कहते थे कि साह, जानती हो, कौन है ? गरीब जितने है सब साह है और अमीर बहुतसे चोर है..."

मोहिनी सुनती रही फिर बोली—"कहा है वह चोरोंके सरदार ? झूठोंके भी सरदार मालूम होते है मेरे बारेमे कुछ कहते थे ?"

"हा, कहते थे कि बडी अमीर हो और बडी.. अच्छी हो."

मोहिनीने नाराजीसे कहा—"इसलिए मुझ—चुराया है ?"

तिन्नी चौंकी सी बोली—"क्या कहती हो, बहन ? [illegible] है. उनके जैसा दयावान तो कोई होगा नही."

"नही, कोई नही है." मोहिनीने कहा और डिब्बे [illegible]

काती हुई बोली—"लो, इन्हें ले जाओ." फिर उसने लिफाफा खोला-पढ़ा, लिखा था—

"मोहिनी ! यह तिन्नी तुमपर है. बारह लड़के और हैं. वे भी तुमपर हैं. यह शुक्रवार है. सोमके शाम तकका समय है. समय थोड़ा है. और मुझे इधर-उधर भी जाना है. याद रखना—सोमकी शाम. इससे पहले सब हो जाए. ठिकाने टूट जाएं. युवक विदा हो जाएं. सबको हजार एक रुपया दे दिया जाए. मेरे पास वक्त नहीं है. मांफी मागनेका भी नहीं है. शोमकी शामतक न हुआ तो औरोंपर आंच आ सकती है. वह नहीं होना चाहिए.

– जितेन."

पत्र हाथमें लिए मोहिनी बैठी रह गई. समझ गई उसका व्रत पूरा हुआ. उसने तिन्नीको देखा. तिन्नी टक बांधे उसे देख रही थी. मोहिनीके हृदयमें अनुकम्पा भर आई. उसने तिन्नीको पास बुलाया और पूछा—"सरदार तुमसे क्या कहकर गए हैं ?"

तिन्नीने कहा—"कुछ भी और नहीं कहा, बहन ! यही कहा कि तुम आओगी और सब तुम्हें सौंपकर जैसा तुम कहो वैसा मैं करूं"

"नहीं, अपने बारेमें क्या बताया कि कहां जा रहे हैं ?"

"सो क्या कभी उन्होंने बताया है !"

"और कुछ नहीं कह गए ?"

"नहीं, कुछ नहीं कह गए."

"कब गए हैं ?"

"कल रातको ही गए हैं."

मोहिनी सोचती बैठी रही. थोड़ी देरमें उसने पूछा—"तुम्हें मालूम है तिन्नी, इस कागजमें क्या लिखा है ?"

तिन्नीने जिज्ञासासे पूछा—"क्या लिखा है ?"

"कुछ कह नहीं गए तुमसे ?"

"नहीं, यही कह गए थे कि आपकी आज्ञामें रहूं और..." आगे

कहते-कहते वह एकदम सकोचमे घिर आई, कुछ बोल न सकी.

"और क्या तिन्नी !"

"नही, कुछ नही"

"बताओ, बताओ और क्या ?"

"नही, बहन वह तो उनकी आदत है ...कुछ नही, मुझसे माफी मागते थे !"

"किस बातकी माफी मागते थे ?"

"कुछ बात भी हो, बहन ! वह तो देवता थे. बात-बातपर भीग आते थे और हर बातपर अन्तमे मुझसे माफी मागने लगते थे मेरी तो मुसीबत थी. कापती रहती मै. हमारे देशमे अकाल पडा था न बहन ! तब क्या बीता,...पर उसे क्या बताऊ ? आखिर पचास रुपए मांगकर बापने मुझे इनके हाथ दे दिया समभी, मै दासी बनी, और निश्चित हुई. पर यह तो आदमी थे नही क्या कहू नही जानती, इससे देवता कहती हू पर देवतामे भी दिल होता होगा इन आदमीमे दिल नही है. कहते थे, दीन जन उनके देवता है. मै उनके लिए मूरत थी, भारत-माता थी, मै उनके लिए जाने क्या थी ? पचास रुपए देकर मेरे बापको उन्होने उबारा और मुझे नरकसे बचाया. पर कहते थे, यह उन्होने पातक किया. हर बार रोते और इसकी माफी मागते. वही बात है बहन, और कोई बात नही."

मोहिनी सुनती हुई दूर पार देखती रही अन्तमे उसने कहा—"यह नही कह गए थे तिन्नी कि मेहमानकी खातिर करना ! चलू, देखू, तुम्हारा चौका-बौका कहा है ?"

जाकर बराबरमें तिन्नी वाली छोटी कोठरीको देखा. वापस फिर कमरेको देखा कहा—"बस यही है, तिन्नी ? यही वह रहते थे ?"

"हां, यही रहते थे."

"यहा तो सामान भी नही है."

"सब तो सामान है."

"यही सब सामान है ?"

तिन्नीने विस्मयसे कहा—"और नहीं तो—?"

मोहिनीने कुछ उत्तर नहीं दिया. दूसरी तरफ वह उस सहनमें भी जहां थोड़ेमें टीन पड़ा था, बाकी खुला था. घूमकर फिर लौट आई र तखतपर आ बैठी. उसकी कुछ समझ न आया. रहनेका यह भी रीका होता है, वह जानती न थी, जहां चीजोंको लिया नहीं जाता है, पनाया नहीं जाता है. जैसे स्वयंमें रहने दिया जाता है. जहां व्यक्ति अपनेसे अपनेको ऋण करके रहता है, ऐसे कि मानो वह है ही नहीं, सिर्फ शून्य है.

मोहिनी कुछ देर उस तखतपर बैठी भूली सी रही. फिर बोली—

"तिन्नी ! "कुछ बनाकर दे सकोगी ? थकान मालूम होती है."

तिन्नी चौकेमें जाकर कामपर लगी. मोहिनी थोड़ी देर वैसे ही अकेली बैठी रही. फिर उठकर चौकेमें ही आ गई. बोली—

"तिन्नी, नीचे कौन रहता है ?"

"उन्हींके आदमी रहते हैं."

"तुम जानती हो उन्हें ?"

"हां, सबको जानती हूं."

"कोई ऊपर तो आया नहीं ?"

"ऊपर कोई आ नहीं सकता. बुलाया जाए तभी आ सकता है."

"तिन्नी ! कबसे तुम इनके साथ हो ?"

"तीन-एक साल हो गए ..एक बात पूछूं, बहन ? तुम्हारे यहां व बीमार रहे थे. तुमने सेवासे उन्हें अच्छा किया. फिर वह ऐसा क करते हैं ? तुम्हें क्यों सताते हैं ?"

"मुझे सताते हैं ? तुमसे किसने यह कहा ? ...नहीं, मुझे दण्ड हैं. अमीरीका दण्ड देते हैं."

"बहन ! बुरा न मानना. तुम क्यों उन्हें सताती हो ?"

सुनकर मोहिनी गूंगी रह गई. वह इस भोली तिन्नीको देखत

गई जो भोली न थी. तिन्नी बोली—"बहन ! पुरुषोंकी और बात है. वे तो प्रेमके लिए हैं नहीं, पर हम स्त्रियाँ प्रेमको स्वीकार नहीं करेंगी तो कहा जाएँगी ?"

मोहिनी आश्चर्यमें तिन्नीको देखते हुए बोली—"क्या बहकी सी कह रही हो, तिन्नी ?"

"देख तो बहन ? हम लोगोंके पति भी होते हैं, परमेश्वर भी होते हैं. पतिको परमेश्वर भी माननेको कहा गया है. क्या यह सब इसीलिए नहीं है कि प्रेमका अस्वीकार हमारा धर्म नहीं है. तुम क्यों उनके प्रेमको सीधे स्वीकार नहीं कर सकी ? विवाहित थी तो—"

"तिन्नी ! नहीं, मैं तुम्हें बहकने न दूंगी. देखो, नीचे कोई हो तो बुला देना जो यहांका मुखिया हो."

उसके बाद मोहिनी तत्पर हुई और व्यवस्थाके काम-धाममें लग गई.

*   *   *   *

रातको ग्यारह बजेके बाद आकर जितेनने नाव ली, पतवारें सम्हालीं और धारामें उल्टी तरफ खेने लगा सब सुनसान था. रात हंसती थी. तारे बहुत थे और बहुत घने थे और बहुत उजले थे. चांद था नहीं. पेड़ सोए थे. पानी भी सोया लगता था, अगर्चे बह रहा था. बस डाडकी छप-छपकी आवाज एक आवाज थी, या फिर किनारोंसे आती झिल्ली की टेर, जो मौन ही को तीखा करती थी. जितेन खेए गया खेए गया कोट उतारकर उसने बराबर रख लिया था, सिर्फ बदनपर बनियान पहने था, पर इसमें भी उसे गरमी मालूम होती थी मील भर ऊपर आ गया होगा. रातकी सरदीमें भी कड़े श्रमसे पसीनेकी बूंदें माथेपर आ टपकी थीं. वह खेए ही गया. बस्ती दूर छूट गई थी. उसे अच्छा मालूम हो रहा था. वह था और सन्नाटा बीचमें कहीं कुछ बाधा होनेको न था. परन्तु यह क्या ? जैसे रोशनी ढूंढती हुई सी आसपासमें घूमकर उस तक आई. यह रोशनी कौन फेंक रहा है? लेकिन देखते-देखते वह गुम हो

गई. होगा, वह नाव खेए गया. अब वह थक कर चूर हो गया था. नाव उसने दूसरे किनारेके रेतपर लगाई और उतरकर वह बालूपर चित लेट गया. उसे अच्छा मालूम हो रहा था. रेत ठंडी थी, शायद जरूरतसे ज्यादा ठंडी थी. रात ठंडी थी और सरदी मामूलसे अधिक थी. लेकिन सब उसे सुहावना लगा और शीतका स्पर्श उसे सुखकर मालूम हुआ. वह अपने पूरे फैलावमें लेटा रहा. पैरोंमें बूट थे, उससे ऊपर पतलून थी, पर ऊपर खाली बनियान. थके शरीरपर सीली शीत-वायु उसे प्यारी लगी. अपने पूरे फैलावमें रेतपर बिछकर वह लेटा ही रहा. बांहें पीछे करके फैलाई, अंगड़ाई ली, फिर इधर-उधर करवटें लेकर रेतपर ही वह लोटने-पोटने लगा. जाने कबका यह मिट्टीका स्पर्श छूट गया था. अब वर्षों बाद, मानो जीवनों बाद मिट्टीसे लगकर उसने कृतार्थताका परस पाया. कभी सुन्न शिथिल हो रहता, कभी फिर लोटने-पोटने लगता. उसे कुछ भान न था, मानो वह था और धरतीसे लगी हुई उसकी कृतार्थता थी. ऐसे कब तक वह वहाँ रहा, पता नहीं. वह वहां रहे ही जाता, जब तक कि तड़का फूटकर जगतकी उपस्थिति उसे न सुझा देता. लेकिन उसने चौंककर देखा कि उसपर तेज रोशनी पड़ी हुई है और दो सिपाही और एक अफसर पास खड़े हैं. वह फौरन उठा और अफसरकी तरफ हाथ बढ़ाकर निस्संकोच प्रसन्नतासे बोला—"कहिए ?"

हाथ बढ़ा ही रह गया. अफसर अपनी ओरसे हिला नहीं. पूछा—"तुम कौन हो ?"

"मैं !" जितेनने कहा—"एक परेशान आदमी हूं."

हुक्म हुआ—"ले चलो."

अफसर मुड़ा और सिपाही जितेनको पकड़कर ले चला.

पास उन लोगोंकी नाव थी. जितेन अपने प्रति विस्मित था कि इतनी बड़ी नाव पास आ गई और उसे पता नहीं चला. किनारे पहुंच कर उसने कहा—"इजाजत हो तो कोट ले लूं ?"

सुनकर अफसरने हुक्म दिया—"ले लो !"

"थैंक्स, (धन्यवाद)" जितेनने कहा—"अगर आप गलत न समझें तो यह नाव भी क्लबमें अपनी जगह पहुंचा दी जाए."

अफसरको हम जानते हैं. वह चड्ढा था. चड्ढा अपनेमें बन्द रहना चाहता था. लेकिन यह आदमी निहायत खुशगवार उसे मालूम हुआ. उसने पूछा—"किश्ती किसकी है ?"

"यों तो नाखुदाकी होती है" जितेनने कहा—"मगर क्लबकी है."

चड्ढा खुश हुआ. यह आदमी उसे पसन्द आया. कोटको वह देख चुका था, नावको देखनेकी उसने हिदायत दी. मालूम हो गया कि कोई खतरा नहीं है हंसकर कहा—"आइए, आपकी नावमें ही चलते हैं." कहकर उसने सिपाहियोंको हुक्म दिया कि वे नावपर चलें और अमुक जगह मिलें, हम आते हैं.

जितेनने कहा—"कृतज्ञ हूं कि मुझे पार करनेका मौका आप दे रहे हैं. आइए."

चड्ढाने अपनी कमी पेटीपर हाथ फेरकर अपनेको इतमिनान दिया और दोनों छोटी डोंगीपर आ बैठे जितेनने पतवारें सम्हालीं नाव बहावपर जा रही थी, खेनेकी खास जरूरत न थी दोनों बात करने लगे. चड्ढाने पूछा—"आपका घर कहां है ?"

"घर मेरा !" जितेनने कहा—"कहीं नहीं है. प्रेम नहीं वहां घर कैसा, आप ही कहिए ?"

चड्ढाको बात जची. बोला—"लड़कर निकल पड़े थे क्या ? रात यहीं रेतपर गुजारनेका ख्याल था ?"

"जी हां, रेत ठंडी थी और हवा भी ठंडी थी और मैं किसी कदर गरम था."

"चलो अच्छा हुआ, अब तुम्हें घर पहुंचा देंगे और मैं कहूंगा घर-वालोंसे कि ऐसा जुल्म न किया करें"

"मुझे घर ले जाइएगा ! जी नहीं, ऐसा न कीजिए."

चड्ढा हंसा प्रेम उसके लिए भी एक मसला है, भुक्त-भोगी ठहरा

बोला—"मैं साथ चलता हूं, घबराते क्यों हो ?"

जितेनने कहा—"इनायत है, लेकिन मैं वापस न जाऊंगा. दो-तीन रोज बाद—तब देखा जाएगा. अभी तो मुझे कहीं और ले चलिए, वहां न भेजिए."

चड्ढा जान गया कि मर्दोंका यही हाल होता है. बाहर हुकूमत चलाते हैं, अन्दर जेर रहते हैं. बोला—"अजब आदमी हो जी, यह तरीका है कोई कि भर अन्धेरे नाव चलाए लिए जा रहे हैं कि रात घर से दूर बियावान ठंडी रेतपर गुजारनी है ! भई, इस कदर औरतको सरकश नहीं होने देना चाहिए. और यह देखिए हजरत, कि आपके पीछे हम नाहक परेशान हुए. सोचते थे कि जाने क्या हाथ आ रहा है निकले तुम कि जो रातको जोरूके डरसे भाग रहे थे. चलो, इस कदर डरते हो तो रात मेरे यहां रहना, सवेरे चले जाना...क्या करते हो ?"

"मैं क्या करता हूं ? देख लीजिए क्या करता हूं ! बस एक-एक दिन गिनकर गुजारता हूं."

इसी तरह वे लोग बातें करते गए. जगहपर आकर नाव उसने सम्हलवा दी और वह चड्ढाके साथ हो लिया. चड्ढाने पूछा—"तुम कैसे आए थे ? पैदल ?"

"और कैसे आता !"

"मैंने सोचा सवारी होगी और—लेकिन आओ, चलो."

दोनो वहां पहुंचे जहां सिपाही मिलनेको थे. फिर वे कोतवाली गए और वहांसे जितेन चड्ढाके साथ उनके घर पहुंचा, घरपर फौरन सब इन्तजाम किया गया और जितेन सोनेके लिए पलंगपर जाते-जाते बोला—"आप मिस्टर चड्ढा हैं क्या ?"

"हूं तो, मगर आप कैसे जानते हैं ?"

"शोहरतसे कौन नहीं जानता. आदाबअर्ज !"

जितेन अकेला होकर कुछ देर सोच-विचारमें पड़ा रहा. कुल मिलाकर वह खुश था. लेकिन दो रोजकी वह छुट्टी अवश्य चाहता

था. दो-एक जगह जाना होगा और बन्दोबस्त कर देना होगा. फिर तो उसे इन चड्ढासे मिलना ही है.

सवेरा होनेपर उसने कहा—"आपका एहसान है, लेकिन अब मुझे जाना होगा चड्ढा साहब !"

चड्ढा बोला—"मैं चलूं क्या साथ ? देखता कि वह कौन बीवी है जो—पर माफ करना इस वक्त जरा परेशान हूं और फुरसत नहीं है."

"कहिए क्या परेशानी है, अगर बन्दा कुछ काम आ सके"

"कुछ नहीं, ये कुछ छोकरे हैं जो सिर उठाए फिरते हैं. की जमाना यह कालिजकी पढ़ाई—"

"एक इजाजत चाहता हूं, अगर नागवार न हो" जितेनने कहा—"जा तो रहा हूं, पर इतमिनान नहीं है देखिए, क्या बीतती है. यह कहिये कि जरूरत हुई तो यहां आ सकता हूं न ! जरूरत आप जानिए हो सकती है."

चड्ढाने हंसकर कहा—"जरूर जरूर, चाहिए जब खुशीसे आइए, आपका घर है."

जितेन चला और आंखसे ओझल हो गया तब चड्ढाने माथेपर हाथ फेरा. कुछ चीज उसकी यादके कोनेमें धीमे-धीमे उभर रही थी. सही तौरपर वह उसे पकड़ न पा रहा था उसने बुलाकर धीमेसे एक आदमीको समझाया और वह जितेनके पीछे-पीछे चला

पर पीछा कायम न रह सका आदमीने देखा कि उसका शिकार जाने कब कहां किधर गायब हो गया है.

चड्ढा सचमुच परेशान था दिलका और हौसलेका आदमी था. इसमें निभाए जा रहा था, नहीं तो दूसरा आदमी उसकी जगह पस्त हो चुका होता. तीसरा रोज है, मोहिनीकी कुछ खबर नहीं लग सकी है. कौन गिरोह है जो यह सब करता है, कुछ अन्दाज नहीं हो पाता. इसी जगह वह मात है. चड्ढाको अपना गुमान है और गुमानके लिए मौका है. लेकिन ये नए बदमाश जाने कौन हैं कि हाथ नहीं आते. मोहिनीके

जानेका उसे बहुत खयाल है. उसकी मूरत उसमें ताजा है. वह इसको सरकारी कानूनकी नहीं अपनी निजकी बेइज्जती समझता है. आदमी तबियतदार ठहरा. कानून उसका खुदा नहीं, लेकिन यह चीज उसे अपने ऊपर सीधा वार मालूम होती थी.

दो रोज निकल गए. कोई घटना न हुई. सोमवार आ गया. शाम भी आ गई. सातका वक्त होगा. उसी समय चड्ढाके सामने पहुंचकर जितेनने तपाकसे हाथ बढ़ाया.

चड्ढाने खुश होकर कहा—"आओ आओ, भाई ! कहो घरपर अमन तो है ?"

जितेनने कहा—"आपकी दुआसे अब सब अमन हो जाएगा, चड्ढा साहब ! मैं जितेन हूं जिसकी आपको तलाश है और हाजिर हूं !"

चड्ढाको अपनेपर विश्वास न हुआ. जितेन नामपर आश्चर्यसे बोला—"क्या...आ ?"

"जी नहीं," जितेन बैठते हुए बोला—"जा नहीं रहा हूं, यह बैठा हूं."

इतनेमें आवाज आई—"चड्ढा ! चड्ढा !" चड्ढा संभल पाए कि कमरेमें नरेश उपस्थित हुए. आते ही सामनेके व्यक्तिको देखकर बोले—"हल्लो, सहाय, हाउ डू यू डू ? (कहो कैसे हो ?)"

जितेनने उठकर बढ़े हुए हाथको लिया और जोरसे हिलाते हुए कहा—"मिलकर कृतार्थ हूं."

चड्ढाने कुछ अपनेसे उबरकर कहा—"नरेश साहब. आप सहाय नहीं, जितेन हैं. मेरे—मेहमान हैं."

"मेहमान !" नरेशने कहा—"लेकिन आप कर क्या रहे हैं, हजरत? मोहिनीने कहा है कि साथ चड्ढाको लेकर आना, ब्रिज जमेगी. चलते हो ?"

"अभी तो," चड्ढाने कहा—"आप—मेहमानके लिए इन्तजाम करना है. आप चलिए, मैं आता हूं."

"कितनी देर—आप एक घंटेमें आ जाओगे न ?"

"हाँ, बस आप चलिए. यह अभी आये हैं न—जरा इन्तजाम देख लूं, फिर आता हूं"

नरेशके जानेपर चड्ढाने चारों तरफसे किवाड़ बन्द किए फिर आकर कहा—"देखता हूं, बहुत बेफिक्र हो. क्या बात है ?"

"आपके पास आ गया हूं. अब मेरे लिए फिक्रका क्या काम."

चड्ढाको कुछ डर था. कारण, डरकी आदत थी. लेकिन इस सामने बैठे आदमीको देखकर डर एकदम व्यर्थ मालूम होता था. इस आदमीके चेहरे पर इस समय न शक्ति थी न थकान थी. एक प्रफुल्लताके सिवा कुछ न था. चड्ढाने कहा—"भई, मानता हूं, तुमने हमें खूब छकाया. लेकिन तुम ही थे, अब देखकर यह यकीन नहीं होता है. एक बात बताओ, बैरिस्टर साहब तुमसे किनारा क्यों कर गए ? तुम तो उनके दोस्त थे"

"किनारा कहां ? जितेनने हंसकर कहा—"आपके पास देखकर निश्चिन्त मनसे गए हैं"

"एक बात कहो," चड्ढाने पूछा—"मोहिनीको तुमने उड़ाया था?"

"क्या वह अपने घर नहीं है ? मैं समझता हूं, उन्होंने ही आपको बुला भेजा है"

"उड़ो नहीं, साफ कहो क्या बात थी ?"

जितेन हंसा, बोला—"मेरा इन्तजाम कीजिए न जरा कीजिएगा दो रातसे सो नहीं सका हूं मैं भी आराम करूं और आप भी क्लब पार्टी पर पहुंचिये वहां इन्तजार होगा और नाहक देरकी जरूरत क्या है ?"

"वह होगा" चड्ढाने कहा—"लेकिन मैं आपसी तौर पर पूछता हूं —चौंको न जाओ, साफ कह सकते हो. सही कहो क्या बात है ?"

"सही कहता हूं, मुझे नींद चाहिए आपका एहसान होगा आप तो जानते हैं कि अब तक—घर पर..."

"पूछता हूं, इस तरह आकर अपने आप गिरफ्तार तुम क्यों हो गए? इस कदर बेवकूफी—"

जगत् उसका है, हम सब उसके हैं, और होगा वह ठीक ही होगा. अपने में हम चक्कर कितने ही काटें, आखिर भगवानकी गोद हमें लेगी. और मालूम होगा, यात्रा हो गई, मंजिल आ गई.

मोहिनीकी यह अवस्था नरेशको हाथ नहीं आती. मानो इस जगह सब अपनेमें एक हैं और इससे दूसरे हैं. इस स्थितिमें दूसरेके अलग-पनको स्वीकार करना ही पड़ता है. किसी प्रकारका कोई अधिकार अभियोग वहां तक पहुंच नहीं पाता. यों सब ही हम एक दूसरेके हैं, कोई केवल अपना नहीं है; लेकिन क्षण आते हैं कि हम आपसके रह ही नहीं जाते, कहीं किसी अपरके हो जाते हैं. तब मालूम होता है कि आपसी-पन खिसक कर ओढ़े कपड़ेकी मानिन्द हमसे नीचे उतर गया है. हम किसीके भी नहीं रहे, अपने भी नहीं रहे, मानो सिर्फ वहीं के हो गए हैं. क्या यही कृत-कृत्यता है ? या कि यह मृत्यु है ?

जो हो, नरेश कमरेमें आकर स्तब्ध खड़े रह गए. ऐसे होने पाव तो नहीं आए थे, लेकिन मोहिनीको पता ही न चला. दरवाजेमें आते हुए मुंह पर उनके सदाकी भांति विनोदका सम्बोधन था, लेकिन कमरेमें आते ही मानो वातावरणने उन्हें रोक दिया. मोहिनीको देखते हुए एक-दो पल वह खड़े ही रह आए, फिर कुर्सीपर बैठ गए. मोहिनीको चैन न था. उन्होंने उसे चिताया नहीं. कई रोज बाद मोहिनी आई है. अभी बात तक नहीं हो सकी. कचहरीसे आए तो देखा--मोहिनी! एक साथ प्रश्नों से और प्रफुल्लतासे भर आए. लेकिन मोहिनीको देखकर सब रोक लेना पड़ा. आंखोंमें कुछ उसके था और चेहरेपर. दुबली हो आई थी और मुद्रापर विषादका उपसंहार लिखा था. पर एक विमलता थी, एक भरपूरता, जो नई लगी. हठात् उसने अभिभूत किया. बढ़ते-बढ़ते रुक गए. आलिंगनमें लेना कल्पनातीत हो गया, थप-थपाकर स्वागत देना भी सम्भव न हुआ.

मोहिनी भी ठिठक आई, जैसे अभियुक्ता हो. देखनेवालेकी निगाहसे बंधी खड़ी रह गई. आंखों ही आंखोंमें जो हुआ हो गया. मानो मोहिनी

जितेनने हंसकर कहा—"आगे पीछे गिरफ्तार होना ही था, आपसे बचना कैसे हो सकता था. सोचा कि आपकी और अपनी परेशानी क्यों बढ़ाऊं ? इसलिए हाजिर हो गया. अब आप मुझे मुनासिब जगह भेज दीजिए और नजात पाइये."

चड्ढाने देख लिया, यों सीधे कुछ पाया न जाएगा. फिर तो ज्यादा देर नहीं लगी. फोन हो गया और पक्के पूरे इन्तजाममें जितेनको जेलकी हवालात भेज दिया गया. फिर समय निकालकर वह मोहिनीकी ओर चला.

२०

ी शाल लपेटे सोफेपर पीछे सिर करके लेटी थी. बैठक था. सिर्फ रोशनी उसकी उपस्थितिको बताती थी. अन्यथा जैसे न थी. नहीं मालूम था उसे कि क्या होगा, जैसे मालूम करनेकी चेष्टा भी न थी. वह अपनेमें डूबी थी. एक आस अपनेसे वह बांधे चली आई थी. लगता है वह पूरी हुई, पर क्या वह यही चाहती थी? यही चाहती थी ? अब जान पड़ता है कि नहीं-नहीं, वह आस ही चाहती थी, उसका पूरा होना नहीं चाहती थी. पूरी हुई है तो उस भवितव्यके खिलाफ अब प्राणपणसे लड़ना होगा. कहां है वह जितेन ? क्या और उससे कीमत ली जाएगी ? करनेके साथ ही क्या अपने रक्तकी बूंद-बूंदसे वह उसका मूल्य नहीं चुकाता जा रहा था ? ओ भगवान् ! क्या होगा ?

मानो वह अपनेसे पूछती थी; पूछती ही थी, उत्तर पाना नहीं चाहती थी. कारण, बेहद भीतरमें उत्तर उसे प्राप्त था. अपने सब प्रश्नोंके नीचे वह मूल आस्थाकी धरतीको छोड़ न पाती थी. सब भगवानका है,

जगत् उसका है, हम सब उसके हैं, और होगा वह ठीक ही होगा. अपने में हम चक्कर कितने ही काटें, आखिर भगवानकी गोद हमें लेगी. और मालूम होगा, यात्रा हो गई, मंजिल आ गई

मोहिनीकी यह अवस्था नरेशको हाथ नहीं आती. मानो इस जगह सब अपनेमें एक हैं और हरेक दूसरे हैं. इस स्थितिमें दूसरेके अलग-पनको स्वीकार करना ही पड़ता है. किसी प्रकारका कोई अधिकार अभि-योग वहां तक पहुंच नहीं पाता. यों सब ही हम एक दूसरेके हैं, कोई केवल अपना नहीं है; लेकिन क्षण आते हैं कि हम आपसके रह ही नहीं जाते, कहीं किसी अपरके हो जाते हैं. तब मालूम होता है कि आपनी-पन खिसक कर ओढ़े कपड़ेकी मानिन्द हमसे नीचे उतर गया है. हम किसीके भी नहीं रहे, अपने भी नहीं रहे, मानो सिर्फ नहीं के हो गए हैं क्या यही कृत-कृत्यता है ? या कि यह मृत्यु है ?

जो हो, नरेश कमरेमें आकर स्तब्ध दबे रह गए. ऐसे होले पांव तो नहीं आए थे, लेकिन मोहिनीको पता ही न चला दरवाजेमें आते हुए मुंह पर उनके सदाकी भांति विनोदका सम्बोधन था, लेकिन कमरेमें आते ही मानो वातावरणने उन्हें रोक दिया. मोहिनीको देखते हुए एक-दो पल वह खड़े ही रह आए, फिर कुर्सीपर बैठ गए मोहिनीको चैन न था. उन्होंने उसे चिताया नहीं. कई रोज बाद मोहिनी आई है, अभी बात तक नहीं हो सकी कचहरीसे आए तो देखा--मोहिनी! एक साथ प्रश्नोंसे और प्रफुल्लतासे भर आए लेकिन मोहिनीको देखकर सब रोक लेना पड़ा. आंखोंमें कुछ उसके था और चेहरेपर दुबली हो आई थी और मुद्रापर विषादका उपसंहार लिखा था पर एक विमलता थी, एक भरपूरता, जो नई लगी हठात् उसने अभिनन्दन किया बढ़ते-बढ़ते रुक गए. आलिंगनमें लेना कल्पनातीत हो गया, थप-थपाकर स्वागत देना भी सम्भव न हुआ

मोहिनी भी ठिठक आई, जैसे अभियुक्ता हो. देखनेवालेकी निगाहसे बंधी नहीं रह गई. आंखों ही आंखोंमें जो हुआ हो गया. मानो मोहिनी

ांगी, नरेशने क्षमा नहीं मानो अपनी ओरसे

दी.

रा समय भारी हो आया, मोहिनीने कहा, "इतनी देरसे आया

ही आजकल दफ्तरसे ?"

"...कब आई ?"

"आ ही रही हूं," और हंसकर बोली—"सब बताऊंगी....जब दिन

कुल नहीं रहेगा...अभी तो—"

नरेश सुनते हुए चुप रह गए थे, माथे पर असमंजस आ झलका था.

मोहिनी डर आई, पर साहसपूर्वक आगे बढ़कर उनकी बांह पकड़-

र बोली—"चुप क्यों हो ?"

गम्भीर भावसे नरेशने कहा—"अभी तो—काम है ? काम कहो."

मोहिनी सुनकर घबराई सी पीछे हो आई.

नरेशने कहा—"चड्ढाके जाना है ?"

मोहिनी चीखकर बोली—"नहीं-नहीं-नहीं..."

नरेशने ठंडे लहजेसे कहा—"मोहिनी, अपनेपर जोर न दो. चिन्ता कहनेकी तो चीज नहीं है. चड्ढाकी ही न चिन्ता है ! चलो उसे ले आता हूं."

"तुम्हें कैसे मालूम हुआ ?"

"छोड़ो...अभी आता हूं."

इससे अधिक बात न हुई थी. नरेश चड्ढाके यहां गए, वहांसे आं गए. आकर सोफेपर सिर टेके भूली सी पड़ी इस अपनी मोहिनीको देखते रह गए. उनके मनमें करुणा हुई. जानते थे, व्यक्ति असहाय है क्रोध सदा अपनी नासमझीमें से आता है. क्षमामें भी कृपा है, जो अन विकृत है. स्वतन्त्रताके दानसे अधिक आदमीका वश नहीं है. यही दिय जा सकता है और सहानुभूतिको अपने पास रखा जा सकता है. इस आगे कुछ सम्भव नहीं है.

... देर हो गई तो उन्होंने कहा—"मोहिनी !"

मोहिनीने आंख खोली, लज्जा हो आई, माथेपर आंचलको आगे किया, लेटीसे बैठी हो गई, कहा—"आ गए ? बड़ी जल्दी—"

"कहना ही तो था. आधे घंटेमें आ रहा है. जिसके लिए कह आया हूं—तुम्हारी तरफसे."

"क्यों कह आए हो ?"

"...वहां सहाय मिल गए—क्या नाम, जितेन ?"

मोहिनी चिहुंकी, बोल उठी—"क्या ?"

"उनसे निबटकर ही शायद चड्ढा आयगा."

मोहिनीने गौरसे नरेशको देखा. वहां कुछ न था न प्रयत्न, न निरोध.

मोहिनीने पूछा—"वह क्या कर रहे थे वहां ?"

"आराममें ईजी चेयरपर बैठे थे. ख्याल है सिगरेट भी नहीं पी रहे थे. मालूम नहीं कबसे इस कदर दोस्ती हो गई. खासी बेतकल्लुफी दिखाई दी."

मोहिनी सोफेसे उठी, गद्देदार मूढ़ेको खींचकर नरेशकी कुर्सीके पास आकर बैठती हुई बोली—"बताते क्यों नहीं, क्या बात है ? तुम क्या समझते हो ?"

"मैं क्या समझता हूं ? मैं समझता हूं कि तुम बता सकती हो मुझे क्या समझना चाहिए."

"मैं ?"

"जी—"

"मैं नहीं बता सकती, चार रोजसे मुझे उनकी कोई खबर नहीं है ...लो सुनो, उनके आदमी मुझको ले गए और कैदमें डाल दिया. कहा पचास हजार रुपए लाओ. इन्कार हुआ और रहा, तो फिर सामने आकर तनहाईकी सजाका हुक्म सुना गए.. उसके बाद क्या हुआ नहीं जानती. एक खत मिला और जेवर वापस मिल गए और मुझे आजाद कर दिया गया...अब तुम बताते हो कि चड्ढाके यहां है. क्या पुलिसके

"...बोलते क्यों नहीं ?"
"सा ही मालूम होता है."
"...क्या होगा ?"
"देखना है कि क्या होगा."
"तुम बचा नहीं सकते ?"
"मालूम नहीं. लेकिन तुम चाहती हो, क्या वह भी बचना चाहते
"
"उनके न चाहनेसे क्या होता है ?"
"शायद सब आपके चाहनेसे होता है, या मेरे, क्यों ?" कहकर
रेश हंसा.
"तुम बैरिस्टर हो, जान-पहचान है, रसूख है..."
"और पति हूं—"नरेश और भी हंसा.
"हां और मेरे पति हो." गम्भीर भावमें कहकर मोहिनी नरेशकी
आंखोंमें देख आई.

नरेश शांत भावसे मुस्कराया, बोला—"हारता हूं, हुजूर.. बताइए
क्या करना होगा...कानून एक चक्की है, जिसमें दो पाट हैं. उनके बीच
पिसते दानेको बचाना उतना आसान नहीं है, मोहिनी ! दूसरे जुर्म तो
ठीक हैं, वे कायदेकी चीज हैं. कायदेमें नुकते निकल सकते हैं, और वह
इतनी बड़ी बात नहीं है. पर यह चीज दूसरी है. पाट हैं ही इस
लिए कि कुछ पीसें, और पीसे जानेकी खास चीज यही है. नुक्ते-बाजी
वहां कम चलती हैं. ये मामले राजनीतिके हैं, सिर्फ जाहिरदारी
खातिर कानून और इन्साफके होने दिए जाते हैं. नहीं तो असल
बदलेके हैं...पर कह तो चुका हूं, मोहिनी, कि आखिर तुम—"
...लेकिन एक बात पूछता हूं, मोहिनी, कि आखिर तुम—"

वाक्य नरेशने पूरा नहीं किया और मोहिनीकी ओर वह हंसा.
मोहिनी भी उत्तरमें मुस्कराकर रह गई.
इसी तरहकी मुस्कराहटसे दोनों परस्परको प्राप्त कर लेते

मनके कोनेमें हठात् उठे अभाव-अभियोग शांत हो जाते हैं

चड्ढा आए तब पति-पत्नीमें कहीं बारीक भी व्यवधान नहीं रह गया था.

चड्ढा देखकर विस्मित हुए. मोहिनीके चेहरेपर क्षीणता थी, पर प्रफुल्लता उससे अधिक मालूम होती थी, मोहिनीके स्वागतपर पूछा—"कहिए, कब आना हुआ ?"

मोहिनीने हंसकर कहा—"कहांसे ?"

चड्ढाने उसी प्रकार हंसकर कहा—"तफरीहसे."

बोली—"कुछ नहीं साहब, इन पांच छह रोजमें तफरीह क्या रही, ब्रिजका एक रबर भी तो मजेका नहीं जम सका.. कहिए, वह कहां थे हमारे दोस्त आपके यहां थे."

चड्ढाने कहा—"जी हां आए तो थे "

"यानी चले गए ?"

"जी एक तरहसे—"

"यानी–? चड्ढा साहब, आप तो --"

हंसकर बोले—"इस कदर आलीशान मेहमान ! भला मेरी झोपड़ी किस लायक थी ? या तो मेहमान-नवाजीके लिए आपकी यह महलनुमा कोठी हो सकती थी, नहीं तो सरकारी मेहमान घर ही है."

"जेल भेज दिया है ?" नरेशने कहा "खैर, यह बताओ मुला-कात कब हो सकती है ?"

"मुलाकात !"

"मैं तैयारीमें लगा हो रहा हूं...या, कहो तो आपके साथ जाऊं ?"

"यह आप लोग क्या कह रहे हैं ?" मोहिनीने कहा "हालत तो बिगड़ती थी."

"हां चड्ढा, बताया नहीं तुमने, मुलाकात कब होगी

चड्ढाने हंसकर नरेशसे कहा—"अरे कागज तुमने

"भाई इधर भी तो कागजोंकी अड़चन है . हां,

मोहिनीको लगा कि यह पुरुषोंका क्षेत्र आ गया. काम दांव-पेचसे भी होता होगा, मगर उसे यह रास्ता नहीं आता. वह चड्ढाकी सहानुभूति चाहती थी. बोली—"छोड़िए भी, आइए कट-थ्रोट जमने दीजिए."

पर खेलका कट-थ्रोट न जम सका, कुछ दूसरा कट-थ्रोट शुरू हो गया था. दुनिया सहानुभूतिकी ही नहीं है, स्पर्द्धाकी भी है. शायद दोनों हैं, इसीसे वह है. स्त्री न हो पुरुष ही हो, या पुरुष न हो स्त्री ही हो, तो सृष्टि चले ?...देखा, बात हो रही है पर बीचमें बराबर भेद पड़ा रह गया है. खुली दीखनेपर भी बातचीत उस अन्तरको लांघ नहीं सकी.

चड्ढा चले गए और नरेश कुछ देर अपनेमें सिर खुजलाते हुए बैठे रह गए. मोहिनी अपनेको अपराधिनी अनुभव कर उठी. बोली—"क्या सोच रहे हो ?"

"मामला मुश्किल दीखता है."

"मैं तुमसे कैसे माफी मांगू, बताओ तो सही. मेरी वजहसे ही—"

नरेशने बिना मोहिनीकी ओर देखे कहा—"सब एक दूसरेकी ही वजहसे हुआ करता है. वैसी वजहें न हों तो दुनिया वीरान हो रहे, मोहिनी...तुम समझती हो मुझे बहुत काम करना है ? अरे भई, हमारी बैरिस्टरीको तो शगल है महज. तुम्हारे इस मुकदमेमें चलो हाथमें कुछ काम ही हो जाएगा. और सुनो, मामूली मुकदमा नहीं है. कलसे ही देखना अखबारोंमें धूम मची दीखेगी. इसकी बदौलत उम्मीद है हमारे नामकी भी धूम हो जाएगी."

सुनकर मोहिनीका कष्ट बढ़ आया. इस अपने पतिके प्रति हर कृतज्ञताको वह ओछा पाती है, क्योंकि उनकी उदारताका ठिकाना नहीं है. बोली—"तुम्हारे सारे जेवर ले आई हूं!" कहकर वह विचित्र भाव से हंसी, आगे बोली—"गए जेवर आ गए हैं, लानेवालेको कुछ मेहनताना मिलेगा ?"

"मिलेगा, जरूर मिलेगा. पर उस आदमीने कभी कुछ चाहा है, यह सुन पाऊं तब न ? वह तो करता ही है, चाहता नहीं है."

"नहीं क्यों चाहता ? इस बार भरपूर मेहनताना देना होगा. बच नहीं सकोगे."

"अच्छा मोहिनी, देखूं क्या उसका भरपूर है ?"

"बारह हजार रुपए !"

"बारह हजार रुपए ! यह तो भर-पूर न हुआ, गिनती हुई. तेरह नहीं है, ग्यारह नहीं है, जो दोनोंके बीचमें है, वह बारह है...बात क्या है, मोहिनी ?"

मोहिनीने कहा—'सुनो, एक निन्नी है. वह साथ तो नहीं आई, क्योंकि तुमने पूछना था. कहोगे तो सवेरे वह आ जाएगी.. बंगालन है, सोनेकी मूरत समझो, होगी बीस-बाईसकी...और बारह लड़के हैं !"

नरेश हंसे—"भई बंगाली तो खूब होते हैं बीस-बाईस बरस.. और बारह लड़के !" कहकर नरेश कहकहा लगाकर हसा मोहिनी भी अपने को रोक न सकी, खुलकर हस आई.

"आपके—जितेन साहबकी फौज है ? मानता हूं, मामा रिकार्ड है !"

अपने इस विनोदी पतिके प्रति मोहिनी अत्यन्त गद्गद होकर उनके खिलते हुए निर्मल चेहरेको देखती रही, बोली नहीं

"तो यह हिसाब है ! बारह लड़के, बारह हजार तो उन द्वादश-वाहिनी जगद्धात्री माताका—क्या नाम बताया आपने ?"

"निन्नी."

"निन्नी ! भई वाह, जगज्जननी वसुन्धरा माताके समान यह—तिन्नी ! भई मानता हूं आपको और आपके जितेनको. क्या नाम खोजा है, एकदम शुद्ध अद्वैत जी, तो कहिए ?"

मोहिनीने आश्चर्यसे पतिको देखा, शका उस दृष्टिमें न थी, एक विमूढ़ता थी. उत्तरमें वह कुछ कह न सकी.

"मेहनतानेकी बात कहिए न ! 'इस बारहका तो हिसाब हो गया, कि बारह लड़के हैं. अब आपका मेहनताना ?"

मोहिनी अतिशय विगलित हो आई, नाराज बनकर बोली—"यह क्या बक रहे हो."

हंसकर बोला—"अच्छा न सही—आपका, मेरा मेहनताना ? देखिए हुजूर, बैरिस्टर हूं, मेहनताना लिए बगैर हिल नहीं सकता...कौन होती हैं वह देवी अष्टादश भुजा धारिणी ?...पर जिन महामाताका आविष्कार तुमने किया है चतुर्विंशति भुजावाले तो उनके पुत्र रत्न हैं. उन स्वर्णप्रभा जगन्माताके दर्शन होंगे तब होंगे . शायद रात-भर उत्कंठाका वहन करना होगा. लेकिन हमारी देवी भुवनमोहिनीकी मायाका भी ठिकाना नहीं है...तभी प्रार्थना है कि मेरे मेहनतानेकी बात पक्की हो जाय...मेहरबानी हो तो अभी अदा कर दिया जाय..."

मोहिनीका मुख आरक्त हो आया. बोली—"हटो, क्या वाहियात बकते हो !"

२१

●●●

एक तहलका मच गया. देशव्यापी षड्यंत्रका भंडाफोड़ होनेवाला है ! विस्फोटकी कार्यवाहियोंका सूत्रधार पकड़ा गया, कहा नहीं जा सकता क्या-क्या गुल खिलेगा. भीतरसे जो निकल आए थोड़ा है. अनुमान प्रगट किया गया कि सारी धरती नीचे इन मानव सुरंगोंसे बिछी हुई थी. मानवताकी कुशल हुई कि समयसे पता लग गया, नहीं तो क्या ज्वालामुखी होगा ऐसा एक विस्फोट आता और व्यवस्था ढह गई होती और सभ्य जीवन निगला जा चुका होता !

नरेशका काम इस स्थितिमें मुश्किल हो गया. मानो वह स्टेजपर हो और उसके चेहरेपर फुटलाइट्सका पूरा प्रकाश हो. एक ही दिनमें यह घट आया और नरेशने असमंजसमें आकर कहा—"भई, बात मुश्किल है. दो मुलाकातें हो चुकी हैं. तुम्हारा जिनेन तो बचना चाहता नहीं है, सिर्फ बचाना चाहता है. अपनी ओरसे वह चोरी-डकैती-खून सब अभियोग स्वीकार करना चाहता है. लेकिन किसी घटनाको लेकर नहीं. घटनाको लेनेमें दूसरे भी बीच आएंगे, और वह यह नहीं चाहता...मालूम होता है अदालतके सामने केस आनेमें वक्त लगेगा. महीनों भी लग सकते हैं. आसार अच्छे नहीं मालूम होते. चड्ढाका अजब रुख है. ताज्जुब न होगा कि वह हमें-तुम्हें तक घसीटे !"

मोहिनीने सुना. पास बैठी तिन्नीने भी सुना. मोहिनीने कहा—"तो हमारी मुलाकातके लिए कुछ किया ?"

"मुलाकात जरूरी है, मोहिनी ?...सारे प्रेसकी निगाह है, सारे कानूनकी. अगर रहने दो तो—"

बोली—"देखते तो हो तिन्नीको . ऐसा ही समझते हो तो जाने दो...लेकिन मुलाकात हो नहीं सकती ? होगी ही नहीं ?"

"हो सकती तो है, पर खतरा है. मत पहुंचा सकती हो, उसका मन ला सकता हूं . इतनेसे चल जाए तो चला लेना चाहिए."

मोहिनी बोली—"मैं वकील हूं, इससे काम नहीं चल सकता ?"

"कहां हो वकील तुम, मोहिनी, वकालत पास भर हो. कितना कहता था रजिस्टर्ड हो जाओ—"

"तो नहीं होगी मुलाकात ? तिन्नी, बहन, बता क्या करूं ?"

तिन्नी चुपचाप बैठी थी. उसके चेहरेपर कोई परिवर्तन नहीं आया. बोली—"जाने दो न दीदी. जिसमें उनका मगन हो वही ठीक है."

मोहिनी सुनकर हिल आई. कोमलतामें कितनी दृढ़ता होती है. उसने पतिसे कहा—"होगा सो देखा जाएगा. मुलाकातका बन्दोबस्त

कर दो."

सिर खुजाते हुए नरेशने कहा—"अच्छा."

पर नरेशको अपने प्रभाव और कौशलका पूरा उपयोग करना हुआ. तब सम्भव हो पाया कि बड़ेसे कमरेके एक कोनेमें बिना किसी चौथेके बीचमें हुए जितेन, मोहिनी और तिन्नी ये तीन आसपास कुर्सियोंपर बैठकर आपसमें बात कर सकें. नरेश दूर जेल अधिकारीसे गपशप कर रहा था.

जितेनके चेहरेकी रेखाएं जैसे बदल आई हों. परिवर्तन सहसा विश्वसनीय न हुआ. जैसे व्यक्ति ही दूसरा हो ! चेहरा क्षीण था पर स्निग्ध, देह किंचित् दुर्बल पर स्वस्थ.

जितेनने कहा—"कहो तिन्नी, मजेमें हो ?"

तिन्नीने आंख फाड़कर अपने बिप्पाको देखा. वह उस प्रफुल्लता को समझ न सकी. यह आदमी या तो सख्त होता था या गीला. सहज भावसे प्रसन्न तो वह पा सकी ही न थी. मानो तपस्वी हो, दूर और दुर्गम. वही अब इस जेलखानेमें खुल आया है, जैसे फूल. वह विस्मित सी अपने इस उपास्यको देखती रही, जो अब मानो हर तरफ प्रत्यक्ष है और पा लिए जानेको निपट समक्ष.

मोहिनीने कहा—"वह कहते थे, तुम सब स्वीकार करना चाहते हो. यह सच है ?"

"हां सच है."

"अब तक ठीक पता नहीं चला तुम पकड़े कैसे गए ? उन्होंने भी नहीं बतलाया. बचे नहीं रह सकते थे ?"

जितेन मुस्कराया, बोला—"मैं उल्टा समझता था, मोहिनी ! बात यह कि जब मैं बाहर था, बचा हुआ था, तब मैं गिरफ्तार था. यहां आ गया हूं तो बच भी गया हूं, खुल भी गया हूं. हां उस गिरफ्तारीसे मैं कोशिश करके ही बच सका. असलमें मैं उससे तंग आ गया था. चड्ढासे संयोगसे मुलाकात हो गई और पहले ही दर्शनमें प्यार हो गया.

देख लिया कि यह आदमी मुझे तार देगा पहले राह न सूझती थी और कोने-कोने भटकता था. इसको देखते ही राह दीख गई. बस फिर सीधा उसके पास आ गया, कहा, लो यह मैं हूं लो और अपना काम करो."

"तो ऐसे गिरफ्तार हुए. और अब बचना नहीं चाहते ?"

"नहीं, बचना नहीं चाहता. अपनेसे कैसे बच सकता हूं कब तक बच सकता हूं ? मोहिनी, देख लिया है कि यह चेष्टा व्यर्थ है"

"क्या सोचते हो, तुम्हें फांसी हो सकती है ?"

जितेनने मोहिनीको देखा, तिन्नीको देखा. तिन्नीकी आखोंमें मानो यह प्रश्न भी न था मानो वहा कुछ न था, एक अगाध प्रश्नहीन स्वीकृति थी. देखा एकाएक साडीके भीतर हाथ उसके चल आए हैं वह कुछ खोल रही थी. जल्दीसे खोलकर उसने एक हाथ आगे किया, कहा . "लो, यह पहन लो"

जितेनने धीमेसे उस हथेलीपर रखे दुहरे धागेमें बंधे तावीजको उठाकर हाथमें ले लिया. हंसकर बोला—"क्या कहूं, मोहिनी...यह देखती हो? तिन्नी जानती है कि फांसीकी डोर इस डोरमें कट जाएगी और मैं मुक्त बना रहूंगा क्यो तिन्नी, यही गुण है न इसमे ?"

"लाओ, मैं बांध दूं" कहती हुई वह उठी

जितेनने हाथके सकेतसे उसे बैठाते हुए कहा—"बच जाऊंगा मैं, तिन्नी, खुला न रहूंगा विश्वास रखो...मोहिनी, आई नीडेड द बैपटिज्म !"

इसी समय दूसरी ओरसे सकेत आया कि वक्त हो गया, मुलाकात खत्म होनी चाहिए. मोहिनी बोली –"कुछ कहना है ?"

जितेनने कहा—"क्या कहना है ? बैरिस्टर साहब, आशा है, और सबको बचा ही लेंगे. वे सब निर्दोष हैं करनेवाला तो कभी दोषी होता नहीं, मोहिनी, कराने वाला होता है वह तो मैं था, जहर मुझमें था. सब तो यही जानते थे कि वह आजादीका, क्रान्तिका, विश्वको

शान्तिका काम कर रहे हैं. यह मैंने उन्हें बताया था. लेकिन भीतर में ही यह खुद नहीं जानता था. वे लोग जानते थे और मानते थे. मैं जानता भी नहीं था, मानता भी नहीं था. इसीसे शायद मैं नेता था. अपने शब्दसे मैं अलग था...मत समझना मोहिनी कि तुम्हारी भली-सी अहिंसामें मैं पड़ गया हूं. वह बनियोंकी भाषा है. किसे मरना नहीं है, और कौन किसे मार सकता है ? जन्म मृत्यु तो है, बिना इनके सृष्टि नहीं. कालके ये अस्त्र हैं, इन्हीं औजारोंसे उसकी सब रचना है. इस द्विधामें राग क्या और द्वेष क्या. नहीं, मोहिनी, वह नहीं है. आंसू नहीं है, दया नहीं है...कुछ और है...सत् ही है असत् नहीं हो सकता. लाख कर लो, असत् हो नहीं सकता. उसकी हस्ती ही नहीं. जो नहीं है वह नहीं है. कितना भी कर लो, नहीं कभी हो नहीं जाएगा. फिर जो असत् होता है, क्यों होता है ? मिथ्या क्यों हो जाता है ? बुरा क्यों हो जाता है ? ईश्वरके सर्वशक्तिमान सर्वव्यापी रहते शैतान क्यों हो जाता है ? कहांसे हो जाता है ?...यही सवाल है. सवाल यही है, मोहिनी ...नहीं है वही क्यों होता है ?..." जितेन हंसा—"मैंने तुम्हें कैदमें डाला था. कोठरीका नंगा ईंटका फर्श सोनेको दिया था, कम्बलका बिछावन और उढ़ावन दिया था. हो सकता था यह भी न देता. हो सकता था तिल-तिलकर भूखों तुम्हें मर जाने देता...हो सकता था, गोलीसे उड़ा देता...सब हो सकता था, मोहिनी. सवाल है यह सब क्यों हो सकता था ?...नहीं ही कैसे हो जाता है ?...ओह, सवाल ही सवाल था, कहीं हल न था....प्यार किया, यह ठीक है. मारना चाहा, यह भी उतना ही सही है...क्या इनमेंसे कोई बात गलत थी ? क्या दोनों ही नहीं थी, एक मुझमें ही नहीं थी, और दोनों क्या सच न थीं ? ...इसीसे कहता हूं, बाहर सवाल ही था, कहीं भी हल न था...अब यहां आ गया हूं और हल पा गया हूं. हल क्या, तुम पूछती हो ? हल यह, कि यह जेल है. बस यही हल है. और कहीं कुछ हल मिल सकता है, तुमसे कहता हूं, यह असम्भव है....एक हाथसे आलिंगनमें बंधकर

दूसरे हाथसे तुम्हें मैं घोंटकर डाल दे सकता था...यहीं तो होता है! प्यार और कुछ नहीं होता, घृणा और कुछ नहीं होती. सब एक यही चीज होती है : हां और नहीं...पर नहीं नहीं है, हां ही हां है...हम समझते हैं यह दुनिया है और हम आजाद हैं...पर यह समझना खुद सवाल है.. हल यह है कि यह जेल है और हम कैदी हैं. जेल भगवान् की है, कैदी हम भगवान्‌के हैं. एक यही हल है, मोहिनी, नहीं तो अपनी नहींसे हम हांको सदा नोचते रहें, दबोचते रहें और हां हममें कभी खुल न पाए ..तिन्नी, वक्त हो गया, लो तुम्हीं अपनी तावीज बांध दो.. छोड़ो गला, लो, हाथमें बांधो "

तिन्नीने हौले विश्वस्त हाथोंसे जितेनकी कलाईमें डोरीमें गांठ देकर तावीज बांधी.

जितेन मुस्कराया.

मोहिनी रो आई.

तिन्नीने डोरा बांधकर जितेनके पैरोंकी धूल ली

उसी समय "अरे भई, चलो देर हो गई है" कहते हुए एक ओरसे नरेशने आकर जितेनका हाथ लिया और अभिवादनमें जोरसे झकझोरा.

जितेनने सबको हाथ जोडकर नमस्कार किया

उपसंहार

जितेनके केसकी चर्चा अनावश्यक है. उसके व्यौरे सार्वजनिक सम्पत्ति हो चुके हैं. फांसीके लिए कोशिश होती ही रही. महीनोंसे खिचकर प्रयत्न वर्षों तक पहुंचा, पर मन चाहा न हो सका. सुना जाता है सबसे अधिक निराशा इससे जितेनको हुई. कहते हैं ऐसा उसने किसी पत्रमें व्यक्त किया था. नहीं मालूम वह किसको पत्र लिखा गया था और वह कहां है. शप हम जानते ही हैं कि जितेन यद्यपि आज दिन तक है पर दुष्प्राप्य है और घोर एकाकी नजरवन्दीमें है.

चड्ढा हैं, पर अब पुलिसमें नहीं हैं. वह जमनाके रेतमें हुई जितेन की अपनी मुलाकातको नहीं भूल पाते हैं, मानो यह निधि उनके पाससे कोई नहीं ले सकता.

मिथिलाने अपनी ओरसे मुकदमेकी गवाहीमें सच कहनेमें किसी ओरसे कमी नहीं की. वह माया-मोहमें नहीं रहती, यथार्थ सचसे ही एक उसे प्यार है. पर फिर भी फांसी नहीं हो सकी, इसने उसके निकट सिद्ध कर दिया है कि सचके लिए यह दुनिया नहीं है. पर उसका पुरस्कार दूसरी दुनियामें है और अवश्य मिलेगा. इस सन्तोषको उससे कौन छीन सकता है.